देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२

ISSN : 2395-7115
March 2022
Issue 15, Vol.3(3)

Impact Factor
5.642

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

पर्यावरण संरक्षण एवं जलवायु (साहित्य शोध एवं समाधान)

विशेषांक सम्पादक : डॉ. हनुमान प्रसाद

विशेषांक सहसम्पादक : डॉ. चंद्रप्रकाश बंसल

सम्पादक : डॉ. नरेश सिहाग, एडवोकेट

Publisher :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

स्व. चौ. गुगनराम सिहाग व उनकी छोटी बहन स्व. श्रीमती गीना देवी के शुभाशीर्वाद से प्रकाशित

JOURNAL OF HUMANITIES, COMMERECE, SCIENCE, MANAGEMENT & LAW

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Vol. 15 ISSUE-3(3) (मार्च 2022) ISSN : 2395-7115

प्रेरणा :

चौ. एम. सिहाग

संपादक :

डॉ. हनुमान प्रसाद

सह संपादक :

डॉ. चंद्रप्रकाश बंसल

सम्पादक :

डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल', एडवोकेट

एम.ए. (समाजशास्त्र, लोक प्रशासन, हिन्दी शिक्षा शास्त्र, पत्रकारिता),
एम.फिल (समाजशास्त्र, हिन्दी) एम. लिब., एल–एल.बी. (ऑनर्स),
डिप्लोमा पंचायती राज (रजत पदक विजेता), पी.एच.डी. (हिन्दी)
विभागाध्यक्ष हिन्दी एवं शोध निर्देशक
टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर–335001 (राज.)

प्रकाशक :

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी–127021 (हरियाणा)

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL REFEREED/REVIEWED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
ISSN 2395-7115

सम्पादकीय सम्पर्क :
डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट
202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,
भिवानी-127021 (हरियाणा)
Email : nksihag202@gmail.com
मो. 09466532152

Published by :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
202, Old Housing Board,
Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA
Email : grsbohal@gmail.com
Facebook.com/bohalshodhmanjusha
Website : www.bohalsm.blogspot.com
WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1100/-

Disclaimer :

1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originally of their views/opinions expressed in their articles.
4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdication only.

Printed by : Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

बोहल शोध मंजूषा परिवार*

मानद संरक्षक

प्रो. राधेमोहन राय
पूर्व उप प्राचार्य,
राजकीय स्नातकोत्तर महा.,
अलवर, राजस्थान।

डॉ. राजेन्द्र गोदारा
परीक्षा नियंत्रक,
टांटिया विश्वविद्यालय,
श्रीगंगानगर, राजस्थान।

डॉ. विनोद तनेजा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
गुरूनानक वि.वि. अमृतसर
पंजाब।

सम्पादक मण्डल

सह सम्पादिका :
डॉ. रेखा सोनी
उप प्राचार्या, शिक्षा विभाग
टाटिया वि.वि. श्रीगंगानगर।

सह सम्पादिका :
डॉ. सुशीला आर्या
हिन्दी विभाग, चौ. बंसीलाल
विश्वविद्यालय, भिवानी।

प्रबंध सम्पादक :
समुद्र सिंह
भिवानी, हरियाणा।

विधि विशेषज्ञ

डॉ. रामफल दलाल, एडवोकेट
जिला न्यायालय
भिवानी, हरियाणा।

अजीत सिहाग, एडवोकेट
पंजाब एवं हरियाणा हाईकोर्ट,
चंडीगढ़।

चरणवीर सिंह, एडवोकेट
जिला न्यायालय
पटियाला, पंजाब।

विषय विशेषज्ञ/परामर्शदात्री/शोधपत्र निरीक्षण समिति

माई मनीषा महंत
किन्नर अधिकार ट्रस्ट
भूना, जिला कैथल, हरियाणा

डॉ. विश्वबंधु शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
बाबा मस्तनाथ वि.वि. रोहतक

डॉ. संजय एल. मादार
विभागाध्यक्ष, पी.जी. केन्द्र
द.भा.हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद।

डॉ. गीता दहिया, प्राचार्या,
नैशनल टीटी कॉलेज फॉर गर्ल्स
अलवर, राजस्थान

डॉ. विनोद कुमार
हिन्दी विभाग, लवली प्रोफेशनल
यूनिवर्सिटी, पंजाब

डॉ. कुसुम कुंज मालाकार
हिन्दी विभाग,कॉटन विश्वविद्यालय
गुवाहाटी, असम

डॉ. कैलाशचन्द्र शर्मा 'शंकी'
पूर्व जि.शि.अधिकारी, च. दादरी

श्री सहदेव समर्पित
सम्पादक, शान्तिधर्मी, जीन्द

डॉ. अंजली उपाध्याय
उत्तर प्रदेश

डॉ. लता एस. पाटिल
राजीव गांधी बीएड कालेज
धारवाड़, कर्नाटक

प्रो. अमनप्रीत कौर
गुरू तेग बहादुर खालसा कॉलेज
फॉर वूमैन, दसूहा, पंजाब

डॉ. राजपाल
राजकीय पी.जी. महाविद्यालय
हिसार, हरियाणा

प्रो. कमलेश चौधरी
राजकीय रणबीर महाविद्यालय
संगरूर, पंजाब

डॉ. परमजीत कौर
बरेली कॉलेज बरेली,
उत्तर प्रदेश।

डॉ. बी. संतोषी कुमारी
पी.जी.विभाग, दक्षिण भारत हिन्दी
प्रचार सभा, मद्रास

डॉ. पार्वती गोंसाई
सरदार पटेल वि.वि.,
गुजरात।

डॉ. मनमीत कौर
राधा गोविन्द वि.वि.,
रामगढ़, झारखण्ड।

डॉ. शबाना हबीब
त्रिवन्तपुरम, केरल

डॉ. मानसिंह दहिया
हरियाणा

प्रो. नरेन्द्र सोनी
डी.एन. कॉलेज, हिसार।

डॉ. इस्पाक अली
प्राचार्य, लाल बहादुर शास्त्री
शिक्षा महाविद्यालय, बेंगलूरू

डॉ. किरण गिल
दीनदयाल टी.टी. महाविद्यालय
बारी, जिला सीकर, राज.

डॉ. राजकुमारी शर्मा
नेपाल

श्री राकेश ग्रेवाल
सन जॉस,
कैलिफोर्निया, यू.एस.ए.

श्री राकेश शंकर भारती
यूक्रेन।

डॉ. विनोद कुमार शर्मा
टांटिया विश्वविद्यालय,
श्रीगंगानगर, राजस्थान।

डॉ. शिवकरण निमल
राजस्थान

डॉ. नीलम आर्या
उत्तर प्रदेश

प्रो. रोहतास
डी.एन. कॉलेज, हिसार।

प्रो. रेखा रानी
गवर्नमेंट कॉलेज
संगरूर, पंजाब

डॉ. सविता घुड़केवार
पीजी विभाग, दक्षिण भारत
हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास

डॉ. श्रीविद्या एन.टी.
श्री शंकराचार्य संस्कृत वि.वि.
केरल।

डॉ. पंडित बज्जे
भारत महाविद्यालय,
सोलापुर (महाराष्ट्र)

डॉ. उमा सैनी
आई.ए.एस.ई. विश्वविद्यालय
सरदारशहर, राजस्थान

डॉ. सुरजीत सिंह कस्वां
टांटिया विश्वविद्यालय,
श्रीगंगानगर, राजस्थान।

डॉ. राधाकृष्णन गणेशन
वाराणसी

डॉ. रवि सुण्डयाल
जम्मू कश्मीर

प्रो. सत्यबीर कालोहिया
पूर्व प्राचार्य

डॉ. के.के. मल्होत्रा
पूर्व विभागाध्यक्ष
गवर्नमेंट कॉलेज, गुरदासपुर

***सम्पूर्ण बोहल शोध मञ्जूषा परिवार/सम्पादक मण्डल अवैतनिक है।**

शोध–पत्र प्रकाशन के लिए निर्देश मंजूषा

गुगनराम सोसायटी (पंजीकृत) द्वारा शोधार्थियों व अध्येताओं के शोध/अनुसंधान की गतिविधियों को प्रोत्साहित करने हेतू बोहल शोध मंजूषा ISSN 2395-7115 नामक बहुभाषिक अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका का प्रकाशन किया जा रहा है। कला, संस्कृति, विज्ञान, वाणिज्य, मानविकी, प्रबंध, प्रौद्योगिकी, विधि, भूगोल, शिक्षा, पत्रकारिता पर केन्द्रीत इस शोध पत्रिका को विषय विशेषज्ञों तथा मनीषी विद्वानों की सक्रिय सहभागिता प्राप्त है। पत्रिका का वार्षिक शुल्क 1100 रु. है।

आप अपना शोध पत्र कम्प्यूटर से मुद्रित फोन्ट साईज 14, कृतिदेव–10, कृतिदेव–21 में व अंग्रेजी के Arial, Times New Roman में पेज मेकर या माइक्रोसोफ्ट वर्ल्ड में हमारी Email ID : grsbohal@gmail.com पर भेजें। शोध पत्र प्रेषित करने से पूर्व दिये गये सन्दर्भ, मात्रा आदि की पूर्णतया जाँच कर लें।

नोट :– उर्दू, पंजाबी आदि भाषा के शोध पत्र पेपर साईज 7x9.5 पर टाईप कराकर JPG या PDF फाईल हमारी ईमेल आई.डी. पर भेज सकते हैं।

हमारी पत्रिका में शोध पत्र लेखक के फोटो सहित प्रकाशित किये जाते हैं। इसलिए आप अपने शोध पत्र के साथ पासपोर्ट साईज फोटोग्राफ, सम्पर्क सूत्र; टेलीफोन, मोबाईल नं., ई–मेल तथा पिनकोड सहित पत्र व्यवहार का पूरा पता (हिन्दी व अंग्रेजी) कम्प्यूटर द्वारा टाईप करवाकर भेजें।

☐ शोध पत्र 2000–2500 शब्दों (4–6 पेज) से अधिक नहीं होनी चाहिए, यदि शब्द सीमा अधिक होती है तो सम्पादक को अधिकार होगा यथा स्थान संक्षिप्तीकरण कर दें। अस्वीकृत शोध पत्र की वापसी संभव नहीं है।

☐ पत्रिका में प्रकाशित श्रेष्ठ शोध पत्र को हमारी सोसायटी/पत्रिका की ओर से बहुउपयोगी श्रीमती गिना देवी शोधश्री सम्मान प्रदान किया जायेगा।

☐ शोध पत्र में व्यक्त विचार लेखकों के स्वयं के विचार हैं। उनसे सम्पादक, प्रकाशक की सहमति आवश्यक नहीं है। शोध पत्र में प्रयुक्त किए गए तथ्यों के प्रति संबंधित लेखक उत्तरदायी होगा। पत्रिका में शोध आलेख प्रकाशन के लिए भेजने से पहले सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करना लेखक का दायित्व है। प्रत्येक विवाद का न्यायक्षेत्र भिवानी (हरियाणा) होगा।

☐ सम्पादकीय पद अव्यावसायिक और अवैतनिक हैं। पत्रिका में केवल शोध पत्र ही प्रकाशनार्थ भेजें। शोध पत्र का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय व प्रकाशित समस्त शोध पत्रों का सर्वाधिकार समिति/सम्पादक के पास सुरक्षित होगा।

नोट :

सहयोग/सदस्यता राशि 1100/– रू. का ड्राफ्ट/चैक/आई.पी.ओ. 'गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी' के नाम भेजें तथा ऑनलाईन बैंक में सहयोग जमा राशि की रसीद की फोटोप्रति अपने आलेख के साथ हमें मेल कर सूचित करने का कष्ट करें ताकि समय पर रसीद भेजी जा सके। ऑनलाईन सहयोग राशि के साथ 50/– रू. अतिरिक्त अवश्य जमा करवायें। प्रकाशन सहयोग शुल्क वापिस देय नहीं।

बैंक का नाम	:	**पंजाब नैशनल बैंक, हालु बाजार, भिवानी (हरियाणा)**
खाता धारक का नाम	:	**गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी**
बैंक खाता संख्या	:	**1182000109078119**
IFSC Code	:	PUNB0118200
MICR CODE	:	127024003

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२ ISSN : 2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor 5.642

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (According The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

यूजीसी द्वारा मान्य एपीआई

तालिका– 2

शैक्षणिक / शोध अंक की गणना हेतु विश्वविद्यालय और महाविद्यालय के शिक्षकों के लिए कार्यप्रणाली

(आकलन शिक्षकों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों पर आधारित होना चाहिए, जैसे: प्रकाशनों की प्रति, परियोजना स्वीकृति पत्र, विश्वविद्यालय द्वारा जारी उपयोग तथा पूर्णता प्रमाण पत्र, पेटेंट दर्ज कराने संबंधी अभिस्वीकृति और स्वीकृति पत्र, विद्यार्थियों को पीएचडी उपाधि प्रदान किए जाने संबंधी पत्र इत्यादि।)

क्रम सं.	शैक्षणिक / शोध क्रियाकलाप	विज्ञान / अभियांत्रिकी / कृषि / चिकित्सा / पशु–चिकित्सा विज्ञान संकाय	भाषा / मानविकी / कला / सामाजिक विज्ञान / पुस्तकालय / शिक्षा / शारीरिक शिक्षा / वाणिज्य / प्रबंधन तथा अन्य संबंधित विधाएं
1	**समकक्ष व्यक्ति समीक्षित अथवा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा सूचीबद्ध पत्रों में शोध पत्र**	08 प्रति पत्र	10 प्रति पत्र
2	**प्रकाशन (शोध पत्रों के अतिरिक्त)**		
	(क) लिखी गई पुस्तकें, जिन्हें निम्नवत के द्वारा प्रकाशित किया गया :		
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक	12	12
	राष्ट्रीय प्रकाशक	10	10
	संपादित पुस्तक में अध्याय	05	05
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	10	10
	राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	08	08
	(ख) योग्य संकाय द्वारा भारतीय और विदेशी भाषाओं में अनुवाद कार्य		
	अध्याय अथवा शोध पत्र	03	03
	पुस्तक	08	08
3	**आईसीटी के माध्यम से शिक्षण ज्ञान– अर्जन, शिक्षण शास्त्र और विषयवस्तु का सृजन तथा नए और नवोन्मेषी पाठ्यक्रमों और पाठ्यचर्या का विकास**		
	(क) नवोन्मेषी अध्यापन का विकास	05	05
	(ख) नई पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रमों को तैयार करना	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम
	(ग) एमओओसी		
	चार चतुर्थांश में पूर्ण एमओओसी का विकास (4 क्रेडिट पाठ्यक्रम) (कम क्रेडिट के एमओओसी के मामले में 05 अंक / क्रेडिट)	20	20
	प्रति मॉड्यूल / व्याख्यान एमओओसी (चार चतुर्थांश में विकसित)	05	05
	विषयवस्तु लेखक / एमओओसी के प्रत्येक मॉड्यूल हेतु विषयवस्तु विशेषज्ञ (कम से कम एक चतुर्थांश)	02	02
	एमओओसी हेतु पाठ्यक्रम समन्वयक (4 क्रेडिट पाठ्यक्रम) (कम क्रेडिट के एमओओसी के मामले में 02 अंक / क्रेडिट)	08	08
	(घ) ई– विषयवस्तु		
	पूर्ण पाठ्यक्रम / ई– पुस्तक हेतु चार चतुर्थांशों में ई–विषयवस्तु का विकास	12	12
	प्रति मॉड्यूल ई– विषयवस्तु (चार चतुर्थांश में विकसित)	05	05
	समग्र पाठ्यक्रम / पत्र / ई–पुस्तक में ई– विषयवस्तु मॉड्यूल के विकास में योगदान (कम से कम एक चतुर्थांश)	02	02

मार्च 2022

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	सम्पादकीय	डॉ. हनुमान प्रसाद	10–11
2.	शुभकामना संदेश	सुमेधानन्द सरस्वती	12–12
3.	पर्यावरण और कानून	AMARJEET	13-18
4.	स्वास्थ्य शिक्षा एवं पर्यावरण	अन्नपूर्णा न्यौल	19–21
5.	वैश्विक स्तर पर ''पर्यावरण संरक्षण और भारत की भूमिका के सन्दर्भ में''	आशा रानी	22–24
6.	स्वास्थ्य शिक्षा एवं पर्यावरण	जसवीर सिंह	25–28
7.	पर्यावरण प्रदूषण में कृषि आधुनिकीकरण की भूमिका : एक अध्ययन	Jitender	29-33
8.	पर्यावरण प्रदूषण राजनीतिक विमर्श	श्रीमती कांता वर्मा	34–39
9.	बदलता पर्यावरण : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन	डॉ. हनुमान प्रसाद, लीलाधर	40–45
10.	वैश्विक तापक्रम और प्रकृति	Manisha	46-49
11.	मरूस्थलीय औषधीय पादपों का पर्यावरण संरक्षण एवं स्वास्थ्य चेतना में योगदान	डॉ. बजरंग सिंह राठौड़, मोनिका राठौड़	50–55
12.	भारतीय संविधान और पर्यावरण संरक्षण	डॉ. मुकेश महरिया, डॉ. सुनीता चौधरी	56–60
13.	बढ़ता नगरीकरण : पर्यावरण प्रदूषण एवं जलवायु परिवर्तन	नवदीप सन्धू	61–66
14.	पर्यावरण कानून के इतिहास पर एक नजर	Pardeep	67-70
15.	पर्यावरण और विज्ञान का संबंध पर एक नजर	Parvender Singh	71-73
16.	चौटाला गांव में नहरी पानी से उत्पन्न पर्यावरणी समस्याएं	प्रदीप कुमार, कृष्णलाल	74–77
17.	मानव अधिकारों के लिए संघर्ष : भारत में मुस्लिम महिलाओं की दशा	डॉ. विक्रम कुमार, प्रवीण कुमार	78–81
18.	कामकाजी महिलाओं की भूमिका संघर्ष के बीच सशक्तिकरण अधिकार	रजनी चौधरी, डॉ समृद्धि दाधीच	82–90
19.	हनुमानगढ़ की वनस्पति क्षेत्रवृद्धि में घग्घर नदी का योगदान	रेखा सुथार, डॉ. राजेन्द्र मेघवंशी	91–94

20.	पर्यावरण प्रदूषण और कानून	रोज़ी बंसल	95–102
21.	पर्यावरण क्षरण से पर्यावरणीय असंतुलन : कारण एवं निवारण	सज्जन कौशिक	103–107
22.	पर्यावरण प्रदूषण : राजनीतिक विमर्श	श्रीमती श्वेता मोर	108–114
23.	अति उपभोग एवं धारणीय विकास : पर्यावरण के संदर्भ में	डॉ. पंकज बीरमाल, श्रीमती शीतल सुरेश भिडोदिया	115–118
24.	नीमराणा क्षेत्र में विकसित आधारभूत संरचनाओं का सामाजिक आर्थिक विकास पर प्रभाव	सुमित कुमार जाट, डॉ. राजबाला साईवाल	119–123
25.	भारत के उत्तर प्रदेश राज्य में कृषि उत्पादकता का रूझान : एक विश्लेषण	सुनील डॉ. समृद्धि दाधीच	124–130
26.	राजस्थान के श्रीगंगानगर जिले के विशेष संदर्भ में कृषि का आधुनिकीकरण एवं पर्यावरण पर इसका प्रभाव	सुनील, डॉ. समृद्धि दाधीच	131–136
27.	हनुमानगढ़ की वानस्पति क्षेत्रवृद्धि में घग्घर नदी का योगदान	रेखा सुथार, डॉ. राजेन्द्र मेघवंशी	137—139
28.	बदलती जलवायु और वर्तमान कोविड–19 महामारी में परंपरागत पर्यावरण संरक्षण हेतु व्यवस्थाओं की प्रासंगिकता	अनिल कुमार छंगाणी, रितिका भाटी, करणी सिंह बिठू	140–145

सम्पादकीय-

ओ३म् सं गच्छध्वं सं वद्धवं सं वो मंनासि जानताम्।

देवा भा भागम् यथा पूर्वे सं जानाना उपासते।। ऋग्वेद–10/191/02

वर्तमान समय में वेदों की महत्ता और उपयोगिता भारत ही नहीं विश्व में समस्त राष्ट्र स्वीकार करने लगे हैं। उपरोक्त लिखे वेद मंत्र में कहा गया है कि सभी को साथ लेकर चलें संगठन में ही शक्ति है इसी उपदेश को मानते हुए 'वैश्विक पर्यावरण प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन – वैदिक समाधान' विषय पर अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन माता कृष्णावंती महाविद्यालय पदमपुर (श्रीगंगानगर) गीना देवी शोध संस्थान भिवानी (हरियाणा) एवं इंडो–यूरोपियन लिटरेरी डिसकोर्स – यूक्रेन के संयुक्त तत्त्वाधान में आयोजित किया गया। जहरीला होता वातावरण भू–मंडलीय तापमान में हो रही वृद्धि बदलती जलवायु पर गहन चिंतन शोध कार्य हेतु विषय विशेषज्ञों, विद्वानों, शोधार्थियों के चिंतन को वैश्विक पटल पर पहुंचाने का काम किया गया है।

वेद–वेद ईश्वर प्रदत्त ज्ञान का अनुपम उपहार है, सृष्टि के लिए वेद शब्द विद धातु एवं घञ प्रत्यय से मिलकर बना है (विद्+ घञ) मिलकर बना है जिसका अर्थ है –ज्ञान का भाव है।

मनु स्मृति में लिखा है, कि भूतम् भव्यं भविष्यश्च सर्व वेदांत प्रसिद्धयति अर्थात वर्तमान और भूत भविष्य तीनों कालों की सभी समस्याओं का समाधान वेदों से ही सिद्ध होता है। इस प्रकार जिस सर्व जन हितकारी ज्ञान से कोई भी बुद्धिमान मनुष्य द्वेष नहीं करता है। उसी कल्याणकारी ज्ञान के द्वारा इस विश्व को समूल नष्ट करने को उत्सुक पर्यावरणीय समस्या का हल ढूंढने का विनम्र प्रयास किया जा रहा है।

पर्यावरण – वैदिक वांग्मय में पर्यावरण शब्द परिधि 'परीतो धारक = परिधि परिधानमस्तु, कवचस्थ नीयोअस्तु' अर्थात् – चारों ओर से धारण करने वाला। महर्षि दयानंद सरस्वती ने अपने वेद भाषा में इसे सरवलोक आवरण अर्थात समस्त लोगों का आवरण कहा है। आधुनिक दृष्टि में पर्यावरण शब्द परि + आवरण दो शब्दों से मिलकर बना है। परि का आशय है निकटवर्ती या चारों ओर आवरण का अर्थ आच्छादित अथवा घिरे होने से है। सामान्यतः पर्यावरण का अभिप्राय भौतिकी या प्रकृति प्रदत कारक जिसमें सांस्कृतिक तथा आर्थिक सभी प्रभावशाली कारक सम्मिलित हैं।

पर्यावरणीय प्रदूषण – मनुष्य के द्वारा ऊर्जा प्रारूप विकिरण प्रारूप भौतिक एवं रासायनिक संगठन तथा जीवो की बहुलता में किए गए परिवर्तनों से उत्पन्न प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव के कारण आसपास के पर्यावरण में आच्छादित एवं प्रतिकूल परिवर्तनों को प्रदूषण कहते हैं।

जलवायु – किसी स्थान विशेष के मौसम की इस दशा को जलवायु कहते हैं मयंक हाउस के अनुसार जलवायु वस्तुतः किसी स्थान विशेष की दीर्घकालीन मौसमी दशाओं के विवरण को सम्मिलित करती है जलवायु में एक विस्तृत क्षेत्र में दृग काल की वायुमंडलीय अवस्थाओं का विवरण होता है अतः

मौसम की तुलना में जलवायु शब्द का अर्थ व्यापक होता है।

जलवायु परिवर्तन – जलवायु परिवर्तन दशकों, सदियों या उससे अधिक समय में होने वाली जलवायु में दीर्घकालीन परिवर्तनों से है यह मुख्य रूप से जीवाश्म ईंधन जैसे (कोयला, खनिज, तेल और प्राकृतिक गैस) को जलाने से उत्पन्न पृथ्वी के वातावरण में तेजी से बढ़ती ग्रीन हाउस गैसों के कारण होता है। यह गर्मी बढ़ाने वाली गैस ही पृथ्वी और महासागरों को गर्म कर रही है जिसके परिणाम स्वरूप समुद्र का स्तर बढ़ रहा है। तूफान के चक्कर में बदलाव, समुद्र की धाराओं में बदलाव, वर्षा के चक्कर में बदलाव, ग्लेशियर और ग्लेशियरों का पिघलना अत्यधिक गर्मी की घटनाएं आग और सूखा।

इन प्रभावों को जारी रखने और कुछ मामलों में मानव स्वास्थ्य बुनियादी ढांचे जंगलों कृषि मीठे पानी की आपूर्ति समुद्र तटों और समुद्री प्रणालियों को प्रभावित करने का परिणाम ही जलवायु परिवर्तन करने में द्योतक है।

अंतर राष्ट्रीय संगोष्ठी के आयोजन का मुख्य उद्देश्य ही ऊपर लिखे विषयों पर चर्चा करना रहा, जिसमें प्राप्त हुए शोध पत्रों में विद्वानों का भी संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत कर रहे हैं। वैदिक वाङमय में प्रदूषण शब्द का प्रयोग नहीं हुआ है किंतु इस शब्द की मूल धातु दुष का बहुधा प्रयोग हुआ, प्रदूषण के अर्थ में ग्राहक कई शब्द वैदिक वांग्मय में प्रयुक्त होते आए हैं, मल, पाप, दुरित, अंहस्, एनस, रपस, विष, आदि। इन सब का तात्पर्य किसी की प्रकृति में विकृति उत्पन्न होने से है अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी के आयोजन के पीछे हमारा उद्देश्य यही है कि, विद्वानों, प्रकृति प्रेमियों, भूगोलवेत्ताओं, विषय विशेषज्ञों, शोधार्थियों से जो 'वैश्विक पर्यावरण प्रदूषण एवं जलवायु परिवर्तन – वैदिक समाधान' से जो विद्वज्जन इस पर मंथन करे उनसे जो शोध पत्र प्राप्त हुए उनको जनमानस तक पहुंचाने का विनम्र प्रयास किया गया है।

–डॉ. हनुमान प्रसाद
विशेषांक संपादक

सुमेधानन्द सरस्वती
संसद सदस्य (लोक सभा)
सीकर (राजस्थान)

सत्यमेव जयते

सदस्य
- रेल संबंधी स्थाई समिति
- आचार संबंधी स्थाई समिति
- श्रम एवं रोजगार मंत्रालय की परामर्शदात्री समिति
- संस्कृति मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समिति

दिनांक : 04 मार्च 2022

शुभकामना संदेश

मुझे यह जानकर हर्ष हो रहा है कि डॉ. हनुमान प्रसाद के द्वारा संपादित पुस्तक **"पर्यावरण संरक्षण एवं जलवायु (साहित्य शोध एवं समाधान)"** का प्रकाशन किया जा रहा है, जिसमें अंतरराष्ट्रीय स्तर के विचारकों, प्रबुद्ध विद्वज्जनों, मनीषियों ने वर्तमान की वैश्विक ज्वलंत समस्या पर्यावरणप्रदूषण, जलवायु परिवर्तन के संरक्षण हेतु भारतीय सनातन परंपरा के महनीय ग्रंथों यानी वेदों को आधार बनाकर अपनी प्राचीन गौरवशाली प्रकृति सुरक्षा की पद्धतियों को सामने लाने का और आधुनिक नवीन तकनीकों से समायोजन का आदर्श प्रस्तुत किया है।

डॉ. हनुमान प्रसाद साधुवाद के पात्र हैं, जो आर्य समाज से जुड़कर यज्ञों का निरंतर आयोजन करके शुद्ध पर्यावरण को बचाए रखने का संदेश दे रहे हैं और आम जनमानस तक अतीत के वैदिक गौरव को प्रसारण करने में अपनी सक्रिय भूमिका निभा रहे हैं।

इस पुस्तक के संपादन और प्रकाशन हेतु मेरी हार्दिक शुभकामनाएं.....

शुभाकांक्षी

(सुमेधानंद सरस्वती)

स्थाई निवास : वैदिक आश्रम, पिपराली, सीकर, राजस्थान, फोन : 01572-226300, 259000
दिल्ली निवास : 01, हरीशचंद्र माथुर लेन, नई दिल्ली-110001, फोन : 011-23314748
मो. : 09013869341, 09928470131 ई-मेल : sss.piprali@gmail.com, sumedhanand.s@sansad.nic.in

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 13-18

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

पर्यावरण और कानून

-AMARJEET

Reasearch scholar sociology Depatement mdu Rohtak

पर्यावरण –

पर्यावरण दो शब्दों से मिलकर बना है। परि–आवरण यानि की हमारे चारों ओर का वातावरण हमारे चारों ओर उपस्थित सभी चीज़ें हवा जल जीव जंतु, पेड–पौधों इत्यादि सभी हमारे पर्यावरण ही है जिसके कारण मनुष्य का पृथ्वी पर जीवन संभव हो सका पर्यावरण से जल वायु सूर्य का प्रकाश वनस्पति खनिज आदि कारक प्राप्त होते हैं पर्यावरण जलवायु में संतुलन बनाए रखता है जीवन के लिए सभी आवश्यक वस्तु उपलब्ध करवाता है।

जे.एस. रॉस – वातावरण एक बाह्य शक्ति है जो हमें प्रभावित करती है।

पी. गिस्बर्ट – पर्यावरण वह सब कुछ है जो किसी वस्तु पर चारों ओर से फेरों हुए प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित कर रहा है।

पार्क सी. सी. –मनुष्य एक विशेष स्थान पर विशेष समय पर जिन सम्पूर्ण परिस्थितियों से घिरा हुआ है उसे पर्यावरण कहा जाता है।

फिटिंग– जीवों के परिस्थितियों कारकों काा योग पर्यावरण है।

पर्यावरण कानून :–

हम देखते है कि आज का वातावरण कितना जहीरला हो गयाा है अगर हम देखे विश्व के 10 जहरीली हवा को स्वच्छ करने के लिए प्रयोग करने के लिए ताकि आने वाले समय में हमारी आने वाली पीढ़ी भी सही प्रयोग कर सके इसके लिए 1972 के स्टकोहीम सम्मेलन के बाद भारत में नैशलन पर्यावरण नीति तथा योजना के नाम से बनाई गई जो की विभाग के अन्दर आती है। जिसको बाद में पर्यावरण तथा वन विभाग के नाम से जाना गया इसने बाद में कुछ कानून बनाये जिसे हम पर्यावरण को बचा सके जैसी की नैशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल कानून 2010 राष्ट्रीय हरित अधिकरण अधिनियम (2010 की संख्या 19 एन जी अधिनियम) को पर्यावरण संरश्रण और सरंक्षण से संबंधित ओर शीघ्र निपटान के लिए एक राष्ट्रीय हरित अधिकरण की स्थापना की गई पर्यावरण से संबधित भी कानून अधिकर को लागू करने और व्यक्तियों और संपत्ति को नुकसान के लिए राहत ओर मुआवजा देने सहित वनों और अन्य प्राकृतिक संसाधनों का और उससे जुडें या आकस्मिक मामलों के लिए थी निपटरा करता है इस अधिनियम पर्यावरण संरक्षण अधिनियम वन संरक्षणस अधिनियम और से संबधित सभी पर्यावरण कानूनों से निपटने के लिए एनजीटी की स्थापना की परिकल्पना की गई है जैव विविधता अधिनियम जैसा की एनजीटी अधिनियम की अनुसूचि में निर्धारित किया गया इसके बाद पर्यावरण न्यायधिकरण अधिनियम 1995 और राष्ट्रीय पर्यावरण अपीलीय प्राधिकरण अधिनियम 1997 निरस्त हो गया राष्ट्रीय हरित अधिकरण अधिनियम 2010 के तहत राष्ट्रीय

हरत अधिकरण की स्थापना के मदेनजर राष्ट्रीय पर्यावरण अपीलीय प्रधिकरण अधिनियम 1997 की धारा 3(1) के तहत स्थापित राष्ट्रीय पर्यावरण अपीलीय प्राधिकरण को भंग कर दिया गया है इसका काम है अगर कोई पर्यावरण को नुक्सान पहुँचाता है तो उसके खिलाफ एक्शन लेना।

वायु (प्रदूषण की रोक थाम और नियंत्रण) अधिनियम 1984 :–

इसका काम वायु प्रदूषण की रोकथाम, नियंत्रण और उपशयन के लिए और केन्द्र और राज्य स्तर पर बोर्डी की स्थापना के लिए प्रदान करने के लिए एक शक अधिनिपट है। वायु प्रदूषण से जुडी गुणवता में सुधार लाना इसका काम है अधिनियम के तहत पूदूषण नियत्रंण में किसी भी औद्योगिक सयंत्र की स्थापना था। सचालन के लिए एसपीसीबी की सहमति की आवश्यकता होती है एसपीसीबी से वायु प्रदूषण नियन्त्रण क्षेत्र में हवा का परीक्षण करने प्रदूषण नियत्रण उपकरण और निर्माण प्रक्रिया का निरीक्षण करने की भी उम्मीद है

जल (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण 1974) :–

इसका काम देश में जल प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण करना है ताकि पानी स्वच्छ रहे ताकि उसे कोई बिमारी ना फैले जल प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण के लिए कोई भी स्थापना का भी प्रावधान को पुरा नहींकरता है तो यह बोर्ड उस पर रोक लगा सकता है उसको सजा भी दे सकता है जिस प्रकार केन्द्र मे सीपीसीबी है। उसी प्रकार राज्य में एसपीसीबी की स्थापना की है जो जल प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण मानक निर्धारित करता है।

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986 :–

यहाँ पर्यावरण के सरंक्षण और सुधार का प्रावधान करता है इसका काम दीर्घकालिक आवश्यकताओ के अध्यन योजना और कार्यान्वयन को खतरे में डालने वाली स्थितियों के लिए त्वरित और पर्याप्त प्रतिक्रिया की प्रणाली निर्धारित करता है। यहाँ जल अधिनियम 1974 और वायु अधिनियम के तहत केन्द्रीय और राज्य में रूपरेखा तैयार करने के लिए बनाया गया। पर्यावरण अधिनियम के तहत केंद्र सरकार को किसी उद्योग या गतिविधि को चलाने वाले किसी भी व्यक्ति द्वारा वातावरण से प्रदूषण को उत्सर्जन और निर्वहन के लिए मानक निर्धारित करने पर्यावरण की गुणवता की रक्षा और सुधार के लिए आवश्यक उपाय करने का अधिकार है उद्योगों के स्थान की विनियित करना, खतरनाक कमरे का प्रंबधन और सार्वजनिक स्वास्थ्य और कल्याण की सुरक्षा करना है ताकि केन्द्र सरकार समय–समय पर दिशा–निर्देश जारी करती रहती है।

खतरनाक अपशिष्ट प्रबंधन विनियम :–

पानी की कोई अपशिष्ट जो अपनी भौतिक रासयिनक प्रतिक्रिया विषाक्त, ज्वलशील विस्फोटक या सक्षारक विशेषताओं के कारण बनता है या फिर स्वास्थय या पर्यावरण के लिए खतरनाक साबित होती है आज हम देखते है की कितने खतरनाक खाद्य पदार्थ होते जा रहे है और हमारे स्वास्थ्य के लिए खतरनाक होते जा रहे है अन्य लॉ खतरनाक अपशिष्ट (प्रबंधन,प्रबंधन और सीमा पार) नियम 2008 खतरनाक रसायनों के निर्माण भंडारण और आयात के लिए और खतरनाक अपशिष्ठ प्रबंधक के लिए एक गाईड है।

The wild protection Act 1972 :-

1972 में स्टॉकहोम कॉन्फ्रैंस के उद्देश्य की पूर्ति के लिए सरकार ने प्रभावी ढंग से इस देश के वन्यजीवों की रक्षा हेतु तस्करी अवैध, शिकार व वन्यजीव अधिनियम 1972 को अधिनियमिता किया बाद में इसको 2003

इसको संशोधन भी किया फिर इसका नाम भारतीय वन्यजीव अधिनियम 2002 रखा गया इसके अन्तर्गत दंड जुर्माने के प्रावधान को कठोर कर दिया गया इसके कारण जगली जानवरों पक्षियों और पौधों को और अधिक सूरक्षा करता है यह पुरे भारत में लगा है फिर दो चाहे कौन–सा भी राज्य क्यू ना हो इस कानून में वृहत कुद शामिल है जैसे की राज्य वन्यजीव सलाहकार बोर्ड जगली पशुओं के व्यापार पर नियन्त्रण पशु उत्पादों पर कानून व कानून के उल्लघंन पर कानूनी सजा का प्रावधान है इस अधिनियम को छह श्रेणियों में बॉटा गया है।

1 अनुसूचि–1 स्वं अनुसूचि–2 के भाग–2 में दी गई अगर कोई भी जीवों को नुक्शान पहुचायेगा तो उसको कठोर सजा का प्रावधान है।

2. अनुसूची–3 व अनूसूचि 4 श्रेणीबद्ध किये गये जीव भी संरक्षित है परन्तु इनको हानि प्रध्याने पर कम सजा मिलेगी।

3. अनुसूची 5 में दिये गये जीवों का शिकार किया जा सकता है।

4. अनुसूची 6 में श्रेणीबद्ध किये गए पौधों को कृषिगत उपयोग व वाणिज्यीकरण पर प्रतिबंध लगााया गया इसके तहत हो अनुसूचि में अधिकारियों के शिकार के संबंध में अपराध निर्धारित कर सजा देने व जुर्माना लगाने की शक्ति है

1982 में लागु एक इस कानून के संशोधन ने पशुधन के वैज्ञानिक प्रबंधन के उपदेश से जंगली पशुओं को पकडना और उनके परिवहन की अनुमति दे दी अगर हम बात रके 2002 का संशोधन अधिक संख्त है इसके बाद इसमें एक नया अहयाता जोडा गया जिसमें जीवों के अवैध शिकार और व्यापार से अर्जित की गई सम्पत्ति की जबती का प्रावधान है इसने सामुदायिक रिजर्व की स्थापना जैसा नई धारणा भी सामने रखीं अगर देखा जाये तो मदली भी पशुओं में आती है बाद में 2006 इसमें वन संशाधित कर इसमें अध्याय 5 बी और 4 सी जोडे गए। फिर पर्यावरण वन व जनवायू परिवर्तन मंत्रालय ने राज्य सभी में वन्य जीव संशोधन अधिकनयम 2013 पेश किया इसमें ओर कठोर सजा का प्रावधान किया गया और भारतीय कानूनों को अन्तर्राष्ट्रीय कानूनों के अनुसार बनाने का प्रयत्न किया गया इसमें पशु जाल के उपयोग पर प्रतिबंध लगाने संरक्षित क्षेत्र के प्रबंधन में ग्राम सभा व ग्राम पंचायम को शामिल करने के साथ ही अएडमान–निकोबार द्वीप समूह की शिकरी व संग्राहक जनजाति को कुछ हद तक शिकार के अधिकार प्रदान कियज गये है इसमें अभ्यारण्यों तथा उनको सीमा में शिकार व संग्राहक जनजाति का सग तह सीमा के अनुसार ही अधिकार थे अगर कोई अभ्यारण्यों तथा उनकी सीमा में शिकार करने पर 5 से 7 साल की सजा और 1 लाख से 25 लाख तक जुर्माने का प्रावधान है जो पहले 3 से न्यूनतम 7 साल की सजा वे 10000 को जुर्माना का प्रावधान है अगर कोई फिर अगर यही अपराध दुबारा करता तो उसको 7 साल की सजा और न्यूनतम 5 लाख से लेकर 50 लाख का जुर्माना देना होगा।

व्याघ्र और अन्य संकटापन्न प्रजाति :–

अपराध ब्यूरों के स्थान पर वन्यजीव अपराध नियंत्रण ब्यूरो का अंग किया गया। अनुसूचित जनजाति और अन्य पंरपरागत वन निवासी (2006) यह अधिनियम अनुसूचित जनजाति और अन्य पंरपरागत वन निकासी के लिए बनाया गया जैव विविधता का संरक्षण और परिस्थितिकी सतुलन को बनाये रखना और वन निवासियों की जीविका तथा खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करने के साथ ही वनों के संरक्षण की व्यवस्था को सुदृढ करना भी सम्मिलित है इसको 1 जनवरी 2008 से लागु कर दिया गया इसको वन अधिकार अधिनियम आदिवासी अधिकार अधिनियम

नामों से भी जाना जाता है।

वन अधिकारों को निहित करने के लिए प्राधिकारी और प्रक्रिया :-

ग्राम सभी को ऐसे किसी व्यष्टि या सामुदायिक वन अधिकारों या दोनो की प्रक्रति और सीमा को अवधारित करने के लिए प्रक्रिया आरंभ करने का प्राधिकार होगा। अगर कोई इनकें फैसले से असुतष्ट है तो वहा उपखंड स्तर की समिति को याचिका दे सकता है और उपखण्ड समिति ऐसी याचिका पर विचार करेगी और उसका निपटारा करेगी कोई व्यक्ति फिर भी सतुंष्ट नही है तो वो वहा 60 दिन कके भीतर जिला स्तर की समिति को याचिका दे सकेंगा और जिला स्तर की समिति ऐसी याचिका पर विचार करेगी व उसका निपटारा करेगी।

अपराध और शक्तियाँ :-

कोई प्राधिकरण और समिति या उनका सदस्य वन अधिकारों से संबंधित नियमों को उल्लघन करती है तो उन्हें दोषी माना जायेगा किसी भी न्यायालय इस अधिकनयम की धारा 7 के अधीन किसी अपराध का तग तक संज्ञान नहीं लेगा जब तक की कोई वन में निवास करने वालों अनुसूचित जनजाति ग्राम सभा के संकल्प से संबंधि ात किसी विवाद के मामलों के या किसी उच्च प्राधिकारी के विरूद्ध किसी संकल्प के माध्यम से ग्राम सभी राज्य स्तर की मॉनीटरिंग समिति को 60 दिन के भीतर सूचना नही दे देती है राज्य स्तर की मॉनीटरिंग समिति ने ऐसे प्राधिकार के विरूद्ध कार्रवाई न कर ली हों।

अनुसूचित जनजाति तथा अन्य पंरपरागत वन निवासी संशोधन नियमावली 2012 जनजाति कार्य मत्रालय को जब लगाा कि अधिनियम के क्रियान्वयन 4 वर्ष के अधिक समय बीतने के बाद इस कल्याणकारी कानून का अश्ररक्ष क्रियान्वयन नहीं हो पा रहा लश्रित बन निवासियों के इसका लाभ पहुचानें के लिए कई प्रकार कह समस्या का सामना करना पड़ रहा है तो मंत्रालय ने अधिनियम के सख्ती से कार्यान्वयन हेतू कुछ प्रावधान उपाय किये 2012 में पहले ही कुछ दिशा–निर्देश जारी किये है।

छोटे गाव या बस्तियों की पहचान हेतू प्रक्रिया स्वय उनकी सूचियों की सकीकरण प्रक्रिया को निर्धारित करना। मौजूदा वन अधिकार समिति की अनिवार्य जनजाति सदस्यता को एक तिहाई से दे तिहाई तक बढ़ानां जीविका शब्द को स्पष्ट करना उसमें स्वयं तथा परिवार को आजीविका की जरूरत व किसी भी उपज की बिक्री शामिल है।

वन क्षेत्र से लघु वन उत्पादों को भीतर स्वय बाहर ले जाने के लिए आजीविका हेतू वन अधिकार कारकों या समितियों उत्पादों के उपयोग या बिक्री शामिल है। वन क्षेत्र से लघु बन उत्पादों को भीतर स्वय बाहर ले जाने के लिए अजीविका हेतू वन अधिकार धारकों या समितियों उत्पादों के उपयोग या बिक्री हेतू स्थानीय परिवहन की अनुमति देना।

इस वन नीति के निम्नलिखित उदेश्य है :-

पर्यावरणीय स्थायित्व और पारिस्थितिकीय संतुलन को बनाये रखना ताकि मानव पशु ओर पौधे सभी को जीवन को एक सुनिश्चित आधार प्रदान किया जा सके ग्रामीण और जनजातीय जनसंख्या के लिए लघु वन उत्पादों जलावन की लकड़ियों और उनके परिवार की जरूरत को पुरा करना।

प्राकृतिक वनों की रक्षा करना सघन वनीकरण कार्यक्रम और सामाजिक वानिकी कार्यक्रम के माध्यम से वास्तविक रूप से वनों का विस्तार करना खासककर अनुपयोगी और अपरीदत भूमि पर वनों की उत्पादकता को

बढ़ाना ताकि राष्ट्रीय आवश्यकताओं की पूर्ति अबाध रूप से हो सके।

वन उत्पादों के अनुकूलतम उपयोग को बढ़ावा देना जहा तक हो सके लकड़ी का विकल्प ढूँढना इस वन नीति के अन्य उद्देश्य में जनसंख्या की बढती हुई ऊर्जा को पुरा करना वन्य जीव सरंक्षण के प्रति राष्ट्रीय तथा अंतराष्ट्रीय नदी अपवाद क्षेत्र में मृदा अपरदन और बाढ़ पर प्रभावी नियंत्रण मरूस्थीलिय और तटीय क्षेत्र में मरूस्थल के विस्तार को रोकना।

इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए जन आन्दोलन ओर जन जागरूकता के विस्तार को बढ़ाना आदि ताकि वनों के उचित संरक्षण और प्रबधन में स्थानीय लोगों का सहयोग प्राप्त किया जा सके।

इन नीतियों में उल्लेखित उद्देश्य के क्रियान्वयन के लिए देश में कुल क्षेत्र का कम से कम एक तिहाई क्षेत्रफल वनों व वृक्षों से आच्छादित करने का आशय होना चाहिए जिसमें पहाडी और पर्वतीय क्षत्रों में यहा दो तिहाई से कम नहीं होना चाहिए। ऐसे वन क्षेत्रों को हतोत्साहित करना जिसमें वनो का नुक्शान हो।

झुम कृषि को हतोत्साहित करना बागानी कृषि को प्रोत्साहित करना चाहिए।

वनगिन और अति चरण प्रबंधन को विशेष महत्व देना।

स्थानीय लोगों के वन अधिकारों और उन्हें मिली छूट के बारे में वर्णन करना और उनकी बताना की बनों का सरंक्षण उनके हाथ में है।

वन आधारित उद्योगों के लिए कच्चे माल की आपूर्ति जहाँ तक संभव हो सके स्थापित वनों से नही करनी चाहिये बल्कि स्थानीय लोगों की जरूरी कच्चे माल के उगाने के लिए आवश्यक प्रोत्साहन और लाभ देना चाहिए। वनों के विस्तार शोध और प्रबंधन पर विशेष जोर देना चाहिएं।

इन रणनीतियों को क्रियान्वित करने के लिए व्यापक वित पोषण सुनिश्चि करना चाहिए साथ ही वनों को राजस्व का स्त्रोत समझने की बजाय उसे राष्टीय सपदा समझना चाहिये।

इन सब के अलावा राज्य व केन्द्र सरकार के समय समय पर बदलाव लाने चाहिए फरवरी 2018 में जारी भारत वन स्थिति रिपोर्ट 2017 के अनुसार भारत का कुल वन क्षेत्र 24.39 प्रतिशत है।

निष्कर्ष :-

आज के इस भोतिकवाद के दौर में मानव पुरी तरह से लालची हो गया है। वहां सिर्फ अपने बारे में सोचकर संसाधनों का बुरी तरह से प्रयोग कर रहा है। उसकों पर्यावरण से कोई लेना देना नहीं हैं की पर्यावरण को नुक्सान हो या फिर फायदा उसको अपने स्वार्थ की पडी है ओर आने वाली पीढ़ी से कोई लेना देना नहीं है। वहां पर्यावरण को बुरी तरह से नुकसान पहुचा रहा है और अगर पर्यावरण के लिए कठोर कानून नहीं बनाये तो यहा मानव जाति के लिए खतरनाक साबित हो सकता है। इसलिए पर्यावरण में बयो के लिए कठोर से कठोर कानून बनाने चाहिए। और साथ में मनुष्य को जागरूक भी करना चाहिए जिसे वह पर्यावरण को बचा सके। अगर पर्यावरण बचता है तो मानव इस धरती पर बचेगा या हम कह सकते है कि अगर मनुष्य पर्यावरण को नुक्सान पहुचायेगा तो वह अपने आप को नुक्सान पहुचायेगा। अतः इस प्रकार पर्यावरण को बचाने के लिए कानून बनाने चाहिए और जो पहले कानून है उनमें सुधार करने चाहिए।

इसका काम है अगर कोई पर्यावरण को नुक्सान पहुँचाता है तो उसके खिलाफ एक्शन लेना लिए प्रदान करने के लिए एक शक अधिनिपट है। वायु प्रदूषण से जुडी गुणवता में सुधार लाना इसका काम है अधिनियम के

तहत प्रदूषण नियत्रंण में किसी भी औद्योगिक सयंत्र की स्थापना था। सचालन के लिए एसपीसीबी की सहमति की आवश्यकता होती है। एसपीसीबी से 1982 में लागु एक इस कानून के संशोधन ने पशुधन के वैज्ञानिक प्रबंधन के उपदेश से जंगली पशुओं को पकडना और उनके परिवहन की अनुमति दे दी। अगर हम बात रके 2002 का संशोधन अधिक संख्त है इसके बाद इसमें एक नया अहयाता जोडा गया जिसमें जीवों के अवैध शिकार और व्यापार से अर्जित की गई सम्पत्ति की जबती का प्रावधान है। इसने सामुदायिक रिजर्व की स्थापना जैसा नई धारणा भी सामने रखीं अगर देखा जाये तो मदली भी पशुओं में आती है।

बाद में 2006 इसमें वन संशाधित कर इसमें अध्याय 5 बी और 4 सी जोडे गए। फिर पर्यावरण वन व जनवायू परिवर्तन मंत्रालय ने राज्य सभी में वन्य जीव संशोधन अधिकनयम 2013 पेश किया इसमें ओर कठोर सजा का प्रावधान किया गया और भारतीय कानूनों को अन्तर्राष्ट्रीय कानूनों के अनुसार बनाने का प्रयत्न किया गया। इसमें पशु जाल के उपयोग पर प्रतिबंध लगाने संरक्षित क्षेत्र के प्रबंधन में ग्राम सभा व ग्राम पंचायम को शामिल करने के साथ ही अएडमान–निकोबार द्वीप समूह की शिकरी व संग्राहक जनजाति को कुछ हद तक शिकार के अधिकार प्रदान कियज गये है इसमें अभ्यारण्यों तथा उनको सीमा में शिकार व संग्राहक जनजाति का सग तह सीमा के अनुसार ही अधिकार थे अगर कोई अभ्यारण्यों तथा उनकी सीमा में शिकार करने पर 5 से 7 साल की सजा और 1 लाख से 25 लाख तक जुर्माने का प्रावधान है जो पहले 3 से न्यूनतम 7 साल की सजा वे 10000 को जुर्माना का प्रावधान है अगर कोई फिर अगर यही अपराध दुबारा करता तो उसको 7 साल की सजा और न्यूनतम 5 लाख से लेकर 50 लाख का जुर्माना देना होगा।

व्याघ्र और अन्य संकटापन्न प्रजाति :–

अपराध ब्यूरों के स्थान पर वन्यजीव अपराध नियंत्रण ब्यूरो का अंग किया गया।

अनुसूचित जनजाति और अन्य पंरपरागत वन निवासी (2006) यह अधिनियम अनुसूचित जनजाति और अन्य पंरपरागत वन निकासी के लिए बनाया गया जैव विविधता का संरक्षण और परिस्थितिकी सतुलन को बनाये रखना और वन निवासियों की जीविका तथा खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करने के साथ ही वनों के संरक्षण की व्यवस्था को सुदृढ करना भी सम्मिलित है इसको 1 जनवरी 2008 से लागु कर दिया गया इसको वन अधिकार अधिनियम आदिवासी अधिकार अधिनियम नामों से भी जाना जाता है।

सन्दर्भ सूचि :–

1. दीप्ति जैन (पर्यावरण शिक्षा) नई दिल्ली।
2. दैनिक जागरण 5 जू. 2019
3. जलवायु परिवर्तन एक लेख डेविड वाल्स
4. रनडोन अलर ''प्रदूषण'' नई दिल्ली।
5. कोलर्बट ''एकोलोनी'' इग्लैड 2017

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 19-21

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

स्वास्थ्य शिक्षा एवं पर्यावरण

अन्नपूर्णा ब्यौल

शोधार्थी – गृह विज्ञान, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर

परिचय :–

स्वास्थ्य :– शारीरिक मानसिक व सामाजिक रूप से पूर्णतः स्वस्थ्य होना ही स्वास्थ्य है। स्वास्थ्य सिर्फ बिमारियाँ की अनुपस्थिति का नाम नहीं है। हमें सम्पूर्ण स्वास्थ्य के बारे में नयी सोच से सम्बन्धित जानकारी होना अति आवश्यक है।

1. शारीरिक स्वास्थ्य
2. मानसिक स्वास्थ्य
3. बौद्धिक स्वास्थ्य
4. आध्यात्मिक स्वास्थ्य
5. सामाजिक स्वास्थ्य

शारीरिक स्वास्थ्य शरीर को स्थिति को दर्शाता है। जब शरीर के सभी आन्तरिक और बाहरी अंग, ऊतक, कोषिकाएं ठीक से कार्य करते है। तो इसके शरीर की संरचना, विकास, कार्यप्रणाली और रखरखाव शामिल होता है। मानसिक स्वास्थ्य व्यारे भावात्मक और आध्यात्मिक लचीलेपन से है जो हमें अपने जीवन में पीड़ा आशहीन और उदासी, दुःख की स्थिति में जीवित रहने के लिए सक्षम बनाता है। इस सदैव अच्छा बनाये रखने के लिए प्रसन्नता, शांति व व्यवहार में सच्ची खुशी आवश्यक है।

हमारी बौद्धिक क्षमता हमारी रचनात्मकता को प्रोत्साहित और हमारे निर्णय लेने की क्षमता में सुधार करने में मदद करती है। बौद्धिक रूप से हम जितने मजबूत होते है अन्य क्षेत्रों मे हमारी सहभागिता उतनी ही स्थाई होती है। समायोजन करने वाली बुद्धि अलोचना को सहज स्वीकार करने की क्षमता, भावात्मक आवश्यकताओं की समझ आत्मनियंत्रण तनाव मुक्त हमारी बौद्धित क्षमता का आइना है।

हमारा अच्छा स्वास्थ्य आध्यात्मिक रूप से स्वस्थ्य हुए बिना सम्पूर्ण नही है। जीवन के वास्तविक अर्थ और उदेश्य की खोज करना हमें आध्यात्मिकता की और ले जाता है। चूँकि हम सामाजिक प्राणी है अतः सन्तोषजनक संतुलित रिश्तों को बनाना और उन्हे बनाये रखना हमें स्वाभाविक रूप से आता है। सामाजिक रूप से सबके द्वारा आत्मसात करना हमारें भावात्मक खुशहाली में वृद्धि का कारक है।

इन स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए हमे प्रदुषण रहित स्वस्थ्य वातावरण की आवश्यक होगी। किसके लिये पेयजल को सुविधाओं के आसपास सफाई सुनिश्चित हो, मल–मूत्र जन अपशिष्ट प्रदार्थों को निकासी की सुनियोजित व्यवस्था की जाये। सुलभ शौचालय हो वृक्षारोपण में सब खुलकर सहयोग करें। सार्वजनिक स्थलों पर

पूर्ण स्वच्छता हो। समाज अहिंसा, सत्य अस्तेय, ब्रहयचर्य एवं अपरिग्रही एव स्वभाव वाला हो।

संक्रमण रोधी व्यवस्था हो ताकि वर्तमान मे जो कोरोना वायरस (ओमीक्राम) फैला हुआ है ऐसी परेशानी न आने पर साथ ही हर तरह की संक्रमण से लड़ने के लिए रोगप्रतिरोधक क्षमता हमारे शरीर में हो।

इन सबके लिए उचित शिक्षा की व्यवस्था की आवश्यक है।

स्वास्थ्य शिक्षा –

जनता को स्वास्थ्य के सभी पहलूओं के बारे में निरस्तार से शिक्षित करना स्वास्थ्य शिक्षा है। स्वास्थ्य शिक्षा ऐसा साधन है जिसमे विशेष योग्य एवं शिक्षित व्यक्तियों की मदद से जनता को स्वास्थ्य सम्बन्धी जानकारी एवं विशिष्ट बिमारियों से बचने को उपयों का प्रचार–प्रसार किया जा सकता है।

स्वास्थ्य शिक्षा देने के कई तरीके हो सकते है।

1. स्कूलों एवं कॉलेजों को पाठ्यक्रमों में स्वस्थ्य शिक्षा का समावेश जिसके माध्यम से व्यक्तिगत स्वास्थ्य, परिवारिक स्वास्थ्य, संक्रामक रोगो की रोकथाम की शिक्षा से सम्पूर्ण देश की स्वास्थ्य रक्षा के लिए तेजी ला सकते है।
2. सामान्य जनता को स्वास्थ्य संबंधी सूचना देकर भी स्वास्थ्य विभाग एवं ऐच्छिक स्वास्थ्य संस्थाएं इस कार्य मे आगे जा सकती हैं। इस प्रकार की स्वास्थ्य शिक्षा का कार्य रेडियों, समाचार पत्रों, भाषणों, सिनेमा प्रदर्शनी तथा पुस्तिकाओं को सहायता से यथाशीघ्र सम्पन्न किया जा सकता हैं।
3. उन लोगो से स्वास्थ्य शिक्षा भी दिलाई जा सकती है रोगियो की देखभाल तथा अन्य स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यो में नियुक्त है। Health visitor इस कार्य को बड़ी कुशलता से कर सकते है।

स्वास्थ्य शिक्षा वह अभियान है जो जन साधारण को ऐसे ज्ञान व आदतो को सीखने मे मदद करती है। जिससें वे स्वास्थ्य रह सके। उचित व्यवहार एंव उचित जीवन शैली अपनानें के लिए प्रेरित करती है। उत्तम स्वास्थ्य प्राप्त करने व बनाये रखने के लिए उत्तम दृष्टिकोण विकसित करती है।

स्वास्थ्य शिक्षा के माध्यम से ही स्वास्थ्य पर पड़नें वाले आनुवांशिक व्यावहारिक और पर्यावरणीय प्रभावों के वारे में जन–साधारण को शिक्षित किया जा सकता है। जन साधारण को कुछ आवश्यक जानकारियों का होना अति आवश्यक हो जैसे–

1. रिहायशी इलाको मे स्वच्छता और स्वास्थ्य रक्षा सम्बन्धी समस्याओं की जानकारी।
2. जल द्वारा पैदा होने वाले रोगो, रोग बाहको एवे रासायनिक प्रदुषकों के कारण उत्पन्न होने वाले रोगो की जानकारी।
3. व्यवसाय जनित स्वास्थ्य खतरों की जानकारी?
4. पर्यावरणीय बॉसरजन्य पदार्थों की जानकारी एंव नियंत्रण व रोकथाम की जानकारी।

आनुवांशिक प्रभाव :– पैतृक असमान्यताएं ही आनुवांशिक रोग के रूप में माता–पिता से बच्चों को हस्ग्रानान्तरिक हो जाती है जैसे – एलर्जी, ब्लडप्रेशर, मधुमेह आदि।

व्यावहारिक प्रभाव – मद्यपान, धुम्रपान, दवाइयों का सेवन, तम्बाकू कीलत और भोजन की अनियमित आदतों के कारण अनेक स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएं पैदा हो सकती है।

पर्यावरणीय प्रभाव – पर्यावरण के अनके घटक हमारे स्वास्थ्य पर प्रभाव छोड़ते है। इनकों भौतिक,

रासायनिक, जैविक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक समूहों मे वर्गीकृत किया जा सकता है।

पर्यावरण :- उन सभी भौतिक, रासायनिक एवं जैविक कारकों की समष्टिगत इकाई है जो किसी जीवधारी अथवा पारितंत्रीय आबादी को प्रभावित करते है तथा अनेक रूप, जीवन और जीविता को तय करते है।

पर्यावरण का हमारे जीवन मे महत्त्व :-

जल, थल, वायु, अग्नि, आकाश इन्ही पांच तत्वों से ही मनुष्य का जीवन है और जीवन समाप्त होने पर इन्ही मे विलीन हो जाता है। प्राचीन काल मे मनुष्य अपने चारों और की सुन्दर प्रकृति को सहेज कर रखता था, क्योकिं जीवन यावन साधारण तरीके से होता था।

धीरे–धीरे समय बदला व इस बदलाव के साथ ही अनेकों अविष्कार मनुष्य द्वारा किये गये। अविष्कार जैसे–जैसे आकाक्षायें बढ़ी वैसे ही बढ़े जिससे पहले जो चारो और सौन्दर्य दिखाई देता था धीरे–धीरे खत्म होता चला गया घने जंगलो को काट कर उद्योग स्थापित कर दिये गये। फैक्ट्री आदि से जो धुआं निकल रहा है और उसके खराब रासायनिक तत्व जो जलाशयों में डाल दिये जाते हैं उससे जल प्रदुषण फैलाते जा रहे है और धुंए से निकलने वाली विषैली गैस हवा को प्रदुषित कर वायु प्रदुषण फैला रही है। आस–पास की सफाई करके जो खुले मे कचरा डाल दिया जाता है जो एक चिंता का विषय है।

इन्ही प्रदूषकों के कारण आये दिन नई–नई बिमारियों का सामना मानव समाज को एवं परिस्थिति तंत्र को करना पड़ रहा है। जो बड़ा ही भयानक हैं।

वर्तमान पर्यावरणीय समस्याएँ :-

1. प्रदुषण
2. अपषिष्ट विद्यटन
3. प्राकृतिक संसाधनों का दोहन
4. जैव विविधता की कमी
5. समुद्र प्रदुषण
6. ऑजोन परत का क्षतिग्रस्त होना

पर्यावरण को बनाए रखने की जिम्मेदारी सम्पूर्ण मानव जाति को साथ मिल कर उठानी होगी। कानून बनने या हमें नियमबध करने की सरकार व प्रशासन की कार्यवाहियों का इतंजार किय बिना हमे आगे आकर पर्यावरण संरक्षण के लिए कार्य करना होगा।

हमारे द्वारा मिलकर किय जाने वाले कार्य जिनकों हमें अपने स्तर पर भी करना है।

1. प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण एवं विकास किया जावे।
2. वनो और जंगलो का निकास वृक्षारोपण करके किया जावे और वन प्रबंधन हेतु स्थानीय एवं राज्य स्तरीय प्रयास किये जाए।
3. वन्य प्राणी संरक्षण हेतु स्थानीय एवं राज्य स्तरीय प्रयास किये जाए।
4. अपशिष्ट पदार्थों के पुर्नचक्रण एवं पुर्नउपयोग पर बल देकर अपशिष्ट पदार्थ प्रबन्धन किया जावें।
5. विद्यालय एवं महाविद्यालयों मे 'पर्यावरण अध्ययन' एक विषय के रूप में जिसमें प्रायोगिक कार्यों पर अधिक ध्यान दिया जाये।
6. वाहनो को प्रदुषण मुक्त कर सौर ऊर्जा एवं पवन ऊर्जा का उपयोग यथा संभव किया जाये।
7. पशु पालन को प्रोत्साहन एवं जैविक खाद का उपयोग कृषि हेतु किया जाये।
8. व्यक्तियों में धर्म, अध्यात्मिक एवं वैदिक कार्ये के प्रति सकारात्मक सोच एवं रूचि जाग्रित किया जाये।

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 22-24

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

वैश्विक स्तर पर "पर्यावरण संरक्षण और भारत की भूमिका के सन्दर्भ में"

-आशा रानी

प्रवक्ता, हिन्दी साहित्य, माता कृष्णावन्ती महाविद्यालय, पदमपुर

पर्यावरण में सभी जैविक और अजैविक तत्व आते है, जो एक–दूसरे को प्रभावित करते है, सभी जीवित तत्व जैविक तत्व होते है, जैसे– पशु, पेड, पौधे, वन आदि अजैविक तत्वो में हवा, पानी, भूमि आते है चट्टाने व सूर्य की किरणे पर्यावरण के अजैविक तत्वो में शामिल है।

पर्यावरण मनुष्य के लिए अनेक कार्य करता है– पर्यावरण संसाधनों की पूर्ति करता है जिसमें नवीकरणीय और गैर नवीकरणीय दोनो प्रकार के संसाधन शामिल होते है, जिनका उपयोग संसाधन के क्षय होने की आंशका के बिना किया जा सकता है। इसमें संसाधनो की पूर्ति बनी रहती है, जैसे– वनों में पेड़ और समुद्र में मछलिया। गैर–नवीकरणीय वे संसाधन है, जिनका निष्कर्षण और उपयोग से समाप्त हो जाते है, जैसे– जीवाश्म, ईधन। पर्यावरण मनुष्य की पूर्ति के साधन समाहित करता है, तो मनुष्य को भी पर्यावरण के लिए कुछ सोचना चाहिए पर्यावरण को दूषित होने से बचाना चाहिए। आज का पर्यावरण पूर्ण रूप से शुद्ध नही है, इसमें बहुत सी बीमारियो ने घर कर लिया है, और यह बीमारियां पर्यावरण प्रदूषण के कारण फैल रही है।

आज वर्तमान समय में सबसे बड़ी व खतरनाक बीमारी कोविड की है। इस बीमारी से देश व दुनिया को बहुत क्षति पहुँची है, इस बीमारी के कारण बहुत से इंसानो ने अपनी जान भी गवाई है, इस बीमारी के फैलाने का कारण भी पर्यावरण की शुद्धता में आई गिरावट है, सिर्फ ये नही इसके अलावा बहुत सी ओर भी कई बीमारीयां है, जैसे– प्लेग, डेगू, मलेरिया आदि पर्यावरण प्रदूषण से ही फैलती है।

आज का मानव अपने लाभ के लिए पर्यावरण को क्षति पहुचाने से पीछे नही हटता है, आज बडे–बड़े कारखाने, फैक्ट्रिया चलती है, और यह जितने भी उद्योग धंधे है वें कारखाने व फैक्ट्रियों से निकलने वाला धुआँ व गन्दा पानी पर्यावरण व समाज के वातावरण को दूषित कर रहे हैं। पर्यावरण प्रदूषण को यदि राजनीति से जोड़ कर देखा जाये, तो पर्यावरण प्रदूषण को राजनीति मुद्दे के तौर पर उठाया जा सकता है जिससे पर्यावरण प्रदूषण में कमी हो सकती है।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कई जाने माने विचारक रहे है जैसे– चार्ल्स डार्विन, राल्फ एमर्सन, हेनरी थोरो आदि।

चार्ल्स डार्विन ने "Origin of Species" लिखी थी जो कि विभिन्न प्रजातियो और आवास स्थानों के बीच के सम्बम्धो की व्याख्या करती है।

राल्फ एमर्सन ने 1840 के दशक में हमारे पर्यावरण के लिए वाणिज्यिक गतिविधियो को खतरा बताया था।

जिस प्रकार इन पर्यावरण विचारको ने पर्यावरण के लिए अपना समर्थन दिया वैसे ही मनुष्य को भी पर्यावरण संरक्षण में अहम भूमिका निभानी चाहिए। हम अपने चारो ओर के वायुमण्डल का संरक्षण करे तथा पर्यावरण को अपने जीवन के अनुकुल बनाये पर्यावरण तथा मानव चाहे वह जीव–जन्तु हो या पेड़ पौधे सभी पर्यावरण पर आश्रित है, अतः पर्यावरण को शुद्ध व संरक्षित करना अति आवश्यक है। दुनिया भर में पर्यावरण संरक्षण के लिए बहुत कार्य किये जा रहे है जिस में जापान के क्योटो नाम स्थान पर 11 दिसम्बर 1997 को विश्व जलवायु सम्मेलन हुआ, जिसमें 159 राष्ट्रो के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इसमें क्योटा प्रोटोकॉल स्थापित किया गया जिसमे वैश्विक स्तर पर कार्बन उत्सर्जन में कमी की बात की गई थी।

पर्यावरण संरक्षण में वैश्विक स्तर पर भारत भी आज भूमिका निभा सकता है तथा कई कार्यो में प्रगति दिखाई भी देती है। सरकार द्वारा पर्यावरण संरक्षण के लिए समय–समय पर भरसक प्रयास किये गये है और उसके लिए कई कानून बनाये गये है, जैसे– पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986 यह अधिनियम पर्यावरण के संरक्षण एवं इसमें सुधार के उद्देश्य से किया गया, इस अधिनियम के अन्तर्गत पर्यावरण की गुणवता के प्रति आवश्यक कदम उठाना पर्यावरण की गुणवता के मानक निर्धारित करना।

पर्यावरण सुरक्षा से सम्बन्धित अधिनियम के अन्तर्गत राज्य–सरकारो, अधिकारियो के काम में समन्वय स्थापित करना। इस अधिनियम के अलावा भी सरकार द्वारा अन्य ओर भी अधिनियम जारी किये गये है :–

वन संरक्षण अधिनियम – 1980

जल संरक्षण अधिनियम – 1974

वन्य जीव संरक्षण अधिनियम – 1972

वायु प्रदूषण रोकथाम अधिनियम – 1981

ये सभी अधिनियम पर्यावरण संरक्षण के लिए बनाये गये अगर इनका पूरी कठोरता से पालन किया जाए तो ही पर्यावरण प्रदूषण में परिवर्तन होगा तभी पर्यावरण शुद्ध व सांस लेने योग्य होगा।

वर्तमान समय में भारत सरकार द्वारा बहुत से प्रभावशाली कार्य पर्यावरण संरक्षण हेतु किये जा रहे है, जिनमें दिल्ली सरकार द्वारा प्रदूषण से लड़ने के लिए पांच सूत्रिय एजेन्डा तैयार किया तथा विशेष अभियान भी चलाये गये, इसके अलावा "Odd-even Number Traffic Contral" अभियान चलाया, जिससे प्रदूषण को नियन्त्रण में लाया जा सके।

राजधानी में प्रदूषण पर रोक लगाने के लिए दिल्ली सरकार ने 11 नवम्बर से 11 दिसम्बर तक ''एंटी ओपन बर्निंग' अभियान चलाएं गए। 10 विभागो की 550 टीमे इस पर नजर रखेगी, 304 टीमे दिन ओर 246 टीमे रात में गश्त करेगी, सरकार ने डीजल जेनरेटर व कोयला भटियो पर रोक लगाने व मेट्रो तथा बस के फेरे बढाने के निर्देश दिए है इनके सामान और भी राज्य सरकारों के प्रयास सराहनीय है परन्तु अभी और भी ज्यादा ध्यान इस ओर देना बाकी रह गया है। यही नही भारत सरकार द्वारा 2 अक्टूबर 2014 से स्वच्छ भारत अभियान चलाया गया है । यह राजघाट (नई दिल्ली) से शुरू किया तथा 2 अक्टूबर गाँधी जंयती के उपलक्ष में सफाई अभियान के रूप में मनाया जाता है।

भारत सरकार द्वारा यह बहुत अच्छा कार्य किया है, और देखा जाये तो हम पर्यावरण संरक्षण करके पर्यावरण की सुरक्षा नही करते बल्कि पर्यावरण द्वारा हमारी रक्षा की जाती है, क्योकि यदि हम पर्यावरण को शुद्ध

रखेगे तो हम मानव जाति को भी शुद्ध रखेगें जिससे मानव पर्यावरण में खुल के सांस ले सकेगा।

पर्यावरण संरक्षण के लिए पर्यावरण नीति 2006 के तहत अमूल्य प्राकृतिक एवं मानव निर्मित विरासत की रक्षा और संरक्षण करना, आजीविका आर्थिक विकास तथा मानव कल्याण की अवधारणा के लिए महत्वपूर्ण है। वर्तमान और भविष्य की पीढियो की जरूरतो और आकांक्षाओ को पूरा करने के लिए पर्यावरणीय ससाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग सुनिश्चत करना है। आर्थिक और समाजिक विकास के लिए नीतियो, योजनाओं कार्यक्रमो और परियोजनाओं में पर्यावरणीय चिंताओ को एक करना।

पर्यावरण सरंक्षण के लिए लाभ से बहु–हितकारी भागीदारी के माध्यम से स्थानीय समुदायो, सार्वजनिक एजेंसियो अकादमिक एवं अनुसंधान संस्था, निवेश को बहुपक्षीय तथा द्विपक्षीय विकास भागीदारो के मध्य पारस्परिक रूप से प्रोद्योगिक प्रबधन कौशल पारंपरिक ज्ञान तथा सामाजिक पूंजी संहित उच्च संसाधन के माध्यम से पर्यावरण को शुद्ध व सुरक्षित करना है। भारत मेंही नही अपितु विदेशो में पर्यावरण संरक्षण के लिए कई कदम उठाये जा रहे है।

पर्यावरण प्रदूषण या प्रकृति विनाश का भयावह रूप हम महामारी के रूप में देख चुके है जिसका सबसे बडा उदाहरण अभी वर्तमान में फैल रही बडी माहामारी कोविड के बारे में हम सब जानते है, तो पर्यावरण को सुरक्षित व शुद्ध बनाकर रखना हमारी जिम्मेदारी है।

प्रकृति को देवी समान मानने वाला देश,
नदियो को माता कहने वाला देश,
पहाड़–पर्वतो को पवित्र मानने वाला प्रदेश,
वन–जंगल, वृक्षों में परमात्मा स्वरूप मानने वाला देश,
आज इन सभी का दोहन कर रहा है।

भारत देश प्राचीन काल से ही पर्यावरण के प्रति जागरूकता में अग्रगामी रहा है तथा वर्तमान समय में भी भारत देश को आगे आकर विश्व का मार्दर्शन करना होगा। तभी भारत देश विश्वगुरू होने की बात सही स्थापित कर सकता है।

संदर्भ –

1. भारतीय अर्थव्यवस्था का विकास (कक्षा – 11 एन.सी.ई.आर.टी)
   राजस्थान राज्य पाठ्यपुस्तक मण्डल, जयपुर
2. भारत और विश्व के प्रसिद्ध पर्यावरणविद (वेब पेज विकिपिडिया)
3. पर्यावरण सरंक्षण में भारत का योगदान (वेब पेज विकिपिडिया)
4. पर्यावरण विधि (मदन लाल)
   विधि साहित्य प्रकाशन विधि और न्याय मंत्रालय भारत सरकार

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 25-28

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

स्वास्थ्य शिक्षा एवं पर्यावरण

–जसवीर सिंह

शोधार्थी, एस.के.डी. यूनिवर्सिटी, हनुमानगढ़, राजस्थान।

प्रस्तावना :–

जब से इस धरती पर जीवन उत्पन्न हुआ है, तब से पर्यावरण का अस्तित्व रहा है। हमारा जीवन पर्यावरण के कारण ही सुरक्षित है। विज्ञान ने हमारे जीवन को सुगम और आसान बना दिया है। पर्यावरण के कारण ही हमारे जीवन को आधार मिला है, जबकि पर्यावरण, प्राकृतिक और मूल वस्तुओं पर आधारित है और विज्ञान के कारण मनुष्य पर्यावरण की प्राकृतिकता से दूर होता जा रहा है। विज्ञान आधुनिक युग की क्रांति है और आधुनिक युग की देन है। जब से इस पृथ्वी पर जीवन उत्पन्न हुआ है तब से पर्यावरण का हो रहा है। पर्यावरण के कारण ही जीवन सुरक्षित है। विज्ञान ने हमारे जीवन यापन को बड़ा ही आसान और शुगम बना दिया है। विज्ञान का पर्यावरण के संबंध में अगर विवेचना करें तो पाएंगे कि विज्ञान से पर्यावरण को लाभ और हानि दोनों समान स्तर पर हुई है। विज्ञान ने ऐसे अनेक उत्पादों का निर्माण किया है, जिन से पर्यावरण को हानि हुई है। जितना विज्ञान उन्नति करता गया मानव पर्यावरण से दूर होता गया है। वह अपने पर्यावरण को नुकसान पहुंचाता गया है।

विशेष शब्द – पर्यावरण, स्वास्थ्य और शिक्षा।

विज्ञान मौलिकता का परिचायक है। विज्ञान बनावटी व कृत्रिम चीजों पर आधारित है, जबकि पर्यावरण प्राकृतिक और मूल वस्तुओं पर आधारित है। विज्ञान में तकनीक और शोध के क्षेत्र में उन्नति के कई संदर्भ में लाभ पहुंचा है। विज्ञानियों ने लगातार पौधों की प्रजातियों पर नए नए शोध किए हैं तथा उनको विकसित किए हैं जिन प्रजातियों को बचाया गया है, उनका पूर्ण विकास हुआ है। लेकिन कुल मिलाकर देखा जाए तो विज्ञान के कारण पर्यावरण का नुकसान अधिक हुआ है लाभ कम है। क्योंकि मनुष्य विज्ञान की प्रगति के कारण निरंतर भौतिकवादी होता गया है और प्रकृति से दूर होता गया है। इस कारण पर्यावरण को नुकसान पहुंचना शुरू हो गया है, इसलिए आवश्यक है कि हम विज्ञान और पर्यावरण के बीच संतुलन बना सके।

विज्ञान के सकारात्मक पक्षों को स्वीकार करें और पर्यावरण से जुड़े रहें। प्रकृति के निकट अधिक से अधिक रहें और अपने पर्यावरण का बचाव करें। जब तक हमारा पर्यावरण सुरक्षित है हम भी सुरक्षित रहेंगे। यदि हमारा पर्यावरण नष्ट हो गया है तो कोई भी विज्ञान हमें नष्ट होने से नहीं बचा सकता। स्वास्थ्य जीवन की आधारशिला है। स्वास्थ्य मनुष्य के जीवन में सुख समृद्धि प्रदान कर सकता है। इसलिए स्वास्थ्य को जीवन के समस्त सुखों का आधार कहा जाता है। रुपया–पैसा हाथ से निकल जाए तो उन्हें प्राप्त किया जा सकता है, परंतु एक बार स्वास्थ्य बिगड़ जाए तो उसे अपनी स्थिति में लाना मुश्किल हो जाता है, इसलिए समझदार लोग अपने स्वास्थ्य की रक्षा बड़े मनोयोग से करते हैं। हमारे देश में तो धर्म का साधन शरीर को ही माना जाता है। कहा गया है कि

– ''शरीर माध खलु धर्म साधन।'' स्वास्थ्य शिक्षा का मुख्य उद्देश्य लोगों को स्वास्थ्य से संबंधित जानकारी देना, शिक्षित करना ही स्वास्थ्य शिक्षा है। जिससे विशेष व योग्य व्यक्तियों की सहायता से जनता को स्वास्थ्य संबंधी ज्ञान और संक्रामक रोगों एवं विशिष्ट व्याधियों से बचाने के उपायों का ज्ञान कराया जाता है।

जीवन में स्वास्थ्य की महत्ता को देखते हुए 1958 में विद्यालय स्वास्थ्य शिक्षा विभाग की स्थापना हुई। इनका उद्देश्य युवा पीढ़ी के स्वास्थ्य शिक्षा संबंधी कार्यक्रमों को सशक्त करना था। वर्ष 2005 में स्वास्थ्य शिक्षा सेवा प्रभाग के कार्यों और गतिविधियों का विस्तार किया गया। जिनका कार्य देश के विद्यालयों, महाविद्यालयों व विश्वविद्यालयों में किशोरों के लिए स्वास्थ्य संबंधी योजनाओं का निर्माण करना था। इसके लिए स्वास्थ्य विज्ञान को एक अलग विषय के रूप में सम्मिलित किया गया। आज के आधुनिक युग में स्वास्थ्य संबंधी जानकारी होना अति आवश्यक है। विकासशील देशों को विशेष रूप से स्वास्थ्य शिक्षा एवं शारीरिक शिक्षा की सख्त आवश्यकता होती है। शारीरिकर शिक्षा व स्वास्थ्य शिक्षा न केवल खेल और स्वास्थ्य के बारे में बताता है, बल्कि उनकी आदतों और जीने के तरीकों को भी आकार प्रदान करता है। आजकल स्वास्थ्य व शारीरिक शिक्षा बहुत ही महत्वपूर्ण हो गई है। स्वास्थ्य शिक्षा न केवल स्वास्थ्य पर ध्यान केंद्रित करता है बल्कि व्यक्ति का मानसिक, सामाजिक, सावेगिक आदि का विकास करता है। इसके साथ–साथ यह मानसिक बीमारियों एवं युवा कल्याण आदि कई मुद्दों को भी आकार प्रदान करता है। इसमें लोगों को अनेक प्रकार से खेलों तथा स्वास्थ्य संबंधी विचारों को प्रस्तुत किया जाता है।

हमारे चारों तरफ का यह आवरण जो हमें सफलता पूर्वक जीवन यापन करने में हमारी सहायता करता है, वह वहां का पर्यावरण कहलाता है। इससे हमें लगभग सभी प्रकार के संसाधन उपलब्ध हो जाते हैं। जो हमें जीवन यापन करने के लिए काफी होते हैं। पर्यावरण से हमें वायु, जल, खाद्य पदार्थ, अनुकूल वातावरण प्राप्त हो जाते हैं। हमने हमेशा से पर्यावरण के संसाधनों का भरपूर आनंद उठाया है। हमें विकसित करने में हमारे पर्यावरण का अहम रोल रहा है। पृथ्वी पर जीवन बनाए रखने के लिए हमें पर्यावरण के वास्तविकता को बनाए रखना होगा। पूरे ब्रह्मांड में पृथ्वी ऐसी जगह है जहां पर जीवन संभव है। शारीरिक शिक्षा में स्वास्थ्य संबंधी बातों का सर्जन होता है। यह सर्वविदित बात है कि मानव की विभिन्न क्रियाकलापों के कारण भूमि, वायु, जल और उस में निवास करने वाले जीवो के लिए खतरा उत्पन्न हो रहा है। भारत जैसे विकासशील देशों में भोजन और हवा में उत्पन्न होने के कारण जैविक प्रदूषण स्वास्थ्य के लिए एक भारी समस्या बन गया है। विकासशील योजनाएं प्रदूषण का कारण बनती जा रही है। इसका परिणाम हमारे स्वास्थ्य पर पड़ता है। यह प्रभाव अनुवांशिक व्यवहारिक तथा पर्यावरणिक हो सकते हैं। अनुवांशिक प्रभाव किसी भी जीव की शारीरिक और शरीर संबंधी विशेषताओं को निर्धारित करते हैं। पैतृक असमानताएं ही अनुवांशिक रोग के रूप में माता–पिता से बच्चों में स्थानांतरित हो जाती हैं। सभी प्रकार के रोग जैसे एलर्जी, ब्लड–प्रेशर, और मधुमेह आदि पूर्ण रूप से जीन संबंध नहीं है, फिर भी इन जीनो की वातावरण संबंधी बीमारियां हो जाती हैं। कुछ बीमारियां में पोषण की कमी, तनाव, दबाव संवेग, हार्मोन तथा अन्य पर्यावरणीय व्यवहार के कारण ही आगे से आगे बढ़ जाती हैं। कुछ लोग ऐसे होते हैं जो आने वाली पीढ़ी को लग जाते हैं जैसे इत्यादि। इसके साथ–साथ व्यवहारिक प्रभाव में नशा करना, दवाइयों का प्रयोग के कारण स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं।

पर्यावरणीय प्रभाव के अनेक घटक हमारे स्वास्थ्य पर प्रभाव छोड़ते हैं। इनको भौतिक, रासायनिक, जैविक,

सामाजिक और मनोवैज्ञानिक समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है। ऐसी इलाकों की आधारभूत सुविधाएं और कूड़े के अनुचित संग्रह परिवहन उपचार और निपटान की सुविधाओं की कमी के कारण प्रदूषण बढ़ता रहता है और इससे बड़ा भारी संकट खड़ा हो जाता है।

आजकल जलजंय रोग जैसे त्वचा व आंखों की बीमारियां फैलते हैं। रोगों के कारण पेट के हुकवार्म तथा गोल कर्मी भी पैदा हो जाते हैं। शरीर की कोशिकाओं में होने वाले संबंधित रोगों का समूह कैंसर कहलाता है। सामान्य रूप से शरीर के विकास वृद्धि और क्षति ग्रस्त कोशिकाओं को ठीक करने के लिए आवश्यकता अनुसार एक कोशिका अनेक कोशिकाओं को उत्पन्न कर सकता है। कोशिकाओं का निरंतर विभाजन और वृद्धि व्यक्ति को सामान्य एवं स्वस्थ रखती है। उच्च स्तर का और विकिरण जैसे– विकिरण उपचार, एक्स–रे और रेडियो एक्टिव पदार्थ कायिक कोशिकाओं को हानि पहुंचाते हैं। इसके कारण ल्युकेमिया तथा स्तन कैंसर हो सकता है।

वातावरण में कीटनाशकों का निरंतर पाए जाने से खतरा बना ही रहता है। अब इन कीटनाशकों पर प्रयोग सीमित कर दिया गया है। जैविक खेती की विधि अपनाकर हम अपने आपको तथा समाज को सभी प्रकार के रोगों से बचा सकते हैं।

अधिकतर लोग अपने दिल का अधिकतर काम अपने कार्यस्थल पर करते हैं। बहुत से व्यक्ति अनुकूल परिस्थितियों में अच्छा कार्य कर लेते हैं। परंतु कुछ के लिए कार्यस्थल स्वास्थ्य बाधा बन जाता है। कार्य के कारण सांस से संबंधित रोग कैंसर, हृदय रोग मानसिक और स्नायु तंत्र संबंधी रोग आदि पैदा हो जाते हैं।

पर्यावरण के साथ–साथ स्वास्थ्य शिक्षा की जानकारी अहम रहती है। स्वास्थ्य संबंधी आदतों का विकास करना, इसका प्रमुख उद्देश्य माना गया है। किसी भी विषय का ज्ञान जब तक व्यर्थ और तब तक उस विषय को पूर्णतया लागू न किया जाए। इसके अंतर्गत विद्यार्थियों को व्यक्तिगत सफाई के विषय में जानकारी प्रदान की जाती है। स्वास्थ्य शिक्षा के द्वारा प्राथमिक चिकित्सा की जानकारी उपलब्ध करा सकते हैं इसके अंतर्गत विद्यार्थियों को प्राथमिक चिकित्सा के सिद्धांतों के साथ–साथ अनेक प्रकार के पहलुओं जैसे जलना, डूबना, सांप का काटना तथा अनेक प्रकार की दुर्घटना की प्राथमिक चिकित्सा की जानकारी दी जा सकती है। इस प्रकार प्राथमिक शिक्षा को ज्ञान हर प्रकार की परिस्थिति में लाभकारी सिद्ध होता है। इसके साथ–साथ अनेक प्रकार के रोगों के बारे में जानकारी प्रदान करता है। इसमें मुख्य रूप के बारे में पता चलता है। इससे हम अपने आसपास परिवार जानकार लोगों को बीमार होने से बचा सकते हैं।

किसी ने सही कहा है कि स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का निवास होता है। इसके हिसाब से प्रत्येक व्यक्ति विशेष को स्वस्थ रखना चाहिए। एक स्वस्थ व्यक्ति ही देश की हर क्रियाकलाप में अहम भागीदारी दे सकता है। और अपने आप को प्रगति के रास्ते पर ले जा सकता है स्वास्थ्य शिक्षा विद्यार्थी को स्वास्थ्य संबंधी मौलिक सिद्धांतों एवं नियमों का ज्ञान करवाता है। जिससे व्यक्ति सफलतापूर्वक जीवन व्यतीत कर सकता है। स्वास्थ्य शिक्षा के मुख्य प्रकार है, जैसे– स्वास्थ्य शिक्षक छात्रों को स्वास्थ्य शिक्षा विषय के अंतर्गत विभिन्न पुस्तकों, चित्रों, मॉडल और फिल्मों के द्वारा बीमारियों से बचाने की जानकारी दी जाती है। स्वास्थ्य शिक्षा के माध्यम से हम स्वास्थ्य संबंधी आदतों का पूर्ण विकास कर सकते हैं। हमें प्रातः कालीन जल्दी उठना, हाथों, बालों की सफाई तथा अपने आसपास की सफाई करना स्वास्थ्य के अंतर्गत आता है। स्वास्थ्य शिक्षा एवं पर्यावरण के माध्यम से हमें सभी प्रकार के शरीर संबंधी जानकारी का पता चलता है। इससे हमें शरीर में उत्पन्न अनेक प्रकार की विकृतियों का पता

चलता है। जैसे हकलाना, तुतलाना, आत्मविश्वास की कमी होना इत्यादि। सभी प्रकार की विकृतियों को दूर कर सकते हैं। स्वास्थ्य शिक्षा एक अच्छे मानवीय संबंध स्थापित करने में भी हमारी सहायता करती है। शिक्षकों की उचित शिक्षा निर्देश और स्वास्थ्य शिक्षा का ज्ञान विद्यार्थी में सेवा भावना का संचार करता है।

निष्कर्ष :-

इस प्रकार देश में स्वास्थ्य शिक्षा की अनिवार्यता विद्यार्थियों के लिए न केवल स्वस्थ रखने में सहायक सिद्ध होगी, बल्कि एक पूर्ण शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, आध्यात्मिक और सामाजिक स्वास्थ्य को भी सफल बनाती है। अच्छा स्वास्थ्य केवल रोग या दुर्बलता की अनुपस्थिति नहीं बल्कि एक पूर्ण शारीरिक, मानसिक और सामाजिक खुशहाली का प्रतीक है। जब देश के लोग स्वस्थ होंगे तो उसकी समृद्धि और विकास में किसी प्रकार के संदेह की कोई संभावना नहीं रहेगी। अतः हम स्वास्थ्य शिक्षा व पर्यावरण के माध्यम से देश में स्वस्थ वातावरण का निर्माण कर सकते हैं। जिसने देश उन्नति के पथ पर जा सकता है और एक सशक्त भारत देश का निर्माण किया जा सकता है।

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 29-33

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

पर्यावरण प्रदूषण में कृषि आधुनिकीकरण की भूमिका : एक अध्ययन

-Jitender

Research Scholar, Tantia University Sriganganagar

शोध-आलेख सार (Abstract) –

विश्व स्तर पर आर्थिक विकास की तीव्रता ने कृषि क्षेत्र को अत्यधिक प्रभावित किया है विशेषकर भारत जैसे कृषि प्रधान देश की अर्थव्यवस्था एवं आर्थिक विकास को मजबूत करने के लिए आधुनिकीकरण की परम आवश्यकता है कृषि के क्षेत्र में आधुनिकीकरण की विचारधारा संयुक्त राज्यअमेरिका से प्रसारित होती हुई भारत देश में पहुंची। भारत में 1960 के दशक में आधुनिकीकरण का जन्म हुआ और जिसे हरित क्रांति के नाम से जाना गया। वर्तमान समय में कृषि में आधुनिकीकरण का समावेश उच्चतम स्तर पर पहुंच चुकाहै जिसके फलस्वरुप कृषि उत्पादन में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है परंतु तीव्रकृषि आधुनिकीकरण के कारण पर्यावरण प्रदूषण जैसी भयानक समस्या का उदय हो गया है। वर्तमान समय की ज्वलंत एवं अत्यंत हानिकारक समस्या पर्यावरण प्रदूषण की वृद्धि में कृषि आधुनिकीकरण की भी अहम भूमिका है कृषि आधुनिकीकरण ने प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से पर्यावरण को प्रदूषित करने का काम किया है।

कृषि में आधुनिकीकरण की विचारधारा के समावेश के परिणामस्वरूप कृषि में अत्यधिक रासायनिक उर्वरकों व कीटनाशकों, नई तकनीकों, मशीनीकरण का अत्यधिक प्रयोग किया जाने लगा। जिससे कृषि उत्पादन में आशीतन वृद्धि हुई है परंतु इनकी अत्यधिक उपयोगिता से मृदा प्रदूषण, वायु प्रदूषण, वन विनाश जैसी भयानक समस्या का भी उदय हुआ है। मनुष्य ने अपने आर्थिक विकास के लिए प्राकृतिक संपदा के अविवेक पूर्ण दोहन से विश्व पर्यावरण को जर्जर बना दिया है और कृषि फसलों के वितरण व उत्पादन में अत्यधिक वृद्धि करने की लालसा ने मनुष्य को पर्यावरण प्रदूषण का प्रमुख कारक बना दिया है प्रस्तुत शोध पत्र में मैंने कृषि में आधुनिकीकरण की सक्रियता के परिणामस्वरूप पर्यावरण में आए परिवर्तन व बढ़ते प्रदूषण पर प्रकाश डाला है तथा कृषि आधुनिकीकरण एवं पर्यावरण प्रदूषण की स्थिति को गहराई से स्पष्ट करने के लिए विभिन्न तथ्यों व आंकड़ों का अध्ययन किया गया है। मनुष्य की भौतिक प्रगति एवं पारिस्थिति की असंतुलन आधुनिक युग की देन है जो कि जलवायु परिवर्तन का प्रमुख आधार है। वर्तमान समय में मानव को "वेदों की ओर लौटो' नामक विषय को प्राथमिकता देनी चाहिए। ताकि पर्यावरण प्रदूषण का वैदिक सिद्धांतों से समाधान हो सके।

परिचय (Introduction) –

वर्तमान समय में कृषि आधुनिकीकरण एवं पर्यावरण प्रदूषण का विस्तृत अध्ययन विश्व स्तर पर एक ज्वलंत

विषय बना हुआ है क्योंकि इन दोनों ही विधाओं में गहरा संबंध पाया जाता है। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में तो कृषि प्रत्यक्ष रूप से पर्यावरण तंत्र को प्रभावित करती है क्योंकि भारत में तो कृषि कार्य प्राचीन काल से ही किया जा रहा है परंतु प्राचीन काल में मानव एवं पर्यावरण का गहरा संबंध पाया जाता था मनुष्य के किसी भी क्रिया–कलापों के द्वारा पर्यावरण तंत्र को आघात नहीं पहुंचता था। अपितु मानव के द्वारा पर्यावरण को संरक्षित किया जाता था। पर्यावरण तंत्र पर कुठाराघात तो तब हुआ जब कृषि एवं औद्योगिक करण में तीव्र गति से वृद्धि एवं विकास आरंभ हुआ। कृषि में आधुनिकीकरण की विचारधारा का जन्म संयुक्त राज्य अमेरिका में हुआ परंतु विश्व स्तर पर बढ़ती जनसंख्या की खाद्य आपूर्ति एवं मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कृषि में आधुनिकीकरण की विचारधारा को अत्यधिक बल मिला और अति शीघ्र ही इस विचारधारा का प्रसार समस्त विश्व में हुआ। वहीं दूसरी तरफ मानव समुदाय परंपरागत एवं पुरातन कृषि व्यवस्था से आहत हो चुका था और आधुनिक मानव जीवन निर्वाह कृषि से असंतुष्ट था और कृषि से अत्यधिक आर्थिक आय प्राप्त करने के लिए व्यापारिक कृषि एवं फसलों की ओर अग्रसर हुआ। परिणाम स्वरुप कृषि क्षेत्र में तीव्र गति से वितरण व विस्तार हुआ तथा मानव की अत्यधिक आर्थिक लाभ की लालसा ने पर्यावरण तंत्र में हस्तक्षेप आरंभ कर दिया। उसी के परिणाम स्वरूप आज संपूर्ण विश्व पर्यावरण प्रदूषण जैसी समस्या से ग्रस्त है और यह समस्या कोई प्रकृति प्रदत नहीं है अपितु इस समस्या का उदय एवं प्रसार स्वयं मानवीय क्रियाओं के द्वारा हुआ है परंतु इसका नकारात्मक प्रभाव केवल मानव पर ना होकर संपूर्ण जीव–जंतु व पारिस्थितिकी तंत्र पर घटित हो रहा है जिससे पारिस्थिति की असंतुलन जैसी गंभीर समस्या का सामना करना पड़ रहा है।

विश्व स्तर पर आर्थिक विकास की अंधाधुंध होड़ के कारण पर्यावरण तंत्र जर्जर बना हुआ है तथा मानव के द्वारा अत्यधिक नगरीकरण एवं औद्योगिकीकरण के कारण पर्यावरण प्रदूषण गंभीर स्थिति में पहुंच चुका है जिस कारण समस्त मानव जगत का अस्तित्व खतरे में है। इस प्रकार मनुष्य को समय रहते कृषि में आधुनिकीकरण एवं विकास के स्तर को सीमित एवं नियंत्रित करना आवश्यक है। मानव ने कृषि क्षेत्र के अत्यधिक विस्तार के लिए संपूर्ण पर्यावरणीय वनस्पति एवं वन संपदा का समूल विनाश कर दिया है तथा कृषि फसलों का अत्यधिक उत्पादन बढ़ाने के लिए रसायनिक उर्वरकों व कीटनाशक दवाओं का अधिक प्रयोग करके मृदा प्रदूषण एवं वायु प्रदूषण जैसी भयानक समस्याओं को भी प्रसारित कर रहा है। मनुष्य कृषि में आधुनिक कारकों की सहभागिता से फसली उत्पादन में तीव्र वृद्धि हासिल कर चुका है तथा आर्थिक विकास को भी बल प्रदान किया है इस प्रकार कृषि में आधुनिकीकरण व विकास के द्वारा विश्व की खाद्य समस्या एवं अत्यधिक आर्थिक लाभ की समस्या का समाधान तो हो गया है परंतु इससे कई भयावह पर्यावरणीय समस्याएं उत्पन्न हो गई है जो कि आगे चलकर विकराल रूप धारण कर सकती हैं इस प्रकार मनुष्य को समय रहते इन समस्याओं के प्रति सजग एवं सचेत होने की आवश्यकता है।

कृषि विकास व पर्यावरण प्रदूषण (Agriculture Development and Environment Pollution) –

पर्यावरण प्रदूषण से हमारा तात्पर्य है कि मानवीय कारणों द्वारा स्थानीय स्तर पर पर्यावरण की गुणवत्ता में हास्य व क्षति होना है। वर्तमान समय में मानव जनित कारणों से स्थानीय, प्रादेशिक एवं विश्व स्तरपर पर्यावरण की गुणवत्ता में गिरावट दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। सामान्य शब्दों में कहा जाए तो पर्यावरण प्रदूषण मनुष्यों के कार्यों द्वारा ऊर्जा प्रतिरूप, विकिरण प्रतिरूप, भौतिक एवं रासायनिक संगठन तथा जीवो की बहुलता में किए

गए परिवर्तनों से उत्पन्न प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभावों के कारण आसपास के पर्यावरण में अवांछित एवं प्रतिकूल परिवर्तनों को प्रदूषण की संज्ञा दी जाती है। मनुष्य के दिन प्रतिदिन के क्रिया–कलापों से उत्पन्न अपशिष्ट उत्पादों के रूप में पदार्थों एवं ऊर्जा के विमोचन से प्राकृतिक पर्यावरण में होने वाले हानिकारक परिवर्तनों को प्रदूषण कहा जाता है। आधुनिक युग का मानव अत्यधिक प्रगति एवं आर्थिक विकास की लालसा के अनुरूप प्राकृतिक संसाधनों का तीव्र विदोहन तथा अविवेकपूर्ण उपयोग कर रहा है जिसके कारण पर्यावरण को निरंतर क्षति पहुंच रही है और मनुष्य के सामने पर्यावरण असंतुलन की समस्या भी उदित हो रही है।

प्रोफेसर सविंद्र सिंह के अनुसार "पर्यावरण प्रदूषण उसे कहते हैं जब मनुष्य के उचित या अनुचित कार्यों द्वारा प्राकृतिक पारिस्थिति की तंत्र में इतना अधिक परिवर्तन हो जाता है कि वह उसकी (परिस्थितिकी तंत्र) सहन–शक्ति से अधिक हो जाता है। परिणाम स्वरूप पर्यावरण की गुणवत्ता में आवश्यकता से अधिक क्षति होने से मानव समाज पर दूरगामी हानिकारक प्रभाव पड़ने लगता है। इस प्रकार पर्यावरण प्रदूषण की उत्पत्ति एवं बढ़ोतरी में मानवीय कार्यों को सर्वोपरि कहा जा सकता है समय रहते मानव को पर्यावरण के प्रति जागरूक एवं सचेत होना आवश्यक है।

वर्तमान समय में कृषि का विस्तार विश्व के लगभग समस्त देशों में विस्तृत है और कृषि का स्वरूप परंपरागत स्वरूप से परिवर्तित होकर आधुनिक वैज्ञानिक कृषि प्रणाली के अंतर्गत आ चुका है। जिस कारण कृषि में आधुनिक कारकों की सहभागिता दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। जिसका स्पष्ट प्रभाव कृषि उत्पादन एवं वितरण पर देखा जा सकता है। वैज्ञानिक कृषि प्रणाली के अंतर्गत कृषको द्वारा कृषिमें उच्च लागत निवेश के फलस्वरुप अधिक आर्थिक लाभ प्राप्त होता है जिससे कृषि प्रधान क्षेत्रों में विकास की धुरी को बल मिला है। विशेषकर भारत जैसे कृषि प्रधान देश में अर्थव्यवस्था को मजबूत करने के लिए कृषि में वैज्ञानिक पद्धति का समावेश अति आवश्यक होता है। भारत की कृषि में आधुनिकीकरण का सूत्रधार 1960 की हरित क्रांति के फलस्वरूप हुआ। और धीरे–धीरे यह हरित क्रांति पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश आदि राज्यों से बाहर निकलकर संपूर्ण देश में प्रसारित हो गई तथा प्रमुख खाद्यान्न फसलों (चावल, गेहूं) के अतिरिक्त व्यापारिक फसलों (कपास, सरसों) में भी यह क्रांति सफल प्रतीत हुई। परंतु वर्तमान समय में कृषि में आधुनिकीकरण के अत्यधिक समावेश के कारण पर्यावरण को क्षति पहुंच रही है। विशेषकर मृदा प्रदूषण, वायु प्रदूषण, वन विनाश जैसी समस्याएं उत्पन्न हुई है। तीव्र आधुनिकीकरण के अंतर्गत कृषि में रासायनिक उर्वरकों व कीटनाशकों, ईंधन वाहनों, कृषि यंत्रों व वृक्षों की सफाई, अति सिंचाई आदि की कृषि में उपयोगिता अत्यधिक होगई है। परिणाम स्वरूप पर्यावरण प्रदूषण जैसी भयानक समस्या उत्पन्न हो गई है।

वन विनाश :–

वर्तमान समय में वन संपदा एवं प्राकृतिक वनस्पति अत्यंत नाजुक स्थिति में है। भारत देश के अंतर्गत भी पिछले कुछ वर्षों से कृषि का विकास व आधुनिकीकरण के तीव्र प्रसार के कारण वन विनाश तीव्र गति से हो रहा है। संपूर्ण देश के 20.4 प्रतिशत भू भाग पर वनों का आवरण रहा है परंतु आरक्षित वनों का विस्तार तो मात्र 6. 08 प्रतिशत भू भाग पर ही है। मानव समुदाय ने कृषि क्षेत्र में विस्तार के लिए अत्यधिक वनों एवं वृक्षों का सफाया कर दिया है। जिसके कारण पारिस्थितिकी तंत्र का संतुलन बिगड़ गया है निकट भविष्य में वनों की स्थिति को सुधारना अति आवश्यक है।

मृदा प्रदूषण :–

कृषकों द्वारा अत्यधिक कृषि उत्पादन बढ़ाने एवं प्राप्तकरने के लिए मृदा में रासायनिक उर्वरकों व कीटनाशकों का छिड़काव बड़े पैमाने पर किया जाने लगा। परिणाम स्वरुप मृदा में लवणीय व क्षारीय तत्वों की अधिकता होने लगी है जिससे कुछ समय बाद मृदा धीरे–धीरे अन उर्वर होती जा रही है और कुछ क्षेत्रों में अति सिंचाई के कारण भी मृदा प्रदूषण की समस्या उत्पन्न हो गई है। आज भारत में मृदा प्रदूषण की समस्या गंभीर रूप धारण कर रही है।

वायु प्रदूषण :–

कृषि में आधुनिकीकरण के कारण फसलों में जैविक कीटनाशकों की जगह रासायनिक कीटनाशक दवाओं का छिड़काव बड़े पैमाने पर किया जाता हैं। जिसके कारण हानिकारक कीटों के साथ–साथ आसपास के वृक्षों का विनाश व शुद्ध वायु भी दूषित होती जा रही है जिसके साथ ही वायु प्रदूषण का सबसे बड़ा व हानिकारक स्त्रोत चावल के अपशिष्ट भाग (पराली) को जलाने से उत्पन्न कार्बन मोनोऑक्साइड का सांद्रण है। यह गैस मानव स्वास्थ्य के लिए सबसे हानिकारक होती है। वर्तमान समय में वायु प्रदूषण अत्यंत हानिकारक विनाशक स्थिति में पहुंच चुका है। जिसका प्रभाव मानव समुदाय के साथ–साथ विभिन्न जीव–जंतुओं व प्राकृतिक वनस्पति पर दिखाई पड़ता है।

निष्कर्ष (Conclusion) :-

इस प्रकार कह सकते हैं कि पर्यावरण प्रदूषण की बढ़ोतरी में कृषि आधुनिकीकरण की भी अहम भूमिका है। विश्व स्तर पर कृषि में हुए नवीनतम आविष्कारों व सुधारों के कारण कृषि एक प्रमुख आर्थिक व्यवसाय के रूप में उभरा है तथा भारत जैसे कृषि प्रधान देश की अर्थव्यवस्था की मजबूती को आधार प्रदान किया है। इसी कारण कृषि में विकास करना आवश्यक है परंतु यह भी ध्यान देने योग्य है कि कृषि आधुनिकीकरण एवं विकास के चलते पर्यावरण प्रदूषण इस सीमा तक न बढ़ जाए कि समाज का अस्तित्व ही खतरे में पड़ जाए। पर्यावरण प्रदूषण कोई प्रकृति प्रदत्त न होकर मानव के क्रियाकलापों द्वारा उत्पन्न समस्या है। इसी कारण मानव समुदाय को अपने आर्थिक व अवांछित कार्यों को नियंत्रित करने व पर्यावरण प्रदूषण के स्तर को कम करने की प्राथमिकता होनी चाहिए। सर्वप्रथम मनुष्य को अधिक से अधिक वृक्षारोपण करना, रासायनिक उर्वरकों का नियंत्रित उपयोग, फसली अपशिष्ट (पराली) को वैज्ञानिक तकनीकों के द्वारा जैविक खाद में परिवर्तित करना जैसे कार्यों को प्राथमिकता देनी चाहिए। ताकि मानव का प्रकृति के साथ संतुलित तालमेल बना रह सके तथा पर्यावरण प्रदूषण भी संतुलित अवस्था में रह सके।

Reference :–

1. Singh, Jasvir (1976): 'An Agriculture Geography of Haryana" Vishal Publication, University Campus Kurukshetra.
2. Singh, Kashi Nath (1976) : 'Modernization of Agriculture" (A Case Study in Eastern U.P.) Heritage Publisher, New Delhi.
3. Gurjar, R.K. (1987) 'Irrigation for Agriculture Modernization"Scientific Publisher Jodhpur.

4. Kumar, Ranvir (2000) 'Reclamation of Water Logged and Saline Lands through Drainage in Haryana"CCS Haryana Agriculture University Hisar.
5. Singh, Savinder (2005) 'Environment Geography" Prayag Pustak Bhawan Allahabad.
6. Singh, G.B. (2000) 'Green Revolution in India: Gains and Pains"Annals of National Association of Geographers, India XX(7).
7. Robinson, D., and Kellow, A.(2001) 'Globalization and the Environment : Risk Assessment and the WTO, Edward Elgar, Cheltenham.
8. Adams, W.M. (2001) 'Green Development : environment and sustainability in the third world", London, Routledge.
9. Detwyler, T.R. (1971) 'Man's Impact on Environment", McGraw&Hill, New York.
10. Dikshit, R.D. (1984) 'Geography and teaching of the environment" Geo.Dept.,Poona University, pp.68-70.

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 34-39

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

पर्यावरण प्रदूषण राजनीतिक विमर्श

–श्रीमती कांता वर्मा

सहायक प्राध्यापक, राजनीतिक विज्ञान, शासकीय महाविद्यालय, लांजी, जिला बालाघाट, मध्य प्रदेश

सारांश :–

पर्यावरण संकट वर्तमान समय का सबसे बड़ा संकट है। यह उतना ही महत्वपूर्ण है, जितना कि मनुष्य का अस्तित्व और पृथ्वी पर जीवन की निरंतरता। दुनिया की अधिकांष सरकारें इसे कम करने के लिए क्रिया रूप से काम कर ही है। आम लोग इस बात से चिंतित है कि, वे जलवायु परिवर्तन के रूप में कई समस्याओं का सामना कर रहे हैं, जैसे शहरों मे घातक प्रदूषण की प्रबलता, जल–चक्र का विघटन, पीने के पानी की, मिट्टी की उर्वरता में कमी, समुद्र जल में वृद्धि, कई प्रजातियों का विलुप्त होना ठोस अपषिष्ट प्रबंधन आदि।

पर्यावरण क्षरण के कारण प्रतिवर्ष 60 लाख से ज्यादा लोग बीमार मृत्यु होती है। पारिस्थितिकी तंत्र को नुकसान पहुंचाने वाली जीवन पद्धति की वजह से हमें कई समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है, लेकिन पर्यावरण सुधार शायद ही हमारी राजनीतिक बहसों का हिस्सा बनता हो। हमारे पास जाति, पंथ, धर्मस्थलों और सांस्कृतिक पहचान के बारे में राजनीति करने का समय है लेकिन पर्यावरणीय सुधारों के संबंध में कोई राजनीतिक सक्रियता नहीं है। अभी तक पर्यावरण प्रबंधन का कार्य शासकीय स्तर पर होता रहा है, जिसे कानून लागू करके पूरा किया जाता रहा। किंतु यह देखने में आया है कि लोग कानून की बाध्यता को भी नहीं मानते हैं। प्रायः राजनीति कानूनी कार्यवाही में हस्तक्षेप करती है।

Keywords :- पर्यावरण, राजनीतिक परिवर्तन।

पर्यावरण प्रदूषण :–

पर्यावरण के अनेक घटक हैं, इन सभी घटकों के बीच परस्पर क्रिया–प्रतिक्रियाओं द्वारा संतुलन स्थापित रहता है। उस पर्यावरण में ही जीव अपना जीवन चक्र पूर्ण करता है, लेकिन यह संतुलन बिगड़नेपर जीवों को अपना जीवन–चक्र चलाने में अत्यधिक कठिनाई होने लगती है। अतः इस प्रकार के किसी घटक को वातावरण में कम या अधिक कर देना अथवा किसी अन्यप्रकार के पदार्थों का पर्यावरण में प्रवेष आदि ही पर्यावरण प्रदूषण है। ''भौतिक एवं रासायनिक परिवर्तन जो जीवों के जीवन चक्र को अवांछित रूप से प्रभावित करते हैं, प्रदूषण कहलाता है।

प्रदूषण के कारण :–

मृदा प्रदूषण –

असतत् कृषि गतिविधियां, औद्योगिक कचरा, लैंडफिल से होने वाला रिसाव, घरेलू कूड़ा–करकट, खुली

जगह पर कूडा फेंकना, पॉलीथीन की थैलियां, प्लास्टिक के डिब्बे, अनियंत्रित पषुचारण जिससे मृदा प्रदूषण होता है।

वायु प्रदूषण –

कार्बन–डाई–ऑक्साईड, कार्बन–मोनो–ऑक्साइड, सल्फर–डाई–ऑक्साईड, नाइट्रोजन, फ्लोरीन, सीसा, अमोनिया, कैडमियम, धूल आदि वायु प्रदूषण है। प्रदूषित वायु के कारण पौधों में प्रकाष संष्लेषण क्रिया प्रभावित होती है। मानव श्वसन तंत्र प्रभावित होता है। दमा, ब्रोंकाइटिस, सिरदर्द, फेफड़े का कैंसर, खांसी, आंखों में जलन, गले का दर्द, निमोनिया, हृदय रोग, उल्टी और जुकाम आदि रोग होते हैं।

वाहनों में जीवाष्म ईंधन का दहन, फैक्ट्री का धुंआ, रेफ्रीजरेटर, वातानुकूलन आदि द्वारा निकलने वाली गैसें, कृषि में कीटनाषकों का प्रयोग, स्प्रे, पेंट का प्रयोग।

जनसंख्या वृद्धि –

जनसंख्या वृद्धि पर्यावरण प्रदूषण का एक मुख्य कारण है। क्योंकि इससे प्रदूषण और प्रदूषक दोनों में वृद्धि होती है। परिणामस्वरूप जहां एक ओर प्राकृतिक स्त्रोतों के त्वरित विदोहन से इनका तेजी से ह्वास होता है, वहीं दूसरी ओर झील तथा नदियों में औद्योगिक अपजल, जीवों द्वारा विघटित प्रदूषक तत्व जैसे घरों का कचरा एवं कूड़ा–करकट, लकड़ी एवं कोयले को ईंधन के रूप में जलाने से उत्पन्न धुंए से वातावरण में प्रदूषण फैलता है।

स्त्रोतों का अनियंत्रित दोहन –

भूमि, जल, वायु, खनिज आदि का अनियंत्रित एवं विकृत उपयोग से प्रदूषण की समस्या को बढ़ा रहा है।

जल–प्रदूषण –

मानव मल, नदियों, नहरों में विसर्जन, सफाई तथा सीवर का प्रबंध न होना, औद्योगिक कचरों का नदी में विसर्जन कृषि रसायनों का पानी में घुलना, व छिड़काव (डी.डी.टी. एवं बी.एस.सी.) का प्रयोग जल प्रदूषण फैलाता है।

ध्वनि प्रदूषण –

उत्सव में लाउड स्पीकरों का अनियंत्रित प्रयोग वाहनों के हॉर्न, औद्योगिक क्षेत्रों में उच्च ध्वनि क्षमता के पावर सायरन, हॉर्न तथा मषीनों के द्वारा होने वाला शोर, जनरेटरों एवं डीज़ल पम्पों का ध्वनि प्रदूषण।

ध्वनि प्रदूषण का प्रभाव मनुष्य की श्रवण शक्ति कमजोर, सिरदर्द, चिड़चिड़ापन, उच्च रक्तचाप, स्नायविक, मनौवैज्ञानिक दोष उत्पन्न होने लगते हैं। अनिद्रा, नवजात, शिशु पर प्रभाव ध्वनि प्रदूषण से होते हैं।

पर्यावरण के लिए राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय प्रयास –

पर्यावरण प्रदूषण के संबंध में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सर्वप्रथम चिंता बीसवी सदी के उत्तरार्द्ध में हुई। 30 जुलाई 1968 को मानव पर्यावरण की समस्या पर अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन बुलाने के लिए संयुक्त राष्ट्र की आर्थिक तथा सामाजिक परिषद् ने एक प्रस्ताव पारित किया, जिसमें कहा गया कि आधुनिक वैज्ञानिक एवं तकनीक विकास के परिप्रेक्ष्य में मानव तथा उसके पर्यावरण के मध्य संबंधों में चिंताजनक परिवर्तन हुए हैं। मानव पर्यावरण की कुछ समस्याओं पर संयुक्त राष्ट्र संघ तथा उसकी अन्य एजेंसियों जैसे अंतर्राष्ट्रीय परमाणु अभिक्षरण आदि कार्य कर रहे हैं। पर्यावरण के संबंध में विचार–विमर्ष करने के उद्देष्य से विष्व स्तर पर कुछ महत्वपूर्ण सम्मेलन आयोजित किये गये–

1. मानव पर्यावरण स्टॉकहोम सम्मेलन (1972)
2. नैरोबी सम्मेलन (1982)
3. ओजोन परत संरक्षण, वियना अभिसमय–1985 (प्रथम)
4. ओजोन परत संरक्षण, वियना अभिसमय–1985 (द्वितीय)
5. संयुक्त राष्ट्र प्यार्वरण तथा विकास सम्मेलन (पृथ्वी सम्मेलन)– 1989
6. पृथ्वी सम्मेलन, रियो–डी–जेनेरो (ब्राजील) 03 जून से 14 जून 1992
7. द्वितीय संयुक्त राष्ट्र मानव सम्मेलन (हैविटेट–द्वितीय) 1996
8. क्योटो सम्मेलन– 1997
9. पृथ्वी सम्मेलन द्वितीय– 2002
10. साइट्स (CITES)-1973
11. अर्थ प्लस फाइव सम्मेलन– 1992
12. मॉट्रियल समझौता– 1989
13. एजेण्डा– 21

सम्मेलन में विचारणीय विषय –

जल व स्वच्छता, ऊर्जा, मत्स्य संसाधन, रसायन, वित्तीय सहायता, भूमण्डलीकरण, व्यापार, जैव विवधता विषय पर विचार किया गया है।

विश्व संरक्षण एवं संवर्द्धन संदर्भित अंतर्राष्ट्रीय संगठन व एजेंसियां :–

- ☐ अर्थ स्केन– 1976
- ☐ प्यार्वरण परिरक्षण एजेंसी– 1970
- ☐ संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम–1972
- ☐ पृथ्वी रक्षा कार्यक्रम–1972
- ☐ पृथ्वी परियोजना
- ☐ पृथ्वी यात्रा
- ☐ मानव तथा जीवमंडल कार्यक्रम–1975
- ☐ प्यार्वरण तथा विकास पर विश्व आयोग– 1984
- ☐ अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में संकटापन व्यक्तियों का अधिवेषन
- ☐ ह्युमन एक्सपोजन असैसमेंट लोकेषन।
- ☐ अंतर्राष्ट्रीय समुद्री सलाहकार संगठन।
- ☐ दक्षिण एशिया सहकारी प्यार्वरण।
- ☐ इंटरनेशनल काउन्सिल ऑफ साइन्टिफिक यूनियन्स।
- ☐ प्रकृति तथा प्राकृतिक सम्पदाओं के संरक्षण के लिए अंतर्राष्ट्रीय संघ
- ☐ यूरोपीय आर्थिक समुदाय।
- ☐ संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक एजेंसी।

पर्यावरण प्रदूषण को समाप्त करने के राष्ट्रीय प्रयास :-

- ☐ संविधान संषोधन– 1976 में 42वें संविधान संषोधन
- ☐ प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड
- ☐ वन एवं पर्यावरण मंत्रालय,
- ☐ पर्यावरण पर्व– विश्व वानिकी दिवस (21 मार्च), वन अग्नि सुरक्षा सप्ताह (16–22 अप्रैल), विश्व पर्यावरण दिवस–(05 जून), वन महोत्सव (1–7 जुलाई), वन्य जंतु संरक्षण (1–7 अक्टूबर)।
- ☐ गोविंद वल्लभ पंत हिमायल प्र्यावरण एवं विकास संस्था।
- ☐ राष्ट्रीय प्रदूषण निवारण नीति–1992

पर्यावरण सुरक्षा योजनाएं :-

- ☐ गंगा शुद्धिकरण
- ☐ इंदिरा गांधी पर्यावरण पुरस्कार
- ☐ वन्य जीव संरक्षण परियोजना
- ☐ प्रदूषण नियंत्रण विष्व बैंक परियोजना।

विभिन्नि कानून :-

- ☐ जल प्रदूषण निवारण,
- ☐ जल उपकर अधिनियम,
- ☐ वायु प्रदूषण एवं निवारण,
- ☐ पर्यावरण सुरक्षा अधिनियम,
- ☐ नया मोटर वाहन अधिनियम,
- ☐ वन्य जीव–जंतु संरक्षण अधिनियम

भारत में पर्यावरण संरक्षण हेतु जन जागरूकता आंदोलन :-

चिपको आंदोलन, अप्पिको आंदोलन, पश्चिमी घाट बचाओ, कर्नाटक आंदोलन, शांतघाटी बचाओ, फैगा अभियान, पेडची आंदोलन, जल बचाओ, जीव बचाओ, टिहरी बांध विरोधी आंदोलन, नर्मदा बचाओ आंदोलन, दून घाटी आंदोलन।

राजनीतिक और सामाजिक एजेंडा पर पर्यावरण संबंधी मुद्दों को लाकर सरकारी, प्रतिबद्धताओं को सुनिष्चित किया जा सकता है। इन दो वर्गों के बीच पर्यावरण कार्यकर्ताओं की एक महत्वपूर्ण भूमिका है, जो एक तरफ जनता को जागृत कर सकें, तो दूसरी ओर सरकार के साथ संबंधित मुद्दों पर तालमेल पैदा कर सके। जलवायु परिवर्तन राजनीतिक विचारधारा और व्यवहार को जटिल बनाता है, जिससे भविष्य के समाजों के साथ–साथ आर्थिक प्रणालियों के लिए जिम्मेदारी की धारणा प्रभावित होती है। राष्ट्रों के बीच भौतिक असमानता जलवायु परिवर्तन शमन के लिए तकनीकी समाधानों को अपर्याप्त बनाती है। बल्कि राजनीतिक नेविगेट कर सकते हैं। पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान करने के लिए राजनीतिक नवाचारों को बढ़ावा देकर सुधार किया जा सकता है।

पर्यावरणीय सुधारों के प्रति जन जागरूकता, शिक्षा और सक्रियता के लिए हर जगह व्यापक भागीदारी

सुनिष्चित की जाये। सरकार और जनता दोनों मिलकर वर्तमान समय में पर्यावरण संबंधी मुद्दों का हल निकाल सकते है, जैसे कि जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, कार्बन उत्सर्जन, प्रजातियों का विलुप्त होना, वनों और पेड़ों की कटाई, जल स्त्रोतों का सिकुड़ना, वर्षा की अनिश्चितता, ठोस अपशिष्ट प्रबंधन आदि।

पर्यावरण संरक्षण के उद्देश्य :-

पर्यावरण संरक्षण उद्देश्य है– विनाश रहित विकास। इसकी व्याख्या इस प्रकार है :

- ☐ पर्यावरण को प्रदूषित और विकास करने वाले कारकों को रोकना।
- ☐ विनाश रहित विकास के उपाय।
- ☐ संसाधनों का ऐसा उपयोग कि उनका नवीनीकरण हो सके।
- ☐ अनवीनीकृत संसाधनों का अधिकतम उपयोग।
- ☐ जैविक और अजैविक संसाधनों का विवेकपूर्ण नियंत्रित उपयोग।
- ☐ पुनः चक्रीकरण में बाधा उत्पन्न करने वाली क्रियाओं का निश्चित क्षेत्रों में प्रतिबंध।

पर्यावरण और जन-जागृति :-

प्रत्येक मनुष्य को अपने पर्यावरण के प्रति एक सजग दायित्व निभाना होगा। पर्यावरण अवनयन की सबसे बड़ी जिम्मेदारी उन सम्पन्न, समृद्ध औद्योगिक राष्ट्रों की है, जिन्होंने ऊर्जा के विवेकहीन उपयोग के द्वारा सम्पूर्ण पर्यावरण पर हरित गृह प्रभाव, भूमण्डलीय तापन, ओजोन स्तर क्षरण का प्रभाव बढ़ा है और सूर्य की हानिकारक किरणों के लिए लगभग रास्ता साफ हो गया है। इस कारण यह आवष्यक हो गया है कि, प्रत्येक व्यक्ति जनमानस, जनसमुदाय ही नहीं वरन् सभी राष्ट्र, संपूर्ण संसार पर्यावरण के प्रति जागरूक हो तथा अपनी नीतियों एवं उनके क्रियान्वयन में जागरूक संवेदनशीलता को लावे। प्रत्येक जनमानस, व्यक्ति अपने बच्चों को पर्यावरणीय तत्वों वायु, जल, मिट्टी की गुणवत्ता, उपयोगिता का महत्व समझाए जिससे, बच्चों में प्रारंभ से ही पर्यावरण के प्रति जागरूकता एवं भागीदारी विकसित हो सके। प्रत्येक बच्चे एवं नागरिक पर्यावरण संरक्षण को नैतिक कर्तव्य माने और पर्यावरण को प्रत्येक अवस्था में संरक्षण प्रदान करें।

प्रदूषण कम करने के सुझाव :-

- ☐ फैक्ट्रीयों का धुंआ कम करना।
- ☐ ध्वनि प्रदूषण पर नियंत्रण।
- ☐ औद्योगिक कचना नदी में नहीं डाला जाये।
- ☐ पॉलीथीन के इस्तेमाल को पूरी तरह प्रतिबंधित करना।
- ☐ ज्यादा से ज्यादा वनीकरण किया जाये।
- ☐ सी.एन.जी. गैस वाहनों का प्रयोग करना।
- ☐ खेतों में पराली को न जलाना।
- ☐ जनसंख्या वृद्धि पर अंकुश लगाना होगा। प्रक्रियात्मक सुधार।
- ☐ सरकारी निजी कंपनियों की भागीदारी।
- ☐ सक्रिय अंतर्राष्ट्रीय सहयोग।

निष्कर्ष :-

औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप बीसवीं शताब्दी के आरंभ में अमेरिका व यूरोप का वातावरण अत्यधिक विषाक्त हो गया। समस्या के उग्र रूप धारण करने पर इन देशों की सामाजिक व आर्थिक स्थिति पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ने लगा। शनैः शनैः पर्यावरणीय संकट की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट होने लगा। पर्यावरणीय समस्याओं के प्रति विश्व की जनता का ध्यान आकर्षित करने के लिए तथा पर्यावरण संरक्षण हेतु ठोस नीति का निर्धारण करने के लिए सम्मेलन आदि आयोजित किये गये है।

भारत में पर्यावरणीय कानूनों का व्यापक निर्माण किया है तथा हमारी नीतियां पर्यावरण संरक्षण में भारत की पहल दर्शाती है। भारत पर्यावरण कानून निर्माण कर लागू किया गया है। पर्यावरण को सुरक्षित करने के प्रयासों में आम जनता की भागीदारी भी सुनिष्चित करने की जरूरत है। पर्यावरण संरक्षण में न्यायपालिका ने भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इनके प्रयासों से स्वच्छ प्र्यावरण मौलिक अधिकार का एक महत्वपूर्ण अंग बन गया है।

संदर्भ ग्रंथ :-

1. जौहरी सी.बी. राजनीति विज्ञान एस.बी.पी.डी. पब्लिकेषन आगरा, पृष्ठ क्रमांक 326, 327, 328, 329।
2. खन्ना एल.सी. भूगोल 2020, षिवलाल अग्रवाल एंड कंपनी इंदौर ISBN-978-93-86605-61-0
3. मामोरिया चतुर्भुज डॉ. सिंह कोयल, डॉ. भूगोल एस.बी.पी.डी. पब्लिकेषन आगरा, संस्करणः 2020 ISBN 978-93-89356-75-5
4. website अध्ययन दिनांक 15/12/2021 समय 12:30pm
5. सक्सेना राजेन्द्र डॉ. प्र्यावरण शिक्षा एवं आपदा प्रबंधन गुप्ता पब्लिकेशन हाऊस पृष्ठ क्रमांक 113, 114, 115, 116, 117।
6. तिवारी के.एल. डॉ. राजनीति विज्ञान प्रबोध एंड कंपनी रायपुर, पृष्ठ क्रमांक 154, 155, 156, 157, 158।

मो. 9713420219

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 40-45

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

बदलता पर्यावरण : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. हनुमान प्रसाद, शोध निदेशक
लीलाधर, शोधार्थी (भूगोल)
टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर

पर्यावरण का नाम आते ही भू–पटल के वृहद् पक्षों– उदाहरणार्थ जल, मृदा, मरुस्थल, पहाड़ आदि की कल्पना मन में आ जाती है। पर्यावरण की ओर अधिक अभिव्यक्ति, भौतिक प्रभावों– नमी, ताप, पदार्थों के गठन इत्यादि की विभिन्नताओं तथा जैवीय प्रभावों के रूप में की जाती है। मृदा तथा चट्टानों के समान ही दूसरे जीव भी पर्यावरण के ही अंग हैं। इस प्रकार प्रकृति में परिलक्षित होने वाले वायु, जल, मृदा, पादप तथा प्राणी सभी सम्मिलित रूप में पर्यावरण की रचना करते है।

प्राचीन काल में भी देखें तो महाकवि कालिदास के "अभिज्ञान शाकुन्तलम" तथा "मेघदूत" जैसे महाकाव्यों में भी मानव मन पर पर्यावरण का प्रभाव दर्षाया गया है। आधुनिक पारिस्थितिकी विज्ञान के सन्दर्भ में यूनानी निवासी थियोक्रास्टस (ईसा से 390–250 वर्ष पूर्व) का नाम सर्वप्रथम उल्लेखनीय है। इन्होंने सबसे पहले पौधों के आपसी सम्बन्ध एवं उन पर प्राकृतिक वातावरण के प्रभाव का लिखित वर्णन किया था। आधुनिक औषधि–विज्ञान के जन्मदाता हिप्पोक्रेटीज ने पर्यावरण ज्ञान को सभी चिकित्सकों के लिए आवष्यक बताया। महान् दार्षनिक अरस्तु ने भी इस विषय पर अपने विचार लिखें।

कहा जाता है कि हैकल ने पारिस्थितिकी को परिभाषित किया परन्तु उनसे पहले भी अनेक वैज्ञानिकों ने इस विषय पर अनेक ग्रन्थ लिखे जो कालान्तर में आधुनिक ज्ञान के आधार स्तम्भ के रूप में काम आये। 19वीं सदी में सैन्ट हिलेरी द्वारा पौधों और जन्तुओं का वातावरण के अनुसार "विकरण", वान लीविंग (1803–1875) द्वारा नाइट्रोजन चक्र का विचार, लुईस ऐगसिज (1807–1882) तथा ऐलफ्रेड आर. बैलेंस और चार्ल्स डारविन (1809–1882) तथा ऐलफ्रेड आर. बैलेंस का विभिन्न जन्तुओं के वातावरण सम्बन्धी प्राकृतिक अध्ययन, हेन्सन (1887) का प्लवक (Plankton) अध्ययन, फोराबिस (1887) का झीलों के वातावरण का अध्ययन वास्तव में आधुनिक पारिस्थिति की विज्ञान को विकसित करने में मुख्य आधार बने हैं।

5 से 16 जून, 1972 को स्वीडन की राजधानी स्टाकहोम में 'विश्व पर्यावरण संरक्षण' नाम से एक विश्वव्यापी सम्मेलन मनाया गया था, जिसमें 27 देशों के 110 विषेषज्ञों ने भाग लिया था। तभी से हर वर्ष 5 जून को 'विश्व पर्यावरण दिवस' के रूप में मनाया जाता है। उल्लेख करना उपयुक्त होगा कि इसके आशानुकूल परिणाम भी देखे जा सकते हैं। 20वीं शताब्दी के प्रारम्भ में पर्यावरण आधुनिक विज्ञान की एक युवा शाखा के रूप में विकसित होने की सभी सम्भावनाओ से परिपूर्ण हो गया था। भारतवर्ष में जनसाधारण को पारिस्थितिकी का परिचय भूतपूर्व

प्रधानमंत्री स्व. इदिरा गाँधी ने कराया। उन्होंने आधुनिक भारत में सबसे पहले एक स्वतंत्र पर्यावरण मंत्रालय की स्थापना करके इस विज्ञान के वास्तविक महत्त्व को समझा और उन्हीं के निर्देश व संरक्षण में ही भारतवर्ष के वैज्ञानिकों का एक समूह दक्षिणी ध्रुव के पर्यावरण का अध्ययन करने में सफल हुआ, जिसके दूरगामी परिणाम आधुनिक पारिस्थितिकी विज्ञान को एक नया मोड़ देने में सक्षम साबित होंगे।

यह कहना उपयुक्त होगा कि वर्तमान दूषित होते पर्यावरण को स्वच्छ बनाये रखने की जिम्मेवारी किसी एक की न होकर हम सभी की है। प्रतिवर्ष 5 जून को पर्यावरण दिवस मनाकर और पर्यावरण–संरक्षण पर भाषण देकर अपने कर्त्तव्यों की इतिश्री कर ली जाती है। भूमण्डलीकरण के इस दौर के बढ़ते औद्योगिकीकरण के चलते धरती का तापमान दिनों–दिन बढ़ता जा रहा है। ग्लेषियर पिघलते जा रहे हैं। रोजाना निकलने वाली जहरीली गैंसों से ओजोन परत को निरन्तर क्षति पहुँच रही है, जिससे सूर्य से आने वाली रेडियोएक्टिव किरणें धरती पर सीधे पहुँच रही हैं। साथ ही इससे त्वचा कैंसर के काफी मामले सामने आ रहे हैं। वहीं वनों का विनाश द्रुत गति से जारी है। इससे पर्यावरण संतुलन बिगड़ रहा है और अन्य वन्य–प्राणियों के आश्रय स्थल समाप्त हो रहे हैं। वनों के अभाव के कारण वन्य जीवों की अनेक प्रजातियाँ समाप्त होने के कगार पर पहुँच गई हैं। इनके संरक्षण का प्रयास किये जाने की आवश्यकता है। श्री एच.एस. के अनुसार वर्तमान बिगड़ते पर्यावरण की ओर व्यक्तियों तथा सरकारों को ध्यान देने की जरूरत है।

सच्चाई तो यह है कि भारत में सार–संभाल की कोशिशें कम हैं और उसको बिगाड़ने वाली शक्तियाँ अधिक हैं। बिगड़ते जा रहे पर्यावरण को बचाने की जिम्मेवारी हम सब देशवासियों की है।

यह कहना बेमानी है कि पर्यावरण संवर्धन आर्थिक विकास पर रोक लगाता है। पिछले 30 साल का अनुभव तो साफ तौर पर यही बताता है कि पर्यावरण–संवर्धन के बिना ठीक आर्थिक विकास हो नहीं सकता है। बिगड़ता पर्यावरण सीधे–सीधे आर्थिक असमानता की खाई को और ज्यादा चौड़ा बनाता है और इसकी सीधी चोट गरीब पर सबसे ज्यादा पड़ती है। प्रदूषित पर्यावरण और सामाजिक अन्याय एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। पर्यावरण और लोगों की आर्थिक हालत एक–दूसरे से जुड़ी चीज है।

हम आर्थिक और सामाजिक विकास का कैसा रूप चुनते हैं, इसी पर निर्भर होगा हमारे पर्यावरण का सुधार या अधिक बिगाड़। पर्यावरण का मतलब कुछ सुहावनी, प्राकृतिक चीजों का शौकिया संरक्षण नहीं है, वह एक विस्तृत फैला हुआ एक ऐसा संसाधन है, जिस पर लोगों की रोजमर्रा की आर्थिक जिन्दगी, सामाजिक उन्नति और आध्यात्मिक प्रेरणा टिकी हुई है।

भारत जैसे घनी आबादी और गरीबी वाले देश में पर्यावरण के हर अंग पर न जाने कितनी तरह के लोगों, समूहों का अस्तित्व टिका हुआ है। जब भी कोई अंग बर्बाद होता है या समाज का एक शक्तिशाली वर्ग उस पर अपना आधिपत्य जमा लेता है तो उससे वंचित होने वाला कमजोर वर्ग पहले से ज्यादा कमजोर, बेसहारा और गरीब बनता जाता है। उदाहरण के लिए तेजी से नष्ट होते जा रहे हमारे वन, चारागाह, नदियाँ, समुद्र के तटवर्ती हिस्सों के प्रदूषण से न सिर्फ लाखों आदिवासियों, घुमन्तु लोगों और मछुआरों की आर्थिक स्थिति बिगड़ी है बल्कि उन पर तो सामाजिक और सांस्कृतिक मृत्यु की छाया मंडराने लगी है। जो हिम्मती लोग एक जमाने में उम्दा स्वावलम्बी जीवन बिताते थे, आज भूमिहीन मजदूर या रोजी–रोटी के लिए भटकने वाली लाचार–जमात में शामिल हो गए हैं। इसलिए आज का विकास तो एक ऐसा माध्यम बन गया है जिसके जरिये अमीर और ताकतवर वर्ग

देश के प्राकृतिक संसाधनों को अपने कब्जे में करता जा रहा है। इस षड्यंत्र में आधुनिक तकनीक उसकी पूरी मदद कर रही है।

वर्तमान संदर्भों पर प्रकाश डालते हुए विद्वान लेखक वेदप्रकाश सोनी का कहना है कि वर्तमान विकास की प्रक्रिया द्वारा संसाधनों के उपयोग का यह ढांचा न केवल पर्यावरण पर हमला कर वन्य जीवों, वनों, मछलियों आदि को बर्बाद कर रहा है, उसकी चपेट में आबादी का एक बहुत बड़ा हिस्सा, खासकर गरीब और कमजोर वर्ग भी आता जा रहा है। विकास की जो शैली आदमी की चिन्ता न करे, उससे पर्यावरण की चिन्ता की उम्मीद रखना बेमतलब है। दुनिया की सांस्कृतिक विविधता कोई ऐसे ही नहीं आई है। इसके पीछे दुनिया के पर्यावरण की विविधता रही है। आज इन दोनों पर खतरा मंडरा रहा है। मुम्बई और नई दिल्ली जैसे शहर हर रोज अपने रूप–रंग और संस्कृति में लन्दन और न्यूयॉर्क जैसे बने जाने की कोशिश करते हैं। आज की विकास शैली से शह पाकर पनपने वाला उपभोग का ढांचा कुछ ऐसा है कि वह लोगों को उसके आसपास के पर्यावरण से तोड़ता है। यह टूटन इस भयानक हद तक बढ़ाई गई है कि स्तनपान कराने जैसी निहायत सहज और प्राकृतिक आदत और जरूरत भी विज्ञापनबाजी के कारण तोड़ दी गई है। हर रोज पहले से ज्यादा माताएं बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा फैलाये जा रहे पाउडर के दूध पर निर्भर होती जा रही हैं। प्रदूषित पानी के साथ मिलाने पर यह पाउडर जानलेवा बन जाता है।

दुनियाभर में जब कुछ लोग ज्यादा से ज्यादा उपभोग वाली संस्कृति को अपनाते हैं तो देशों के बाहर–भीतर आपस में भी उसी दिशा में एक अंधी दौड़ को बढ़ावा मिलता है। विज्ञान और तकनीक में बढ़ती हुई हमारी योग्यता ने हमें एक किस्म से तकनीकी रूप से साक्षर बनाया है। हम बाकी दुनिया के साथ बराबरी की हैसियत से बैठे हैं। इसमें हमें इज्जत की जगह मिली है, लेकिन इसका ये मतलब नहीं है कि हम अपने समाज पर विज्ञान और तकनीक की मनमानी चलनें दें। विज्ञान और तकनीक का उपयोग समाज मे स्थापित आदर्श मूल्यों से संचालित होना चाहिए वरना हम भयानक भौतिकवाद में फंस जायेंगे, जिसके अंतिम छोर का प्रतीक हमारे ही बीच का वह युवक है जो दहेज में स्कूटर, रेफ्रीजरेटर जैसी कोई चीज न मिलने पर बिना एक क्षण सोचे अपनी पत्नी को भी जला देता है।

यदि हम पर्यावरणीय संकल्पनाओं (Environmental Consepts) के अन्तर्गत पर्यावरण की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, मानव प्रकृति से सम्बन्धों का इतिहास, अवधारणा, मानव और पर्यावरण–वर्तमान पारिस्थितिक स्थिति एवं पर्यावरण के रूपान्तरण में मानव की भूमिका आदि बिन्दुओं को रेखांकित करें तो यह कहना उपयुक्त होगा कि आधुनिक विज्ञान का इतिहास बहुत पुराना नहीं है।

आधुनिक विज्ञान ने मानव समाज को विकास के पथ पर अग्रसर होने में तीव्र गति प्रदान की। उसने प्रगति अवष्य की थी, किन्तु उसकी गति बहुत धीमी थी। सब जानते हैं कि रेलवे इंजन के आविष्कार के पहले आवागमन के लिए बैलगाड़ी, ऊँटगाड़ी, घोड़ागाड़ी आदि पर निर्भर रहना पड़ता था। यह सिलसिला हजारों वर्षों तक चलता रहा। उसी दौरान रोम, यूनान, भारत, चीन, मेसोपोटामिया, मिश्र आदि में प्राचीन काल की महान् सभ्यताओं का उदय हुआ था। उस समय के अध्ययन से यह भी पता लगता है कि जब–जब मानव सभ्यताएं उत्कर्ष की चरम सीमाओं पर पहुँचती हैं, तब–तब वहाँ की भौगोलिक परिस्थितियों में अत्यधिक बदलाव आया है। वहाँ के पेड़–पौधे, पर्वत–पहाड़, नदी– नाले, कुएं–तालाब, भूमि–जलवायु आदि सभी बदले हैं। मेसोपोटामिया की दजला–फरात

नदियों की घाटियों में पल्लवित सभ्यता अपने विकास की ऊँची मंजिलों पर पहुंच कर धराशायी हो गई। वहां की शस्य–श्यामला भूमि बंजर प्रदेश में बदल गई। आज के विज्ञान ने प्राचीन काल की क्षेत्रीय दूरियों को समाप्त करके स्थिति को बिल्कुल बदल दिया है। सारी दुनिया सिमट कर एक छोटी सी इकाई बन गई है। मानवों को इतना निकट ले जाती यह प्रगति जहाँ एक ओर वरदान प्रतीत होती है, वहीं दूसरी ओर महाविनाश का कारण भी बनती जा रही है। यही आज विश्व की चिन्ता है। पर्यावरण की सजगता यहीं समाप्त नहीं हो जाती। प्राचीन काल में सड़क और आवासीय क्षेत्रों के आस–पास कूड़े के ढेर लगाना भी वर्जित था, इसके लिए दण्ड का विधान था। सिन्धु घाटी की सभ्यता में भी पर्यावरण के प्रति सजगता के उल्लेख मिलते हैं। महाकवि कालिदास ने इस दृष्टि से "अभिज्ञान शाकुन्तलम्" में आश्रम की प्रकृति को बहुत आत्मीयता के साथ प्रस्तुत किया है। यदि हम पौराणिक सन्दर्भों की पड़ताल करें तो पायेंगे कि भारत में पर्यावरण के प्रति प्रारम्भ से ही सजगता रही है। यहाँ एक लम्बे समय से प्रकृति को श्रद्धा की दृष्टि से देखा जाता रहा है। मानव ने विकास की सीढ़ियाँ चढ़ते हुए वृक्षों पर कुल्हाड़े अवश्य चलाए मगर जब उसे उसकी महत्ता समझ में आई उसने उन्हें धर्म के साथ जोड़ दिया। पर्यावरण की शुद्धता के महत्त्व को हमारे पूर्वजों ने बहुत पहले समझ लिया था। चूंकि जीव–जगत के सामंजस्य से ही पर्यावरण स्वच्छ रखा जा सकता है।

वनस्पति की धारक धरती को वेदों मे 'धारिणी' यानी धारण करने वाली कहा गया है। यजुर्वेद में इसे 'धरित्री' कहा गया है। बहुमूल्य खनिज पदार्थों को गर्भ में धारण करने के कारण अथर्ववेद में इसे वसुधामी से सम्बोधित किया गया है। हमारे पूर्वजों ने इस धरती को माँ कहा है। कारण साफ है इसने मां की तरह अपनी गोद में जहां एक ओर प्रकृति की अपार सम्पदा रखी हुई है, वहीं दूसरी ओर इस धरती में प्राणियों की अपार संख्या है। इसकी प्रजातियों की पूरी संख्या को गिन पाना भी आसान नहीं है, फिर परिचय तो दूर की बात है। विश्व में मछलियों, सांपों जैसे अनेक प्राणियों की प्रजातियों के लिए विष्वकोष बन चुके हैं। आधुनिक जंतु विज्ञान में लाखों की संख्या में इनके नाम दिये जा चुके हैं फिर भी उनकी गिनती नहीं हो पाई है। इन सबको धारण करना, उनको जीवन देना, उचित लय बनाए रखना सभी कुछ इस धरती की देन है। यह धारिणी बन कर हमें निवास अथवा आश्रय प्रदान करती है, वसुंधरा बन कर अनेक खनिजों को धारण करते हुए अन्नोत्पत्ति में सहायक बनती है तथा विश्वम्भरा बनकर हमारा भरण–पोषण करते हुए तथा वस्त्रादि को उपलब्ध कराते हुए तापमान को नियंत्रित करती है।

असल में हमारे पूर्वज पूरी तरह से वृक्षों पर ही निर्भर रहे, जो आज भी सत्य है। भारत में रहने वाली सभी अनार्य जातियाँ वृक्षों की उपयोगिता को स्वीकार करते हुए उन्हें सम्मान देती थीं और उनकी पूजा–अर्चना करती थीं। हड़प्पाकालीन मोहरों में पीपल वृक्ष अंकित पाया गया है। इसके अलावा भित्ति चित्रों में भी अनेक स्थानों पर वृक्ष अंकित पाये गये हैं और स्त्री–पुरुष दिखाए गए हैं। सच तो यह है कि आर्यों ने भी वृक्ष पूजा अनार्यों से ही सीखी थी। वेदों में प्रकृति के विभिन्न अंग, बादल, सूर्य, ऊष्मा, जल व वृक्षों से जुड़े मंत्र मिलते हैं। अब अथर्ववेद में आए निम्न मंत्र को देखिए, जिसमें बेल और गूलर की तुलना सज्जन व उपकारी व्यक्ति से की गई है–

महान न भद्रो बिल्वो,
महान भद्र उदुम्बर।

मनुष्य को प्रकृति का अभिन्न अंग मानने वाले ऋषि–मुनियों को यह भली–भाँति मालूम था कि जड़ जगत

अर्थात् पृथ्वी, नदियों, पर्वत और चेतन अर्थात् मनुष्य, पशु–पक्षी और वन इन सभी इकाइयों के पारस्परिक समानुपतिक सामंजस्य से ही पर्यावरण संतुलित रहता है। ये जानते थे कि पर्यावरण के किसी एक अंग में व्याघात होने से इसका परिणाम सम्पूर्ण पर्यावरण प्रणाली को प्रभावित कर सकता है। इसलिए उन्होंने सदाचार जगत के प्रति सहृदयता, दया और प्रेम की भावना पर बल दिया था अर्थात् जीयो और दूसरों को जीने दो। वैदिक मंत्रों के माध्यम से मनुष्य को शिक्षा दी गई है कि पशु–पक्षियों को अपने से हेय न समझें और नदियों, पर्वतों, वृक्षों और प्रकृति के अन्य अंगों में दैवीय शक्ति के दर्शन करें। उत्तर–प्रदेश की एक कहावत है कि "अपनापूत और पराया पेड़ बराबर।" इसी प्रकार उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार जैसे राज्यों में लोकगीतों में भी पेड़ की महिमा का बखान किया जाता है। यहां तक कि बूढ़े वृक्ष को बाबा, भाई, पिता जैसे रिश्ते से भी जोड़ा जाता है।

पहाड़ी क्षेत्रों में पीढ़ी–दर–पीढ़ी पौधों की रक्षा के लिए प्रयास किए जाते रहे जो आज भी जारी है। यहाँ लोग वृक्षों से उतना ही प्यार करते हैं, जितना अपनी संतानों से। हिमाचल प्रदेश के कुछ क्षेत्रों में लड़कियाँ वृक्षों को राखी बाँधकर अपना भाई बना लेती हैं और इस बात का प्रण लेती हैं कि वे अपने भाई की जीवन पर्यन्त रक्षा करेंगी। बात सच भी है कि उनका भाई भी उनके लिए बहुत कुछ जुटाता है, सबसे बड़ी बात तो यह है कि वह पर्यावरण को प्रदूषित होने से रोकता है। कार्बन–डाई–ऑक्साइड का जहर खुद पीकर बदले में जीवनदायी ऑक्सीजन देता है। बहन के लिए भाई की इससे बड़ी सौगात और भला क्या होगी। पहाड़ी क्षेत्रों में विशेषकर गढ़वाल क्षेत्र में तो 'चिपको–आंदोलन' तथा राजस्थान प्रान्त में बिश्नोई पंथ द्वारा करमा और गौरा के बलिदान भी अति महत्त्वपूर्ण हैं।

पर्यावरण से जुड़े निम्नांकित महत्त्वपूर्ण नैतिक चरणों को अपनाकर एक स्वच्छ और सुन्दर पर्यावरण का निर्माण किया जा सकता है –

1. आम नागरिकों में पर्यावरण के प्रति जागरूकता उत्पन्न करनी होगी।
2. सुरक्षा तकनीकों का विकास करना।
3. विकास सम्बन्धी योजनाओं का पर्यावरण के संतुलन के साथ पुनरीक्षण करना होगा।
4. वन संवर्धन तथा वृक्षारोपण को सही रूप से क्रियान्वित करना होगा।
5. अंतरिक्ष अभियानों पर नियंत्रण करना होगा अन्यथा सम्पूर्ण वायुमण्डल प्रदूषित हो जायेगा।
6. आनुवांशिकी परिवर्तनों से सम्बन्धित कार्यों पर नियंत्रण करना होगा।
7. पश्चिमी देशों के भौतिकवादी विचारों को त्यागना होगा, क्योंकि इसका असर भारत में भी स्पष्ट दिखाई देने लगा है।
8. स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं का निराकरण करने के लिए प्राकृतिक उपाय लागू करने चाहिएं, जिससे उसके शारीरिक प्रतिरोधक क्षमता में सुधार हो सके।
9. यदि प्रकृति के प्रति सौहार्द्रपूर्ण व्यवहार नहीं किया और उसके प्रति प्राणिवत प्रेम नहीं उत्पन्न किया तो प्रकृति अपने अनुरूप दण्ड देगी।
10. जनसंख्या नियंत्रण एक बड़ी समस्या है, उस पर नियंत्रण करने के लिए स्वनियंत्रणकारी अनुषासन लाना होगा।
11. हमें त्यौहारों, धार्मिक पर्वों, शादी–विवाह एवं महोत्सवों को मनाने के उन तौर–तरीकों को भी बदलना होगा

जो वायु, जल व ध्वनि प्रदूषण फैलाते हैं।

12. चारागाह संरक्षण की व्यवस्था करनी होगी।
13. ध्वनि प्रदूषण से सम्बन्धित नियम बनाने होंगे।
14. सबसे महत्त्वपूर्ण है कि मनुष्य को प्रकृति पर विजय पाने की लालसा पर नियंत्रण करना होगा।
15. ऐसी वनस्पतियों तथा पशुओं के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार पर प्रतिबंध लगाने होंगे, जिनका अस्तित्व ही खतरे में है।

आवश्यकता इस बात कि है कि हम भारतीय संस्कृति में निहित समग्र जीवनदर्शन को जीवन में धारण करें तथा पर्यावरण संरक्षण को सहजता से अपनाकर, आदर्श जीवन मूल्यों को ध्यान में रखते हुए नई विचारधाराओं तथा प्राचीन मान्यताओं एवं हमारी सांस्कृतिक परम्पराओं के समन्वय द्वारा व्यापक दृष्टि विकसित कर बदलते हुए पर्यावरणीय संकट पर विजय पाकर पारिस्थितिकी को संतुलित बनाए रखने में सहयोगी हो सकते हैं।

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 46-49

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

वैश्विक तापक्रम और प्रकृति

-Manisha

Lect. English Literature, Mata Krishnawanti College, Padampur

''अहो एंषा वंर जन्म सर्व प्राण्युपजीवनम्।
धन्या महीरूपा येम्भो निराश यान्ति नार्थिन।।[1]

''सब प्राणियों पर उपकार करने वाले वृक्षो का जन्म श्रेष्ठ है। ये वृक्ष धन्य है जिनके पास से याचक कभी निराश नहीं लौटते।''

भूमिका :-

वर्तमान युग विकास व तकनीक का आधुनिक रहा है परन्तु प्रकृति के विनाश के मूल्य पर, जो कि प्रकृति व मनुष्य दोनो के लिए अहितकर है। पिछले कुछ दशकों से जिस प्रकार मौसम चक्र तीव्र गति से बदल रहा है और प्राकृतिक आपदाओं का सिलसिला तेज हुआ है उसके बावजूद अगर हम नही संभलना चाहते है तो इसमें पर्यावरण का काई दोष नहीं है। प्रकृति के तीन प्रमुख तत्व है– जल, जगल और जमीन, जिनके बिना प्रकृति के इन तीनो ही तत्वो का मानव द्वारा इस तरह दोहन किया जा रहा है कि प्रकृति का संतुलन डगमगाने लगा है जिसकी परिणति भयावह प्राकृतिक समस्याओं के रूप में उत्पन्न हो रही है। इन जटिल समस्याओं में से एक है वैश्विक तापक्रम (ग्लोबल वार्मिग)। यह एक वैश्विक समस्या के रूप में उभर रही है, इस समस्या से ना केवल मनुष्य बल्कि धरती पर निवास करने वाले प्रत्येक प्राणी को नुकसान पहुंच रहा है। पिछली कुछ शताब्दियों में मनुष्यों ने पृथ्वी के तापमान को नाटकीय तरीके से बदल दिया है जिसके परिणाम स्वरूप ग्लोबल वॉर्मिग की समस्या उत्पन्न हुई है। जब पर्यावरण में कार्बन डाईऑक्साइड, ग्रीन हाउस गैसों और अन्य प्रदूषक सूरज की रोशनी का उपभोग करते है तो ये गैसे धरती की सतह से परावर्तित किरणों द्वारा उत्सर्जित होने वाली तापीय ऊर्जा को वायुमण्डल से बाहर जाने से रोकती है। इस प्रकार तापीय ऊर्जा के वायुमण्डल में सान्द्रण से धरती के औसत तापमान में वृद्धि होती है इसी कारण गलोबल वार्मिंग की समस्या उत्पन्न होती है। वायुमंडलीय संतुलन के बिना पृथ्वी चन्द्रमा के समान ठंडी या शुक्र की तरह गर्म होगी।

ग्लोबल वॉर्मिंग –

मानव की प्रकृति विरोधी नीतियों एवं कार्यों के कारण संतुलित जलवायु के कदम लड़खड़ा गये है। इसी सन्दर्भ में पृथ्वी के वायुमण्डल में कुछ विशेष गैसों जैसे कि कार्बनडाई ऑक्साइड, जलवाष्प, मीथेन और नाइट्रस ऑक्साइड आदि गैसों की मात्रा इस सीमा तक बढ़ गई है कि धरती की ऊष्मा बाहर नही निकल पा रही है जिससे पृथ्वी के तापमान में लगातार वृद्धि हो रही है इसे ही वैश्विक तापक्रम (ग्लोबल वार्मिंग) कहते है। 1880 के बाद

से औसत वैश्विक तापमान में लगभग एक डिग्री सेल्सियस की वृद्धि हुई है। ग्लोबल वॉर्मिंग एक सतत् प्रक्रिया है, वैज्ञानिको का अनुमान है कि 2035 तक औसत वैश्विक तापमान अतिरिक्त 0.3 से 0.7 डिग्री सेल्सियस तक बढ सकता है।

अशक्यं प्रकृतेः ऋते जीवनम्।[2]

"There is no life without nature"

न्यू जर्सी के जलवायु वैज्ञानिक वालेस स्मिथ प्रोकर ने 1975 में अपने एक पत्र में ग्लोबल वार्मिंग शब्द का प्रयोग किया था जिसमें उन्होने सटीक भविष्यवाणी की थी कि वायुमण्डल में कार्बनडाई आक्साइड का स्तर बढने से ग्लोबल वॉर्मिंग बढेगी।

ग्लोबल वॉर्मिंग की उत्पति के कारण :-

ग्लोबल वॉर्मिंग सामान्यतः ग्रीन हाउस के प्रभाव के परिणाम स्वरूप पृथ्वी के तापमान में भारी वृद्धि हुई है मानव जाति अपने सभाव के प्रति अमानवीय है। हमारे आधुनिक जीवन को चलाने के लिए ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन होने से पृथ्वी का तापमान बढ रहा है। जिनके पीछे कुछ गैसो की महत्वपूर्ण भूमिका रही है इसके अतिरिक्त तेजी से हुआ औद्योगीकरण, जंगलो का तेजी से कम होना, पेट्रोलियम पदार्थों के धुँए से होने वाला प्रदूषण और फ्रिज, एयर कंडीशनर आदि का बढता प्रयोग भी सम्मिलित है। विश्वभर में उद्योग धंधे को तीव्रता से स्थापित किया जा रहा है। दूसरे विश्व युद्ध के बाद हर देश नए नए उद्योग स्थापित करके आर्थिक उन्नति की ओर तेजी से कदम बढाने का प्रयत्न कर रहा है। ऊर्जा की प्राप्ति हेतु जीवाश्मी ईधन का प्रयोग करते है। कोयला और पेट्रोल भूमि के गर्भ से निकाल–निकाल कर दिन रात जलाया जा रहा है जिसे लोगों को सुख सुविधाए तो प्राप्त हो रही है लेकिन साथ ही कार्बन डाईऑक्साइड और मीथेन गैसों की मात्रा वायुमंडल में बढती जा रही है जो तापमान को तेजी से बढा रही है इस तापमान वृद्धि का परिणाम यह हो रहा है कि ध्रुवों पर जमी बर्फ की परत पिघलने लगी है जिस कारण आने वाले समय में धरती के वातावरण का तापमान बढने के साथ साथ जल स्त्रोतो में कमी होने की परिस्थिति उत्पन्न हो सकती है।

वैश्विक तापक्रम सम्पूर्ण पृथ्वी के लिए खतरे की घंटी है जो सारे संसार के लिए अति खतरनाक सिद्ध होगी। ग्लोबल वार्मिंग के कारण समुद्री सतह का तापमान भी बढ जाता है क्योकि पृथ्वी के वातावरण की अधिकांश गर्मी समुद्र द्वारा अवशोषित हो जाती है गर्म समुद्री सतह के तापमान के कारण तुफान का बनना आसान हो जाता है। पेडों को काटने सहीत अन्य गतिविधियां भी ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन करती है। वायुमण्डल में इन ग्रीन हाउस गैसों की उच्च सांद्रता पृथ्वी पर अधिक गर्मी बढ़ाने के लिए जिम्मेदार है।

उद्यमेन हि सध्यिन्ति कार्याणि न मनोरथैः।

न हि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशंति मुखे मृगा।।[3]

''कोई भी काम उद्यम (मेहनत) से ही पूरा होता है, बैठे–बैठे हवाई किले बनाने से नही अर्थात सिर्फ सोचने भर से नहीं। ठीक उसी प्रकार सोते हुए शेर के मुंह में हिरण खुद नही चला जाता है।''

ग्लोबल वार्मिंग के दुष्प्रभाव :-

औद्योगिक सभ्यता ने हमें असंख्य भौतिक लाभ पहुचाएँ है तथा सुख सुविधाएँ दी है किन्तु इन सबके लिए हमें पर्यावरण की भारी कीमत चुकानी पडी है। प्राकृतिक वातावरण की जीवन समर्थक प्रणालियों की कुछ सीमाएँ

है, जिनके बाहर जाने पर वे ठीक से काम करना बंद कर देती है और विफल तक हो जाती है। भूमण्डलीय ताप में वृद्धि से नदियो को जल प्रदान करने वाले ग्लेशियर तीव्रता से पिंघल रहे है जिससे भविष्य में भयंकर बाढ की आंशका बन सकती है। पूर्व में धुवीय प्रदेशो को तापमान की वृद्धि से अप्रभावित समझा जाता था परन्तु वर्तमान में ऐसी स्थिति सामने आ रही है कि उतरी ध्रुव के हिमखण्ड भी पिंघलने लगे है जिनके परिणामस्वरूप समुद्र के जल स्तर में भी वृद्धि होगी और संसार के समुद्र तटों पर स्थित अनेक नगर डूब जायेगे। इसके अतिरिक्त तापमान वृद्धि से ऋतु चक्र भी असंतुलित हो जाएगा जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण मिल भी रहा है। गर्मियों का संमय चक्र कम होता जा रहा है। वर्षा अनिश्चित रूप से अनावृष्टि तथा अति वृष्टि के रूप में वितरित हो रही है। इस प्रकार तापमान वृद्धि से एक भयंकर संकट की पदचाप सुनाई दे रही है। ग्लोबल वार्मिग एक ऐसा संकट है जिसे मनुष्य ने अपने आधुनिकतावादी विचार के फलस्वरूप उत्पन्न किया है, परन्तु इस संकट का निरीह पशु पक्षियो तथा वन्य जीवन को उठाना पड़ रहा है जिसमे उनका कोई कसूर भी नहीं है।

ग्रीष्म सते भूमे वर्षाणि शरदेमन्त शिशिरे वसन्तः।
ऋतवस्ते विहिता हायनीरहोरात्रे पृथिवि नो दुहाताम्।।[4]
"We Consider the earth a great place for develling for humans."

ग्लोबल वार्मिग के विषय पर सुधारात्मक दृष्टिकोण –

हम मानव के स्वभाव में यह है कि जब तक काई समस्या परेशान न कर दे तब तक उसके समाधान के विषय में विचार नहीं करते है। यदि ग्लोबल वार्मिंग जैसी विकट समस्या एक बार अपना उच्च स्तर पार कर गई तो इसे संतुलित करना मुश्किल हो जायेगा। ग्लोबल वार्मिंग पर बहुत सी फिल्में बनी है जिसे देखकर आत्मा भी सहर जाती है और यह सोचने पर विवश कर देता है कि क्या मानव जाति का विनाश इस पृथ्वी से इसी प्रकार से ही होगा, सम्भवत नही। वर्तमान में सभी देश इस विनाशकारी समस्या को लेकर सजग और सचेत है और इसे नियन्त्रित करने के लिए हर सम्भव उपाय कर रहे है। सामान्यतः ग्लोबल वार्मिग शब्द को एक वैज्ञानिक परिभाषा मानकर छोड़ दिया जाता है लेकिन यदि इस संकट पर विचार नहीं किया तो आने वाले समय मे इस पृथ्वी पर जीवनयापन करना बिल्कुल असम्भव हो जाएगा। इस समस्या से बचाव हेतु ज्यादा से ज्यादा वृक्षारोपण की आवश्यकता है। वृक्षारोपण हानिकारक गैस को अवशोषित करने और ग्रीन हाउस प्रभाव को कम करने में सहायता प्रदान करते है। हमारे शिक्षित समाज की भी यह जिम्मेदारी बनती है कि वह आने वाली पीढियो को एक स्वच्छ

और सुंदर भविष्य प्रदान करना।
माता भूमि प्रत्रोह पृथिव्याः।।[5]
''ये धरती हमारी माता है और हम इसके पुत्र है।''

घरों मे उपयोग किये जाने वाले सामान्य बल्ब, पूरी तरह से वायुमण्डल में कार्बन डाइऑक्साइड जोड़ते है। इन सामान्य बल्बों को काम्पैक्ट फ्लोरोसेंट लाइट बल्ब (CFL) से बदलता कार्बन डाईआक्साइड को कम करने के साथ–साथ ऊर्जा की बचत भी हो सकती है। ग्लोबल वार्मिंग जैसी विनाशकारी समस्या पर नियन्त्रण पाना सरल नहीं है लेकिन लोगों में जागरूकता का प्रसार करके इस समस्या का सामना किया जा सकता है। हमें अपनी पृथ्वी को सही मायनों मे ग्रीन बनाना होगा। हम अपने पर्यावरण को प्रदूषण से जितनी मुक्त रखेगें, उतनी ही हम इस पृथ्वी को बचाने में बडी भूमिका निभायेगें। आर्गेनिक खाद्य पदार्थों के उपयोग को बढावा देना ग्लोबल वार्मिंग को

नियन्त्रित करने के प्रभावी उपायों मे से एक है वाहनो के अत्यधिक उपयोग कार्बनडाई ऑक्साइड की एक बडी मात्रा को जन्म देते है जिस पर नियन्त्रण आवश्यक है। ग्लोबल वार्मिंग की समस्या के समाधान हेतु हमें सौर ऊर्जा और पवन ऊर्जा जैसे वैकल्पिक ऊर्जा स्त्रोतों का चुनाव करना चाहिए। हम इन वैकल्पिक ऊर्जा स्त्रोतों का सरलता से उपयोग कर सकते है। इसके साथ ही जींवाशम ईधन को प्रतिस्थापित कर सकते है।

इस समस्या को गम्भीरता से लेते हुए सभी देशों को भी एक होकर कानून पारित करना चाहिए। जनता को इस समस्या के परिणामो से अवगत करवाने के लिए समय–समय पर सेमीनार होने चाहिए, ताकि सभी इसके विनाशकारी परिणामों से परिचित हो सके और जागरूक हो सके। ग्लोबल वार्मिंग मानव के द्वारा ही विकसित प्रक्रिया है क्योंकि कोई भी परिवर्तन बिना किसी वस्तु के छुए स्वतः नही हो सकता है। इसलिए हम सभी को सामजस्य, बुद्धि और एकता के साथ मिलकर इस समस्या के समाधान तक पहुँचना है। तकनीकी और आर्थिक आरामदेह भरे जीवन से अधिक प्राकृतिक सुधार आवश्यक है।

यदि ग्लोबल वार्मिंग पर नहीं होगा नियन्त्रित,
फिर तो हर जीवन होगा असुरक्षित।।[6]

संदर्भ :-

1. संसाधन एवं पर्यावरण – डॉ. बी सी जाट
2. मानव भूगोल – डॉ. रामकुमार गुर्जर, डॉ. बी सी जाट
3. http://Sanskritshlokas.com
4. http://hi.m.wikipedia.org
5. ग्लोबल वार्मिंग के दुष्प्रभाव –वेब पेज
6. भारतीय अर्थव्यवस्था का विकास (कक्षा–11 एन.सी.ई.आर.टी.) राजस्थान राज्य पाठ्य पुस्तक मंडल, जयपुर

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 50-55

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

मरूस्थलीय औषधीय पादपों का पर्यावरण संरक्षण एवं स्वास्थ्य चेतना में योगदान

–डॉ. बजरंग सिंह राठौड़

प्राचार्य एवं विभागाध्यक्ष, लोक प्रशासन (सेवानिवृत),

–मोनिका राठौड़

शोधार्थी, लोक प्रशासन विभाग, राजकीय डूँगर महाविद्यालय, बीकानेर

प्रस्तावना :–

भारतीय संस्कृति में पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलता वैदिक काल से ही दृष्टिगोचर हो रही है। हमारे वेद, पुराण, उपनिषद तथा अन्य धर्मग्रंथों में धरती को माता कह कर सम्बोधित किया गया है जो कि हमारी सम्पूर्ण प्राकृतिक शक्तियों की जननी व पोषक है। मानव का प्रकृति के साथ गहरा रिश्ता है। उसका चित्रण जिस प्रकार से भारतीय प्राचीन ग्रंथों में दर्शाया गया है वैसा अन्यत्र कहीं मिलना दुर्लभ है।

पर्यावरण एवं आध्यात्मिक चेतना :

वर्तमान में पर्यावरण में हो रहा निरन्तर असंतुलन एक गम्भीर चिन्ता व चिन्तन का विषय है। अतः हमें पर्यावरण के समुचित संरक्षण हेतु जन–चेतना उत्पन्न करनी होगी। हालांकि हम 21वीं शताब्दी में प्रवेश कर चुके हैं परन्तु पर्यावरण के संरक्षण के लिए सरकारों एवं आमजन द्वारा किए गए प्रयास अभी भी नाकाफी प्रतीत हो रहे हैं। इसके पीछे एक महत्त्वपूर्ण उत्तरदायी कारण लोगों में पायी जाने वाली आध्यात्मिक शून्यता भी है। वैज्ञानिक दृष्टि ने हमें पर्यावरण के संरक्षण के प्रति सावचेत करने का कार्य तो किया है परन्तु जब तक व्यक्ति को आध्यात्मिक स्तर पर यह समझ नहीं आएगी कि पर्यावरण का संरक्षण उसके स्वास्थ्य में किस प्रकार योगदान कर सकता है तब तक वह सक्रियता के साथ अभिप्रेरित नहीं होगा। अतः हमारा यह प्राथमिक उद्देश्य है कि सामान्य जन को पर्यावरण संरक्षण के होने वाले लाभों से अवगत करवाने और इसको अभियान के माध्यम से जन–जन में चेतना उत्पन्न करने का कार्य करें।

आयुर्वेद चिकित्सा में वनोषधियों का योगदान :

भारत वर्ष में प्राचीन काल से ही आयुर्वेद पद्धति चली आ रही है। भगवान धनवन्तरी का कर्मक्षेत्र आयुर्वेद है। एलोपैथिक दवाइयों के बढ़ते दुष्प्रभाव के कारण आज पूरे विश्व का रुझान आयुर्वेद की तरफ बढ़ रहा है। वर्तमान समय में राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हर्बल उत्पादों व औषधियों की माँग में लगातार वृद्धि हो रही है जिसकी पूर्ति के लिए प्राकृतिक आवासों में उपलब्ध औषधीय पादप अपर्याप्त साबित हो रहे हैं। इसके अलावा बढ़ती जनसंख्या, औद्योगीकरण, वनों की कटाई तथा अत्यधिक दोहन होने के कारण उपलब्ध प्राकृतिक औषधियों

में कमी आती जा रही है। ऐसी स्थिति में इस विलुप्त होती सम्पदा का कृषिकरण आवश्यक हो गया है।[1]

हमारे देश में भौगोलिक विविधता पाई जाती है और सभी प्रकार के औषधीय पौधों की खेती का जाती है। यदि सरकारी स्तर पर किसानों को इसके बारे में समुचित जानकारी एवं वित्तीय सहायता प्रदान की जाये तो औषधीय फसलों की खेती में भी हम उच्च स्थान प्राप्त कर सकते हैं। वर्तमान में हर्बल उत्पादों की विश्वभर में माँग है। अतः ये उत्पाद विदेशी मुद्रा के कोष को बढ़ाने में भी मददगार साबित हो सकते हैं। हाल ही में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने अनुमान लगाया है कि दुनियाभर में 80 प्रतिशत लोग अपनी प्राथमिक स्वास्थ्य की देखभाल करने के लिए किसी न किसी पहलु के लिए हर्बल दवाओं पर निर्भर है। डब्ल्यू.एच.ओ. के अनुसार लगभग 21000 पौधों की प्रजातियों में औषधीय पौधों के रूप में उपयोग किए जाने की क्षमता है।[2]

कोविड–19 एवं हर्बल उत्पादों की भूमिका :

मानव रोगों के निदान के लिए चिकित्सा की पारम्परिक प्रणालियों का व्यापक रूप से उपयोग किया जा रहा है, चूंकि एलोपैथिक दवाओं से किए जाने वाले उपचार के सम्बन्ध में भी अनेक समस्याएँ हैं। जिनमें से जनसंख्या में होने वाली निरन्तर वृद्धि, दवाओं की अपर्याप्त आपूर्ति, उपचार की निषेधात्मक लागत, कई सिंथेटिक दवाओं के दुष्प्रभाव संक्रामक रोगों के लिए वर्तमान में उपयोग की जाने वाली दवाओं के प्रतिरोध के विकास में व्यापक विविधता के लिए दवाओं के स्रोत के रूप में पादप सामग्री के उपयोग पर जोर दिया है।

विगत दो वर्षों के दौरान जो कोविड–19 की स्थितियां बनी हैं उसमें यह काफी हद तक स्वीकार किया गया है कि एलोपैथिक दवाइयों के साथ–साथ आयुर्वेद के उत्पाद बहुत ही स्वास्थ्यवर्द्धक हैं और इनका किसी प्रकार का स्वास्थ्य पर भी दुष्प्रभाव नहीं पड़ता है। हमारे देश के प्रख्यात चिकित्सकों ने आयुर्वेद उत्पादों को अपनाने का परामर्श दिया है। हाल ही में भारत के सभी क्षेत्रों में डेंगू का प्रकोप है। इस बीमारी में भी गिलोय तथा पपीता के पत्तों का काढ़ा पिलाने पर एक ओर जहाँ मानव शरीर की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है वहीं बीमार व्यक्ति की प्लेटलेट्स में भी इजाफा होता है। अतः यह कहा जा सकता है कि हर्बल उत्पादों के उत्पादन को बढ़ाकर जहाँ हम एक ओर स्वास्थ्य के क्षेत्र में योगदान दे पायेंगे दूसरी ओर पर्यावरण के संरक्षण में भी हमारा बहुत बड़ा योगदान होगा। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति को हर्बल उत्पादों से होने वाले लाभों से अवगत करवाकर उसको पर्यावरण संरक्षण के लिए जोड़ने का प्रयास करें।

वैसे तो भारत में अनेक प्रकार के हर्बल उत्पादों की खेती की जाती है परन्तु इस प्रस्तुत लेख में राजस्थान मरूस्थल में पाए जाने वाले मुख्य–मुख्य औषधीय पौधों के बारे में जानकारी प्रदान की जा रही है। साथ में इन पौधों के औषधीय गुण एवं उपयोग भी बताए गए हैं। इनका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार हैं–

1. **सोनामुखी (Senna)** :

सोनामुखी का पौधा मूलतः अरब देशों से भारत में आया। इसको हिन्दी में सनाय, राजस्थानी में सोनामुखी व संस्कृत में मार्कण्डी कहते हैं। सोनामुखी या सनाय का वानस्पतिक नाम केसिया अंगस्टिफोलिया है, जो सिजेलीपिनेसी कुल का सदस्य है। यह कांटे रहित झाड़ीनुमा डेढ़ फुट से चार फुट ऊँचा पौधा होता है जो एक बार लगा देने के बाद पाँच वर्ष तक फसल देता रहता है। इसके पीले फूल लगते हैं, जिनके साथ ही फलियां आने लगती हैं।

औषधीय उपयोग : सोनामुखी एक रेचक का कार्य करता है। अतः मुख्य रूप से पेट की बीमारियों से

सम्बन्धित औषधियों के निर्माण में काम आता है। इसकी पत्तियों में सेमोसाइड पाए जाते हैं। इसकी पत्तियों का उपयोग अनेक आयुर्वेदिक, एलोपैथिक, यूनानी व होम्योपैथिक दवाइयों के निर्माण में किया जा रहा है। जो पीलिया, अस्थमा, मलेरिया, बुखार, अपच आदि रोगों के उपचार में काम आती हैं।

भारत का सोनामुखी की खेती में विश्व में प्रथम स्थान है। इसकी खेती तमिलनाडु में की जाती है। पश्चिम राजस्थान के जोधपुर, बाड़मेर, जैसलमेर, बीकानेर व नागौर जिलों का शुष्क जलवायु इस फसल के लिए विश्व में सर्वाधिक उपयुक्त है।

यह फसल बीमारियों से लड़ने की स्वयं क्षमता रखती है। बरसात के मौसम में कभी–कभी इसके पत्तों पर काले धब्बे दिखते हैं लेकिन किसान को घबराना नहीं चाहिए। धूप निकलने पर अपने आप ठीक हो जायेंगे। किसी भी प्रकार के रासायनिक खाद या कीटनाशक का प्रयोग न करें। दीमक व टिड्डी भी इस फसल को नुकसान नहीं पहुँचाते हैं और गाय–भैंस, ऊँट, बकरी, भेड़, नीलगाय, हिरण, खरगोश आदि कोई जानवर नहीं खाता है।

2. अश्वगंधा (Indian Ginseng) :

अश्वगंधा एक महत्त्वपूर्ण मरूस्थलीय औषधीय पौधा है। इसका वानस्पतिक नाम विदानिया सोम्नीफेरा है। जो सोलेनेसी कुल का सदस्य है। इसका पौधा 3 से 4 फुट ऊँचा, बहुवर्षीय झाड़ीनुमा होता है। शाखाएं टेढ़ी–मेढ़ी व रोमयुक्त होती है। पत्तियां बैंगन की पत्तियों के समान अण्डकार व सेमयुक्त होती है। फूल सफेद या पीले–हरे गुच्छों में होते हैं। फल छोटी रसभरी जैसे जो पकने पर लाल हो जाते हैं। इसके बीज छोटे व चपटे होते हैं।

औषधीय गुण : आयुर्वेद में इसे वात, कफ नाशक नाड़ी वल्लय, पाचन, रसायन आदि गुणों से युक्त माना जाता है। इसकी जड़ का ही औषधीय उपयोग किया जाता है। इसमें उड़नशील तेल, विथेनियाल, सोम्नीफोर्स व फाइटोस्टेबोल तत्त्व पाए जाते हैं। इसका उपयोग स्नायुदौर्बल्य, जराव्याधि, वात, काश, श्वास, क्षय, शोध विष, कृमि, कण्डू निर्बलता, वीर्य श्रोणता, वृद्धावस्था, नपुंसकता, शिश्न शैथिल्य, रक्त प्रदर, श्वेत प्रदर, अर्शपीड़ा, सन्धि वात व रक्त विकार आदि रोगों में प्रचुर मात्रा में किया जाता है। इसकी जड़ों के चूर्ण से नींद अच्छी लगती है और मन प्रसन्न रहता है। निद्रा जनक अन्य दवाइयों के समान इसका कोई बुरा असर नहीं होता है। इसके सेवन से पेशाब साफ उतरता है, हृदय बलवान होता है, वेदनाओं का दमन होता है और वृद्धावस्था में उठते–बैठते तकलीफ होना बंद होता है। अश्वगंधा चूर्ण में पतली धातु को गाढ़ा करने और बढ़ाने की विचित्र शक्ति है। इसकी व्यावसायिक खेती राजस्थान व मध्य प्रदेश में ही होती है।

3. ग्वारपाठा (Alovera) :

ग्वारपाठा या घृतकुमारी का वानस्पतिक नाम ऐलोवेरा है जो लिलिएसी कुल का सदस्य है। यह 1 से 2 फुट ऊँचा मांसल, बहुवर्षीय पादप होता है। इसकी पत्तियां मांसल, मालाकार 1 से 5 फुट तक लम्बे व 3 से 4 इंच चौड़े, छोटे–छोटे कांटोयुक्त होते हैं। पुराने पौधों के मध्य भाग से पुष्पदण्ड निकलता है जिस पर लाल हल्के पीले फूल लगते हैं, जिनका समय जनवरी से फरवरी होता है।

औषधीय गुण : इसकी पत्तियों से 94 प्रतिशत जल व 6 प्रतिशत अमीनो अम्ल तथा कार्बोहाइड्रेट होते हैं। पत्तियों के रस से एलुवा तैयार किया जाता है जिसमें 'एलोइन' नामक ग्लूकोसाइड समूह होता है जो क्रियाशील तत्त्व है। यह जल में विलय पदार्थ है। इसके अलावा बी–बारबेलोस व आइसो–बारबेलो तत्त्व तथा 'ऐलोइमाडीन' रेजिन भी होता है। इसका मुख्य उपयोग आयुर्वेदिक औषधियों में किया जा रहा है जो कफ विकार,

खांसी, उदरशूल, बवासीर, कठज, यकृत सूजन, दांतदर्द, गठिया आदि रोगों के उपचार से सम्बन्धित है। चर्मरोग व सौंदर्य प्रसाधनों के क्षेत्र में भी ग्वारपाठे का उपयोग तेजी से बढ़ता जा रहा है।

4. गुग्गुल या गूगल :

गुग्गुल या गूगल एक बहुउपयोगी मरूस्थलीय परन्तु संकटग्रस्त औषधवृक्ष है। इसका वानस्पतिक नाम कोमिफोस विघटाई है, जो बुरसेरेसी कुल का सदस्य है। यह बहुवर्षीय बहुशाखीय कांटेदार 1 से 2 मीटर झाड़ीनुमा वृक्ष होता है। इसकी शाखाओं का अग्रभाग नुकीला होता है। पुराने तने पर चमकीली, पतली, कागजदार छाल होती है। इसकी पत्तियां अण्डाकार एवं सिरों पर दन्तम्य धार वाली 1–3 पत्रिका युक्त व चमकीली होती है। फूल छोटे, दो या तीन के समूह में होते हैं। फल अण्डाकार या गोल, मांसल जो पकने पर लाल हो जाते हैं। फूल व फल मई से जुलाई तक लगते हैं।

औषधीय उपयोग : गुग्गल एक परम औषधि है, जिसका उपयोग आयुर्वेदिक चिकित्सा में कृमिनाशक, कफ निसारक, मूत्रक, वातनाशक, शीत प्रशमन, कुण्ठहन लेखन, रक्तकण वर्द्धक, यकृत उत्तेजक के रूप में किया जाता है। गुग्गल का उपयोग आमवात, उदर रोग, हृदय रोग, भगंदर, गठिया, शोध, स्त्रीरोग, पाण्डुरोग आदि में प्रभावी रूप से किया जाता है। इसके अलावा इसका उपयोग धूपबत्ती, अगरबत्ती व सुवासित धूम्र कीटाणुनाशक में होता है जो दमा व श्वास रोगियों के लिए अति उत्तम है।[3]

5. गिलोय (Heart Leaved Moonseed) :

नीम गिलोय या गिलोय का वानस्पतिक नाम हिनोस्पोरा कोर्डिफोलिया होपा है जो मेनिस्पर्मेसी कुल का पौधा है। यह एक बहुवर्षीय, मांसल, चिकनीझाड़ लता होती है। इसकी जड़े सफेद रंग की मुलायम, रसयुक्त तीव्र गंध वाली तथा तना हरा, मांसल, पतली छालयुक्त होता है। पत्तियां एकांतरित क्रम में हृदयाकार, चौड़ी, लम्बे पर्णवृन्तयुक्त होती है। इसके मादा फूल पीले या हरे–पीले मंजरी में मध्य में लगे रहते हैं जबकि नर पुष्पगुच्छों में लगे रहते हैं। इसके फल मटर के समान गोल या अण्डाकार होते हैं। इसका कच्चा फल हरा, पकने पर लाल हो जाता है। एक ही बीज होता है जो घुमावदार होता है।

औषधीय उपयोग : गिलोय की जड़, तना, पत्तियां, फूल भी का औषधीय उपयोग किया जाता है। जड़े वमनकारी होती है तथा सर्वविष का दूर करती है। तना, जिसमें ग्लुकोसाइन गिलोइन मुख्य तत्त्व पाया जाता है, के कटे भाग को गुडुची कहते हैं। इसका उपयोग पीलिया, वातज्वर, कफ ज्वर, प्रसूती ज्वर, क्षय, श्वेत प्रदर व रक्तचाप नियंत्रण में किया जाता है। सूखे फलों का पाउडर पीलिया व गठिया में लाभकारी होता है। पत्तियों का रस गठिया, पीलिया व चेचक में हितकारी होता है।

गिलोय को अमृता कहा गया है क्योंकि यह शरीर की जीवनी शक्तियों व इनके स्रोतों की विकृति दूर करती है।

6. तुलसी (Holy Basil) :

तुलसी का पौधा औषधीय गुणों से भरपूर होने के साथ ही सुगंधित तेल का भी स्रोत है। तुलसी का वानस्पतिक नाम ओसिमम बेसिलिकम होता है जो लेनियकी कुल का सदस्य है। यह तीव्र गंध युक्त 1 से 3 फुट तक ऊँचा हरा पौधा होता है। शाखाएं तनु विस्तृत व पत्तियां अण्डाकार व सूक्ष्म दन्तुरित होती है। फूल दीर्घमंजरी में शाखाग्र, सफेद हरिताम वर्ण के होते हैं। बीज रक्ताभ व आयताकार चपटे होते हैं।

औषधीय उपयोग : तुलसी में मिथाइल चेबिकोल मिथाइल सिन्नेमेट, यूजीनॉल आदि रासायनिक तत्त्व पाए जाते हैं। इससे प्राप्त तेल व अन्य पदार्थों का सर्दी जुकाम की औषधियों, खांसी व कफ की दवा बनाने, कन्फैक्शनरी, सौंदर्य प्रसाधनों, टूथपेस्ट बनाने में उपयोग किया जाता है। तुलसी के पत्तों के सेवन से रक्तचाप सामान्य होता है व कैंसर में भी लाभ होता है।

7. आंवला (Indian Gooseberry) :

आंवला या आमला का वानस्पतिक नाम एग्नलिका ओफिसिनेलिस है जो यूफोर्नियसी कुल का पौधा है। इसका मध्यमाकार का छोटा हरा वृक्ष होता है। इसकी पत्तियां इमली के समान छोटी संयुक्त, हरित पीलाभ होती है। फूल छोटे आकार के, एकलिंगी, मंजरी में पीले–हर रंग के होते हैं। दोनों मादा व नर पुष्प एक ही वृक्ष पर लगते हैं। इसके फल गोल, छोटे आकार के हरे पीले रंग के, मांल षटरेखा युक्त व बीज एक षटकोषीय कठोर होता है।

औषधीय उपयोग : इसके ताजा व सूखे फल औषधीय उपयोग में लाए जाते हैं। फलों का पेल्टिस जख्मों से रक्त रोकने के काम आता है। फलों का चूर्ण पाचक व वातहर होता है। इसके फलों में विटामिन–सी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। ये लीवर टॉनिक के रूप में भी उपयोग किया जाता है। इसके फलों का रस व मुरब्बा, अपच, पीलिया, एनिमिया, हृदयरोग में भी उपयोग किया जाता है। बीजों का उपयोग अस्थमा, पेट के रोगों व ब्रोकांइटिस में किया जाता है। आंवला, त्रिफला व च्यवनप्राश का प्रमुख घटक होता है तथा तेल व शैम्पू में भी इस्तेमाल किया जाता है।

8. ईसबगोल (Psyllium Husk) :

ईसबगोल का वानस्पतिक नाम प्लान्टेगो ओवेटा है जो प्लान्टेजिनेसी कुल का सदस्य होता है। 1 से 4 फुट तक ऊँचा एक वर्षीय पादप होता है। तना रोमयुक्त शाखित, तनु तथा पत्तियां धान की पत्तियों के समान दीर्घ, रेखाकार, दन्तुरित होती है। फूल शाखाग्र, मंजरी में लगते हैं। फल सम्पुट, लम्बे, गोल, बीज छोटे, नोंकदार, रक्तवर्षा या गुलाबी तनुश्वेप नीजावरण युक्त होते हैं।

औषधीय उपयोग : बीजों में तेल, अलन्यूमिन तथा म्यूसिलेस प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। बीजों पर पाए जाने वाला पतला छिलका ही इसका औषधीय उत्पाद है। जिसमें लसलसा पदार्थ पाया जाता है। इसका उपयोग पेट की सफाई में, कब्ज, अल्सर, बवासीर, मूत्र संस्थान, दस्त, आंव, पेचिश आदि रोगों को दूर करने में आयुर्वेदिक औषधि के रूप में किया जाता है।

9. अरण्डी (Castor) :

अरण्डी या कैस्टर का वानस्पतिक नाम रिसिनस कामुनिस है, जो यूर्फोनिएसी कुल का सदस्य है। यह एक बहुवर्षीय, झाड़ीनुमा 2 से 6 मीटर ऊँचा होता है। यह शाखित हरा, चौड़ी पालित पत्तियों वाला श्रुप है। फूल एकलिंगी होते हैं, नर पुष्प आधार पर व मादा पुष्प ऊपर की ओर लगते हैं। फल बड़े आकार के, ऊपरी सतह पर कांटेनुमा रचनाएँ पाई जाती है। प्रत्येक फल में चितकबरे, भूरे रंग के बड़े आकार के बीज पाए जाते हैं।

औषधीय उपयोग : इसके बीजों में ग्लाइको प्रोटीन रिसिन एवं एक वसा अम्ल रिसिनोलिक एसिड सर्वाधिक मात्रा में पाया जाता है। कैस्टर ऑयल रेचक व स्नेहक की तरह कर्म करता है। अतः कई आयुर्वेदिक औषधियों के निर्माण में उपयोग किया जाता है। अरण्डी के तेल का उपयोग खुशबूदार हेयर ऑयल निर्माण हेतु भी किया

जाता है। अरण्डी की खली एक उत्कृष्ट जैविक खाद कार्य करती है।

10. शंखपुष्पी (Conchshell) :

सामान्यतः इसे शंखपुष्पी, फुली एवं शंखाहुली नामों से जाना जाता है। यह 'कानवाल पुलेसी' कुल का पादप है। जिसका वानस्पतिक नाम क्षाल्कुलस अल्सीनोइडस है। यह पादप खुले एवं पहाड़ी इलाकों, बगीचों, सड़क के किनारे और कृषि योग्य खेतों में पायी जाती है। यह बहुवर्षीय एवं एकवर्षीय शाकीय पौधा है, जो कि प्रकृति में बीज एवं जड़ों द्वारा स्वतः उगता है। पूरा पौधा घने सफेद रोमों से ढका होता है। इसकी शाखाएं लगभग 40 सेमी. तक लम्बी होती है। इसकी पत्तियां दोपहर में ज्यादा धूप कारण मुरझा जाती है। इसमें तीन तरह के फूल पाए जाते हैं, गहरे नीले, हल्के गुलाबी एवं सफेद।

औषधीय उपयोग : इसका पंचांग 'ब्रेन टॉनिक' के रूप में जाना जाता है जो याद्दाश्त बढ़ाने में उपयोगी होता है। इसका उपयोग श्वास रोग, बुखार, तंत्रिका व जननांगों सम्बन्धित रोगों में भी किया जाता है। यह रक्त शुद्धिकरण, नेत्र रोग एवं मधुमेह में भी उपयोगी है।

निष्कर्ष :-

आज वर्तमान संदर्भ में पर्यावरण का संरक्षण एक यक्ष प्रश्न के रूप में सभी देशों के सम्मुख खड़ा है। वैज्ञानिक और तकनीकी प्रकृति ने मनुष्य को प्रकृति पर अभूतपूर्व अधिकार दे दिया है। हम पर्वतों को हटा सकते हैं, नदियों के मार्ग बदल सकते हैं। नए सागरों का निर्माण कर सकते हैं और विशाल रेगिस्तानों को उर्वर मरूउद्यानों में परिणित कर सकते हैं। हम प्राकृतिक जगत में मौलिक परिवर्तन कर सकते हैं। वर्तमान में हमारे क्रियाकलाप एवं हस्तक्षेप अंतरिक्ष तक विस्तृत हो गए हैं।[4] परन्तु प्राकृतिक संसाधनों के साथ की जा रही अविवेकपूर्ण छेड़छाड़ हमारी सभ्यता के लिए खतरनाक साबित हो सकती है। यदि हमने प्राकृतिक दोहन को सीमित करते हुए इसके संरक्षण के लिए समय रहते कोई उपाय नहीं किए तो वह दिन दूर नहीं जब यही प्रकृति हमारे जीवन की इहलीला को समाप्त कर देगी।

आवश्यकता इस बात की है कि हम हमारे सामाजिक, आर्थिक एवं प्राकृतिक परम्पराओं एवं विश्वासों को ध्यान में रखते हुए पर्यावरण के संरक्षण के लिए सामूहिक प्रयास करें।

संदर्भ :-

1. भारतीय संस्कृतिक, धर्म एवं पर्यावरण संरक्षण – डॉ. बी.बी.एस. कपूर
2. राजस्थान मरूथल के औषधीय पौधे – डॉ. बी.बी.एस. कपूर
3. Introduction and Importance of Medicinal Plants and Herbs, National Health Portal, Govt. of India
4. समाज और पर्यावरण, अनुवादक जगदीश चन्द्र पाण्डे, प्रगति प्रकाशन, पृ. 5

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 56-60

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

भारतीय संविधान और पर्यावरण संरक्षण

–डॉ. मुकेश महरिया

असिस्टेंट प्रोफेसर राजनीतिक विज्ञान, मीनाक्षी सेतिया अरोड़वंश महाविद्यालय, श्रीगंगानगर

–डॉ. सुनीता चौधरी

स्कूल लेक्चरर राजनीति विज्ञान, 6 एसकेएम (सखी) घड़साना, श्रीगंगानगर

पर्यावरण की सुरक्षा हमारे सांस्कृतिक मूल्यों व परंपराओं का एक अभिन्न अंग है। अथर्ववेद में कहा गया है कि मनुष्य का स्वर्ग यहीं पृथ्वी पर है। महान वैज्ञानिक आइंस्टीन ने भी कहा था कि दो चीजें असीमित हैं– एक ब्रह्मांड तथा दूसरी मानव की मूर्खता। मनुष्य ने अपनी मूर्खता के कारण अनेक समस्याएं उत्पन्न की है, जिनमें पर्यावरण प्रदूषण भी एक है। इस पर अंकुश लगाने के लिए पर्यावरण संरक्षण को तभी प्रभावी बनाया जा सकता है जब उसमें लोगों की सहभागिता बढ़ाने के साथ पर्यावरण जागरूकता, पर्यावरण संबंधित शिक्षा का विकास करने व लोगों को पर्यावरण के प्रति संवेदनशील बनाने के लिए पर्यावरण की रक्षा से जुड़े संवैधानिक प्रावधानों का ज्ञान हो। यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि कानूनी प्रयासों के साथ ही सामूहिक सामंजस्य एवं आपसी समझ के द्वारा प्रयास करने से ही प्रदूषण पर प्रभावशाली तरीके से नियंत्रण करना संभव हो सकता है। भारत का स्वरूप एक लोक कल्याणकारी राज्य का है और स्वस्थ पर्यावरण भी कल्याणकारी राज्य का ही एक तत्व है। प्रत्येक व्यक्ति के विकास के लिए सबसे जरूरी मौलिक अधिकारों की गारंटी भारत का संविधान भाग–3 के तहत देता है।

संविधान के अनुच्छेद– 21 के अनुसार कानून द्वारा स्थापित बाध्यताओं को छोड़कर किसी भी व्यक्ति को जीवन जीने और व्यक्तिगत आजादी से वंचित नहीं रखा जाएगा। मेनका गांधी बनाम भारत संघ संबंधी मुकदमे में 1978 में सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय आने के बाद अनुच्छेद – 21 की समय– समय पर उदारवादी तरीके से व्याख्या की जा चुकी है। यह अनुच्छेद जीवन जीने का मौलिक अधिकार देता है और इसमें पर्यावरण का अधिकार, बीमारियों व संक्रमण के खतरे से मुक्ति का अधिकार अंतर्निहित है।

स्वस्थ वातावरण का अधिकार प्रतिष्ठा से मानव जीवन जीने के अधिकार की महत्वपूर्ण विशेषता है। भारतीयसंविधान के अनुच्छेद– 21 में कहा गया है कि प्रत्येक व्यक्ति को उन गतिविधियों से बचाया जाना चाहिए, जो उसके जीवन, स्वास्थ्य और शरीर को हानि पहुंचाती हो। संविधान के अनुच्छेद– 21 के तहत स्वस्थ वातावरण में जीवन जीने के अधिकार को पहली बार उस समय मान्यता दी गई थी जब 1988 में रूरल लिटिगेशन एंड एंटाइटलमेंट केंद्र बनाम राज्य (देहरादून खदान केस के रूप में प्रसिद्ध) मामला सामने आया था। यह देश में अपनी तरह का पहला मामला था, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम 1986 के तहत पर्यावरण व

पर्यावरण संतुलन संबंधी मुद्दों को ध्यान में रखते हुए इस मामले में खनन (गैरकानूनी खनन) को रोकने के निर्देश दिए थे। इससे पहले 1987 में एम.सी. मेहता बनाम भारतीय संघ मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने प्रदूषण रहित वातावरण में जीवन जीने के अधिकार को भारतीय संविधान के अनुच्छेद– 21 के अंतर्गत जीवन जीने के मौलिक अधिकार के रूप में माना था।

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 19 (1)क व अनुच्छेद – 21 प्रत्येक नागरिक को बेहतर वातावरण और शांतिपूर्ण जीवन जीने का अधिकार देता है। 1993 के पी.ए. जैकब बनाम कोट्टायम पुलिस अधीक्षक मामले में केरल उच्च न्यायालय ने स्पष्ट किया था कि भारतीय संविधान में इस अनुच्छेद के तहत दी गई अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता किसी भी नागरिक को तेज आवाज में लाउडस्पीकर व अन्य शोर–शराबा करने वाले उपकरण आदि बजाने की इजाजत नहीं देता है। भारतीय संविधान का अनुच्छेद 19 (1)छ प्रत्येक नागरिक को अपनी पसंद के अनुसार किसी भी तरह का व्यवसाय, काम–धंधा आदि करने का अधिकार देता है, लेकिन इसमें कुछ प्रतिबंध भी हैं। कोई भी नागरिक ऐसे किसी भी काम को नहीं कर सकता, जिससे समाज व लोगों के स्वास्थ्य पर कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़े। पर्यावरण सरंक्षण संविधान के इस अनुच्छेद में अंतर्निहित है। 1954 के कोवरजी बी. भरुचा बनाम आबकारी आयुक्त, अजमेर के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट किया था कि जहाँ कहीं भी पर्यावरण संरक्षण व व्यवसाय करने के अधिकार के बीच कोई विरोध होगा तो न्यायालय को पर्यावरण संबंधी हितों और व्यवसाय व कारोबार चुनने संबंधी अधिकार के बीच संतुलन बनाकर किसी निर्णय पर पहुंचना होगा।

भारत के संविधान के अनुच्छेद– 32 और 226 के तहत जनहित याचिका पर्यावरण संबंधी याचिकाओं की धारा का ही परिणाम है। सर्वोच्च न्यायालय ने पर्यावरण को लेकर कई अभूतपूर्व और जनहित में निर्णय दिए हैं। सर्वोच्च न्यायालय कह चुका है कि पर्यावरण सरंक्षण व वातावरण को शुद्ध रखने के लिए पूर्व सावधानियां रखकर ही विकास की राह पर आगे बढ़ पाना संभव है।पर्यावरण संरक्षण के लिए देश में 200 से भी अधिक कानून है। इन कानूनों का खुलकर उल्लंघन होता है और इसलिए भारत विश्व के सर्वाधिक प्रदूषित देशों की श्रेणी में आता है। पर्यावरण एवं प्रकृति संरक्षण भले ही एक कानूनी मुद्दा है, किंतु इसे सर्वाधिक रूप से स्वस्थ और संरक्षित रखने के लिए समाज के सभी घटकों के मध्य आवश्यक समझ एवं सामंजस्य के द्वारा सामूहिक प्रयास किया जाना जरूरी है। मानव पर्यावरण का एक महत्वपूर्ण एवं प्रभावशाली घटक है। पर्यावरण से इतर उसका अस्तित्व नहीं है, क्योंकि पर्यावरण के अन्य घटकों के कारण वह निर्मित हुआ तथा अनेक कारकों से उसकी क्रियाएँ प्रभावित होती रहती हैं। मानव पर्यावरण का एक महत्वपूर्ण उपभोक्ता भी है। तेजी से बढ़ती आबादी, भोगवाद की संस्कृति, प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन, युद्ध, परमाणु प्रशिक्षण, औद्योगिक विकास आदि के कारण नई–नई पारिस्थितिकी समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं इन समस्याओं को उत्पन्न न होने देना मानव जाति का प्रमुख उद्देश्य होना चाहिये। अपने नैतिक, आर्थिक तथा सामाजिक विकास की उच्चतम उपलब्धियां मानव तभी प्राप्त कर सकता है जब वह प्राकृतिक संपदा का विवेकपूर्ण उपयोग करेगा।

हमारे देश में पर्यावरण के अनुकूल एक समृद्ध संस्कृति रही है यही कारण है कि हमारे संविधान निर्माताओं

ने पर्यावरण को संवैधानिक स्तर पर मान्यता देते हुए इसे सरकार और नागरिकों के संवैधानिक दायित्व के साथ जोड़ा गया । संसद द्वारा 42 वें संविधान संशोधन के द्वारा पर्यावरण संरक्षण अधिनियम को पारित करते हुए संविधान के भाग– 4 में राज्य के नीति निर्देशक तत्व व मूल कर्तव्यों में सम्मिलित किया गया है इसमें यह कहा गया है कि –

1. संविधान के अनुच्छेद 47 के अनुसार लोगों के जीवन स्तर को सुधारना, उन्हें भरपूर पोषण उपलब्ध कराना और सार्वजनिक स्वास्थ्य की वृद्धि के लिए काम करना राज्य के प्राथमिक कर्तव्यों में शामिल है। सार्वजनिक स्वास्थ्य में सुधार के तहत पर्यावरण संरक्षण और उसमें सुधार भी शामिल हैं, क्योंकि इसके बिना सार्वजनिक स्वास्थ्य को सुनिश्चित नहीं किया जा सकता।

2. अनुच्छेद – 48 कृषि एवं जीव जगत के संरक्षण की बात करता है। यह अनुच्छेद राज्यों को निर्देश देता है कि वे कृषि व जीवन से जुड़े कारोबार को आधुनिक व वैज्ञानिक तरीके से संगठित करने के लिए जरूरी कदम उठाएं । विशेष तौर पर राज्यों को जीव–जंतुओं की प्रजातियों को संरक्षित करना चाहिये और गाय, बछड़ों, भेड़ – बकरी व अन्य जानवरों की हत्या पर रोक लगानी चाहिये। संविधान का अनुच्छेद 48क कहता है कि राज्य पर्यावरण सरंक्षण व उसको बढ़ावा देने का काम करेंगे और देशभर में जंगलों व अन्य जीवों की सुरक्षा के लिए काम करेंगे।

3. संविधान के भाग – 4 के अनुच्छेद 51क में मूल कर्तव्यों में प्राकृतिक पर्यावरण की जिसके अंतर्गत वन, झील, नदी अन्य जीव भी हैं इनकी रक्षा करें और उनका संवर्धन करें तथा प्राणी मात्र के प्रति दया भाव रखें।

4. भारतीय संविधान के अनुच्छेद 252 व 253 को काफी महत्वपूर्ण माना गया है क्योंकि वे पर्यावरण को ध्यान में रखकर कानून बनाने के लिए अधिकृत करते हैं। भारतीय संविधान में न सिर्फ पर्यावरण को बचाने की अवधारणा निहित है बल्कि पर्यावरण असंतुलन से होने वाले दुष्प्रभावों से रक्षा करने हेतु भी ध्यान दिया गया है। इसके अलावा भारतीय संविधान में मौलिक कर्तव्यों के तहत हर नागरिक से यह अपेक्षा की जाती है कि वह पर्यावरण को सुरक्षित रखने में योगदान देगा। जीने के बेहतर मानक और प्रदूषणरहित वातावरण संविधान के भीतर अंतर्निहित है। संसद ने इस हेतु अनेक अधिनियम पारित किये हैं इनमें से प्रमुख अधिनियम इस प्रकार हैं :–

1. **पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986** – इस अधिनियम को 23 मई 1986 में राष्ट्रपति की स्वीकृति मिली। इस अधिनियम में प्रदूषण को निर्धारित मानदंडों का प्रथम बार उल्लंघन करने वाले को 5 वर्ष की कैद व एक लाख के जुर्माने का प्रावधान है। मानदंडों का निरंतर उल्लंघन करने पर दैनिक रू. 5000 जुर्माना और 7 वर्ष की कैद का प्रावधान है। नियमों के उल्लंघन पर कोई भी व्यक्ति 2 माह का नोटिस देकर जनहित में मुकदमा कर सकता है। केंद्रीय सरकार इस अधिनियम की धारा 5 के तहत प्राधिकृत है कि अपनी शक्तियों के निष्पादन हेतु स्थापित प्राधिकारियों को लिखित निर्देश दे। केंद्र सरकार को यह अधिकार है कि अधिनियम की पालना न करने वालेउद्योगों को बंद करवाने एवं बिजली पानी सेवाएं रोकने के निर्देश दे सकती है।

2. **वायु प्रदूषण (निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम** 1981– इस अधिनियम से राज्य सरकार अपने विवेक से किसी भी क्षेत्र को वायु प्रदूषण नियंत्रण क्षेत्र घोषित कर सकती है। समस्त औद्योगिक इकाइयों को राज्य बोर्ड से अनापत्ति प्रमाण पत्र लेना होगा। अधिनियम के प्रावधानों की अनुपालना नहीं करने पर उद्योग बंद कराए जा सकेंगे व विद्युत जल कनेक्शन भी विच्छेद करवा सकेंगे।

3. **जल (प्रदूषण निवारण व नियंत्रण) अधिनियम 1974 संशोधन** 1988 – इस अधिनियम की मुख्य विशेषता जल को प्रदूषण मुक्त रखने के उपायों से संबंधित है। उद्योग की स्थापना से पहले प्रदूषण कर्ताओं को कड़े दंड व शास्ति का प्रावधान है।

4. **वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम 1972 संशोधन** – वन्य जीव संरक्षण अधिनियम को भारतीय संसद द्वारा 9 सितंबर 1972 को पारित किया गया। वन्य प्राणियों के संरक्षण के लिए यह अधिनियम एक मील का पत्थर है। इस अधिनियम द्वारा वन्य जीव संरक्षण को राज्य सूची से हटाकर समवर्ती सूची में स्थान दिया गया। इस अधिनियम की मुख्य विशेषताएं निम्नानुसार है :–

1. वन्य पशुओं के संरक्षण व प्रबंधन को सुनिश्चित करना।
2. पशु शिकार उनके चमड़े व चमड़े से बनी वस्तुएं निषिद्ध करना।
3. अवैध आखेट की रोकथाम, वन्यजीवों को संरक्षण प्रदान करना।
4. उल्लंघन पर अपराधियों को 3 से 5 वर्ष का कारावास व रू 5000 जुर्माना। राष्ट्रीय पशु बाघ व मोर के शिकार पर संबंधित अपराधी को 10 वर्ष तक कारावास का प्रावधान है।

पर्यावरण संरक्षण रू कुछ महत्वपूर्ण न्यायिक फैसले :–

पर्यावरण संबंधी मामलों की सुनवाई के लिए हमारी न्यायपालिका ने हमेशा तत्परता दिखाई है। समय–समय पर उच्चतम न्यायालय ने पर्यावरण संबंधी जागरूकता बढ़ाने के उद्देश्य से महत्वपूर्ण निर्देश जारी किए।

1. सभी सिनेमाहॉल, सिनेमा तथा वीडियो पार्लर अनिवार्य रूप से कम से कम दो पर्यावरण संबंधी फिल्म का संदेश अनिवार्य रूप से प्रत्येक शो में निशुल्क दिखाएंगे। यह उनके लिए लाइसेंस जारी करते समय पूर्व शर्त होगी।
2. सिनेमा हॉल द्वारा लघु अवधि की पर्यावरण तथा प्रदूषण संबंधित सूचनाप्रद फिल्म दिखाना।
3. पर्यावरण तथा प्रदूषण संबंधी रुचिकर कार्यक्रम का प्रसारण प्रतिदिन 5 से 7 मिनट अवधि के लिए तथा सप्ताह में एक बार लंबी अवधि के लिए दूरदर्शन तथा रेडियो द्वारा प्रसारित किया जाए।
4. छात्रों में सामान्य जागृति लाने के लिए पर्यावरण को विद्यालयों, कॉलेजों व विश्वविद्यालयों में एक अनिवार्य विषय बनाया जाना चाहिए।
5. सन 1996 में उच्चतम न्यायालय ने संघीय सरकार तथा स्थानीय प्राधिकरणों को दिल्ली के ऐतिहासिक नगर को प्रतिदिन साफ करने, सघन वानिकी अभियान को चलाने तथा आरक्षित वन कानून लागू करने के आदेश

दिए।

6. उच्चतम न्यायालय ने जन समस्या तथा आगरा ताजमहल की विश्व धरोहर को बचाने के लिए 292 कोयला आधारित उद्योगों को बंद करने या अन्यत्र ले जाने या गैस ईंधन आधारित बनाने के उद्देश्य से आदेश पारित किए। न्यायालय में (1999 में) सचिव, पर्यावरण व वन मंत्रालय तथा सचिव, पर्यटन मंत्रालय को निर्देश दिया कि पर्यटकों से एकत्र किया गया कोष (लगभग 20 करोड़) स्मारक के सरंक्षण तथा नगर के सौंदर्यकरण पर व्यय किया जाएगा।

7. उच्चतम न्यायालय ने वाहनों से होने वाले प्रदूषण को रोकने के लिए विभिन्न निर्देश जारी किए हैं।

8. सन 2000 से चार महानगरों दिल्ली, मुंबई, कोलकाता, चेन्नई मैं सीसा रहित पेट्रोल का प्रयोग किया जाए।

9. दिल्ली में अप्रैल सन 2001 में टैक्सियों, ऑटो रिक्शा तथा बसों में सीएनजी का प्रयोग हुआ।

10. सभी सार्वजनिक स्थानों पर धूम्रपान निषेध किया जाए।

निष्कर्ष :-

आज के दौर में मानव विकास की दौड़ में इतना आगे बढ़ गया है कि उसे अपने पर्यावरण की ओर देखने का समय नहीं है। वह यह भूलता जा रहा है कि उसे पृथ्वी पर रहना है विश्व में प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह बच्चा हो या वृद्ध अपने पर्यावरण के प्रति सजगता, जागरूकता, चेतना और पर्यावरण अनुकूलन को विकसित करने की आवश्यकता है और तभी इस गंभीर समस्या का समाधान किया जा सकता है। वर्तमान समय में आवश्यकता इस बात की भी है कि मनुष्यों द्वारा पर्यावरण के साथ समन्वयात्मक, सहयोगात्मकता और सामंजस्य पूर्ण संबंध को अपनाया जाए। साथ ही साथ हम अपने शास्त्रों और प्राचीन संस्कृति को अपनाएं और अपने संविधान में पर्यावरण संरक्षण के प्रावधानों का पालन करें।

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 61-66

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

बढ़ता नगरीकरण : पर्यावरण प्रदूषण एवं जलवायु परिवर्तन

–नवदीप सन्धू

शोधार्थी, भूगोल विभाग, महाराजा गंगासिंह विश्वविद्यालय, बीकानेर

प्रस्तावना :–

नगरीकरण से तात्पर्य जनसंख्या मे सामान्य वृद्धि और किसी नगर के औद्योगीकरण की मात्रा से है। इसमे नगरों की संख्या और विस्तार मे वृद्धि शामिल है। यह ग्रामीण से शहरी क्षेत्रों मे लोगों की आवाजाही का प्रतीक है। नगरीकरण, नगरीय क्षेत्रों के विस्तार और घनत्व में वृद्धि के कारण होता है। यद्यपि भारत दुनिया के कम नगरीकृत देशो मे से एक है, जहा केवल 31.16 प्रतिशत आबादी शहरो में रहती है। फिर भी भारत वर्तमान मे नगरीय विकास के गंभीर संकट का सामना कर रहा है जबकि नगरीकरण ही आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक प्रगति का एक साधन रहा है। इसने गंभीर सामाजिक–आर्थिक समस्याओं को जन्म दिया है। नगरीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जो औद्योगिकरण और आर्थिक विकास के कारण शहरों को विकास की ओर ले जाती है। जनसंख्या लगभग 17 मिलियन सलाना की दर से बढ रही है जिसका अर्थ है कि प्रतिदिन 45000 जन्म और प्रति मिनट 31 जन्म। यदि वर्तमान प्रवृति जारी रहती है तो, वर्ष 2050 तक भारत मे 1620 मिलियन आबादी होगी।[1] दुनिया की अधिकांश आबादी अब शहरों में रहती है। 2010 और 2050 के बीच दुनिया की शहरी आबादी में 3 अरब से अधिक लोगों की वृद्धि का अनुमान है। इसमें से कुछ वृद्धि शहरी क्षेत्रों में उच्च शहरी उर्वरता दर और ग्रामीण भूमि के पुनर्वर्गीकरण का परिणाम होगी, लेकिन भविष्य के नगरीकरण का एक महत्वपूर्ण हिस्सा होगा ग्रामीण से शहरी प्रवास के कारण। यह प्रवास विशेष रूप से उन देशों और क्षेत्रों में प्रचलित होने की उम्मीद है जो बदलती जलवायु से सबसे अधिक प्रभावित है।[2] भारत मे अनियंत्रित नगरीकरण के कारण पर्यावरण का क्षरण बहुत तेजी से हो रहा है। नगरीकरण से कई समस्याएँ उत्पन्न हो रही है जैसे–भूमि की कमी, पानी की गुणवता मे गिरावट, अत्यधिक वायु प्रदूषण, शोर और अपशिष्ट निपटान की समस्याँ आदि।

नगरीकरण के कारण :

उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार, 21वीं सदी की शुरुआत में विश्व की कुल आबादी का लगभग 50 प्रतिशत शहरी क्षेत्रों में निवास कर रहा है। शहरी आबादी की बढ़ती प्रवृति का कारण है।

- ☐ बेहतर रोजगार सुविधाए, चिकित्सा सुविधाएं,
- ☐ व्यापार और वाणिज्य के लिए बेहतर सुविधाएं,
- ☐ उच्च शिक्षा के लिए बेहतर सुविधाएं,
- ☐ मनोरंजन, खेल और खेल की सुविधाएं,

☐ सरकारी कार्यालय और प्रशासन की निकटता

इन कारणों से, शहरी जनसंख्या में इस तरह की वृद्धि पर्यावरणीय समस्याओं की एक बड़ी मात्रा को प्ररित करती है।

पर्यावरण के विभिन्न घटकों पर नगरीकरण का प्रभाव :–

अगली सदी की अधिकांश प्रमुख पर्यावरणीय समस्याएँ मौजूद समस्याओं के जारी रहने और तेज होने के परिणामस्वरूप होगी जिन पर वर्तमान मे पर्याप्त राजनीतिक ध्यान नही दिया जाता है। सबसे उभरते मुददे जलवायु परिवर्तन, पीने योग्य पानी की कमी, वनो की कटाई, जल प्रदूषण व जनसंख्या वृद्धि है। ये समस्याएँ बहुत जटिल है। नगरीय आबादी की विशालता, नगरीय क्षेत्रों की अनियोजित वृद्धि और बुनियादी ढांचे की घोर कमी ऐसी स्थिति के मुख्य कारक है।प्राकृतिक और प्रवास के माध्यम से शहरी आबादी की तीव्र वृद्धि ने आवास, स्वच्छता, परिवहन, पानी, आवास, स्वच्छता, परिवहन, पानी बिजली, स्वास्थ्य, शिक्षा आदि जैसी सार्वजनिक उपयोगिताओं पर भारी दबाव डाला है। गरीबी, बेरोजगारी और ग्रामीण अप्रवासियों के बीच रोजगार की कमी, चोरी, डकैती और अन्य सामाजिक बुराइयाँ चरम पर है। शहरी फैलाव तेजी से कीमती कृषि भूमि का अतिक्रमण कर रहा है।

भारत की जनसंख्या 2011 तक 1210.2 मिलियन का आंकडा पार कर चुकी थी। 2030 तक, भारत की 50 प्रतिशत से अधिक आबादी के खराब वातावरण में रहने की उम्मीद है। इतनी बड़ी आबादी को सहारा देने के लिए आवश्यक ढांचागत सुविधाओं का प्रावधान शहरीकरण की गति से काफी पीछे है। नतीजतन, शहरी वातावरण, विशेष रूप से बडे शहरों में, बहुत तेजी से बिगड रहा है। कुछ महत्वपूर्ण पर्यावरणीय समस्याओं की चर्चा नीचे की गई है.

1. **प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन :** उच्च जनसंख्या घनत्व और महंगी जीवन शैली के कारण, प्राकृतिक संसाधनों (जैसे पानी, ऊर्जा, जीवाश्य ईंधन, वन उत्पाद आदि) की खपत की दर बहुत अधिक है। प्राकृतिक संसाधनों का दुरुप्रयोग भी होता है जिसका तत्काल मुआवजा मुश्किल हो जाता है। शहरी क्षेत्रों की कुछ गंभीर समस्याएं पीने के पानी की कमी विशेष रूप से भूजल, वन उत्पादों की कमी, बिजली के बहुत अत्यधिक उपयोग के कारण बिजली कटौती आदि हैं।

2. **वायु गुणवता में परिवर्तन :** मानवजनित गतिविधियों के कारण शहरी क्षेत्रों की हवा प्रदूषित हो जाती है। इन गतिविधियों से कार्बन मोनोऑक्साइड, कार्बन डाइऑक्साइड, नाइट्रोजन के ऑक्साइड, सल्फर के ऑक्साइड, हाइड्रोकार्बन, कार्बनिक यौगिकों के वाष्प, कण, और जहरीली धातु आदि जैसे प्रदूषक निकलते हैं।

3. **वर्षा के पैटर्न में परिवर्तन :** शहरों में अक्सर आसपास के ग्रामीण इलाकों की तुलना में अधिक बारिश होती है क्योंकि धूल वर्षा की बूंदों में जल वाष्प के संघनन को उतेजित कर सकती है।

4. **ध्वनि प्रदूषण :** ऑटोमोबाइल, वाहनों, सामाजिक कार्यों, उद्योगों आदि से उत्पन्न शोर शहरी क्षेत्रों में ध्वनि प्रदूषण का कारण बनता है जो मनोवैज्ञानिक और शारीरिक बीमारियों का कारण बनता है।

5. **तापमान में असामान्य वृद्धि :** शहरी क्षेत्रों में बडे भवनों का अनियोजित निर्माण सौर विकिरण को अवशोषित करता है और दोपहर में ये गर्म विकिरण उत्सर्जित करते हैं जिससे जलवायु दबाव बढ़ जाता है। परिणामस्वरूप वर्ष 2015 पिछले वर्षों की तुलना में सबसे गर्म वर्ष रहा। शहरों में अक्सर आसपास के ग्रामीण इलाकों की तुलना में अधिक बारिश होती है क्योंकि धूल बारिश की बूंदो में जल वाष्प के संघनन को उतेजित सकती है।

6. **ठोस अपशिष्ट का प्रबंधन :** घनी आबादी वाले शहरी क्षेत्र में बडी मात्रा में सामग्री की खपत होती है और साथ ही साथ बहुत सारे ठोस अपशिष्ट निकलते हैं। ठोस कचरे में नगरपालिका अपशिष्ट, औद्योगिक अपशिष्ट, खतरनाक अपशिष्ट आदि शामिल है। जनसंख्या में वृद्धि के साथ ठोस अपशिष्ट उत्पादन बढता है गंध और जहरीली गैसें और विभिन्न बीमारियों के वैक्टरों का प्रजनन ग्रैंड बन जाता हैं। उत्पन्न गैसें वायु प्रदूषण का कारण बनती हैं, कचरे से सतही अपवाह जल प्रदूषण का कारण बनता है और वेक्टर विभिन्न बीमारियों का कारण बनता है।

7. **मलिन बस्तियों का विकास :** शहरों और कस्बों के भीतर बुनियादी सुविधाओं के बिना क्षेत्रों को मलिन बस्ती कहा जाता है। शहरी क्षेत्रों में ग्रामीण लोगों के प्रवाह और उनके लिए आवास सुविधाओं की कमी के कारण झुग्गी बस्ती उत्पन्न होती हैं। वे जंग लगे टिन, खाली टार बैरल, जूट की बोरियों आदि का उपयोग करके अपने आवास का निर्माण करते है। कुछ महत्वपूर्ण समस्याओं को निम्नानुसार रेखांकित किया जा सकता हैः (क) उचित जल आपूर्ति के बिना ये क्षेत्र अपने कचरे को अनियोजित तरीके से निपटाते हैं जो हवा और पानी को प्रदूषित करते है (ख) पानी के दूषित होने से टाइफाइड, हैजा, आंतों का बुखार आदि जैसी बीमारियां होती है। (ग) अनियोजित कूडा डंपिग स्थान और खुले में शौच, मक्खियों, मच्छरों आदि जैसे कई रोग वाहकों के विकास के स्थल बन जाते हैं। ये न केवल स्लम क्षेत्रों में बल्कि आसपास के अन्य स्थानों में भी स्वास्थ्य के लिए खतरा पैदा करते हैं।

भारत में नगरीकरण का स्तर :-

1901–2011 के दौरान भारत में नगरीय आबादी और नगरो की संख्या के पैटर्न और प्रवृति से पता चलता है कि कुल नगरीय आबादी 26 मिलियन (1901) से चौदह गुना से अधिक बढकर 377 मिलियन (2011) हो गई। जबकि कुल जनसंख्या 1901 से 2011 तक 238 मिलियन से पांच गुना अधिक बढकर 1210.2 मिलियन हो गई है।[3]

Table 1: Pattern and Trend of Urbanization in India, 1901-20114

Census year	Numbers of Towns	Urban Population (in Millions)	Percent Urban
1901	1916	25.9	10.8
1911	1908	25.9	10.3
1921	2048	28.1	11.2
1931	2220	33.5	12.0
1941	2422	44.2	13.8
1951	3060	62.4	17.3
1961	2700	78.9	18.0
1971	3126	109.1	19.9
1981	4029	159.5	23.3
1991	4689	217.6	25.7
2001	5161	284.5	27.8
2011	7935	377.1	31.16

1901–2011 के दौरान भारत में मिलियन से अधिक आबादी वाले (1,000,000 जनसंख्या या अधिक) शहरों की संख्या में वृद्धि :

भारत में 1901 में केवल एक ही मिलियन से अधिक शहर (कोलकाता) था। 1911 में यह दो हो गया (मुंबई जोड़ा गया) और 1911 से 1941 के दौरान स्थिर था। 1951 में मिलियन से अधिक शहर बढ़कर पांच हो गए और इस दशक के बाद लगातार बढ़े और 1991 में 23 हो गए और वर्तमान में 2011 की जनगणना में यह 53 हैं। आबादी भी मिलियन से अधिक शहरों में 1901 में 1.51 मिलियन से बढ़कर 2001 में 107.88 मिलियन हो गई। 1990 से 2000 के 10 वर्षों में भारत में मोटर वाहनों की संख्या में लगभग तीन गुना वृद्धि हुई है। प्रत्येक वर्ष औसतन 10 प्रतिशत की वृद्धि हुई है, जो वायु प्रदूषण के लिए एक गंभीर चिंता का विषय है।

महानगरीय शहरों में जल संसाधन न केवल बड़ी आबादी के कारण कम हो रहे हैं बल्कि व्यर्थ खपत और संरक्षण की उपेक्षा के कारण भी कम हो रहे हैं। तेजी से शहरीकरण और औद्योगीकरण के साथ, भारी मात्रा में अपशिष्ट जल नदियों में प्रवेश करता है।

राजस्थान में नगरीकरण का स्तर –

राजस्थान में शहरी जनसंख्या पिछले ग्यारह दशकों के दौरान ग्यारह गुना से अधिक बढ गई है अर्थात 1901 में 1.48 मिलियन से 2011 मे 17.05 मिलियन हो गई। राज्य में नगरीकरण का स्तर 1901 में 14.41 से बढकर 24.87 प्रतिशत हो गया हैं। 2011, कोटा, जयपुर और अजमेर में नगरीकरण का स्तर बहुत अधिक है अर्थात क्रमशः 60.30 प्रतिशत, 52.40 प्रतिशत और 40.10 प्रतिशत जबकि डूंगरपुर (6.4 प्रतिशत), बासंवाडा (7.1 प्रतिशत) प्रतापगढ़ (8.3 प्रतिशत) और जालोर (8.3 प्रतिशत) जिलों में नगरीकरण का स्तर बहुत कम है।[5] लगातार बढ रहे नगरीकरण के कारण एक ओर जहाँ रोजगार साधनों में बढोतरी हुई है वही यह अनेक नगरीय समस्याओं हेतु उत्तरदायी है। नगरीकरण के कारण उत्पन्न साकारात्मक प्रभावो मे शहरी क्षेत्रों मे ग्रामीण लोगो का प्रवासन, शहरी केन्द्रो मे रोजगार के अवसर, परिवहन और संचार सुविधाएँ, शिक्षण सुविधाएँ, जीवन स्तर मे वृद्धि व लोगो को उच्च रहने–सहने की दशाएँ प्रदान की है। वही शहर के विकास पर नाकारात्मक प्रभाव भी पडे है। नगरीकरण मे तेजी और अप्रयुक्त शहरी विकास के कारण काफी समस्याएँ उत्पन्न हुई है जिसके परिणामस्वरूप आवासीय समस्याएँ, जल और स्वच्छता समस्या, आधारभूत सुविधाओं का अभाव तथा मलिन बस्तियों की समस्या एक प्रमुख समस्या के तौर पर उभर कर सामने आई है। साथ ही ठोस अपशिष्ट प्रबधन की समस्या के कारण एवं बढते पर्यावरण प्रदूषण के कारण श्वसन संबंधी रोगो मे भी बढोतरी दर्ज की गई है जो किसी भी क्षेत्र के विकास मे बाधक हो सकती है।

नगरीकरण और जलवायु परिवर्तन –

औद्योगीकरण और नगरीकरण एक दूसरे के पर्याय है। नगरीकरण के कारण पर्यावरण मे अनेक परिवर्तन हुए है। बढता नगरीकरण अनेक पर्यावरणीय समस्याओं को जन्म देता है जिनमे से जलवायु परिवर्तन (ग्लोबल वार्मिग) प्रमुख है। औद्योगीकरण और नगरीकरण पर्यावरण प्रदूषण को बढा रहा है और प्रदूषण के बढने से ग्लोबल वार्मिग मे बढोतरी हो रही है। 2050 तक यह भविष्यवाणी की गई है कि विश्व की 67 प्रतिशत आबादी शहरी क्षेत्रो मे रहने की उम्मीद है (UN2011)[6]। विकासशील देशो मे नगरीकरण बहुत तीव्र दर से बढ रहा है (झांग 2016)[7]। नगरीमरण अक्सर सीधे तौर पर पर्यावरण की गुणवता मे गिरावट से जुडा है। विश्व स्तर पर तापमान मे वृद्धि होगी

और वर्षा अधिक परिवर्तनशील हो जाएगी, जिससे दुनिया भर मे स्थानीय जलवायु प्रभावित होगी और यह बड़े पैमाने पर मानव प्रभावों के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है (आईपीसीसी 2014 ए)[8]।

ग्लोबल वार्मिंग के कारण प्रकृति में बदलाव आ रहा है। कही भारी वर्षा तो कहीं सूखा, कहीं लू तो कहीं ठंड। कही बर्फ की चट्टानें टूट रही हैं तो कहीं समुद्री जल–स्तर में बढ़ोतरी हो रही है। आज जिस गति से ग्लेशियर पिघल रहे हैं इससे भारत और पड़ोसी देशों को खतरा बढ सकता है। ग्लोबल वार्मिंग से फसल चक्र भी अनियमित हो जाएगा इससे कृषि उत्पादकता भी प्रभावित होगी। मनुष्यों के साथ–साथ पक्षी भी इस प्रदूषण का शिकार हो रहे हैं। ग्लोबल वार्मिंग पक्षियों के दैनिक क्रिया–कलाप और जीवन–चक्र को प्रभावित करता है। ग्लोबल वार्मिंग में सर्वाधिक योगदान CO2 का है। 1880 से पूर्व वायुमण्डल में CO2 की मात्रा 280 पार्ट्स पर मिलियन (पीपीएम) थी जो आज आईपीसीसी रिपोर्ट के अनुसार 379 पीपीएम हो गई है। CO2 की वार्षिक वृद्धि दर गत वर्षों में (1995–2005) 1.9 पीपीएम वार्षिक है। आईपीसीसी ने भविष्यवाणी की है कि सन् 2100 आते–आते इसके तापमान में 1.1 से 6.4 CO तक बढ़ोतरी हो सकती है। सदी के अन्त तक समुद्री जल–स्तर में 18 से 58 से.मी तक वृद्धि की सम्भावना है।

निष्कर्ष :

इससे हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि शहरीकरण के कारण पर्यावरण को होने वाले नुकसान के कुछ कारण देश के कानून और नियामक एजेंसियों मे निहित हैं। आज के शहरों में शासन की विफलता के परिणामस्वरूप अनौपचारिक बस्तियों और मलिन बस्तियों का विकास हुआ है जो अस्वस्थ रहने के माहौल का निर्माण करते हैं।

संसाधन उपयोग में दक्षता को बढ़ावा देने वाली शहरी रणनीतियों में सुधार की आवश्यकता पर गंभीरता से ध्यान दिया जाना चाहिए।

महानगरों और अन्य शहरों में वाहनों के प्रदूषण नियंत्रण को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

अनिवार्य मानकों और विनियमन शुल्क और कर प्रोत्साहन, और स्वैच्छिक अनुपालन के माध्यम से ठोस कचरे के उत्पादन को कम करने के लिए तत्काल ध्यान दिया जाना चाहिए।

यदि प्रदूषण को रोकने और अधिक सामाजिक सुविधाएं प्रदान करके जीवन की गुणवता में सुधार करने के लिए पर्याप्त कदम नहीं उठाए गए, तो भारत के शहरी निवासियों का जीवन और अधिक दयनीय हो सकता है, यह स्वास्थ्य के लिए खतरा और सबसे खराब तबाही का कारण हो सकता है।

REFRENCES :-

1. Uttara, S., Bhuvandas, N., & Aggarwal, V. (2012). Impacts of urbanization on environment. International Journal of Research in Engineering and Applied Sciences, 2(2), 1637-1645, ISSN: 2249-3905.
2. Buhaug, H., & Urdal, H. (2013). An urbanization bomb? Population growth and social disorder in cities. Global environmental change, 23(1), 1-10.
3. Chandrasekarayya, T., & Ganesh, P. (2009). Trends and pattern of urbanization in India: An

interstate analysis. Artha Journal of Social Sciences, 8(1), 9-17, ISSN: 0975-3311.
4. Govt. of India, Census of India 2011, New Delhi
5. Khanna, D. (2011). Research Paper on Trends and Patterns in the Levels of Urbanization in Rajasthan (1901 to 2011). International Journal of Research and Analytical Reviews, 6(2), 134-141, ISSN: 2348-1269, PRINT ISSN: 2349-5138.
6. UN 2011 World Urbanization Prospects. The 2011 Revision. United Nations.
7. Zhang, X. Q. (2016). The trends, promises and challenges of urbanization in the world. Habitat international, 54, 241-252.
8. IPCC2014aClimate Change 2014: Synthesis Report.Contribution of Working Groups I, II and III to the Fifth Assessment Report of theIntergovernmental Panel on Climate Change (Core Writing Team, Pachauri,R. K.&MeyerL. A., eds). IPCC, Geneva, Switzerland.
9. Chouhan, B. P., & Kannan, M., (2019). Impacts of Urbanization on Land Use Pattern and Environment: A Case Study of Ajmer City, Rajasthan. Asian Review of Social Sciences, 8(1), 87-91, ISSN: 2249-6319.

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 67-70

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

पर्यावरण कानून के इतिहास पर एक नजर

-Pardeep

M.D.University Rohtak, Haryana

भूमिका :-

मानव तथा पर्यावरण का गहरा सम्बन्ध है। पृथ्वी की उत्पत्ति के बाद और जीवन सम्भव होने तक की सभी घटनाओं में मानव का कोई योगदान नहीं था। लेकिन मानव की उत्पत्ति होने से लेकर और आज तक पर्यावरण पर गहरा प्रभाव पड़ा है। मानव प्राचीन समय से पर्यावरण के साथ मित्रतापूर्ण व्यवहार करता था। लेकिन आज का मनुष्य अपने स्वार्थ के लिए प्रतिदिन इसका शोषण कर रहा है। इसलिए सरकार व समाज के द्वारा समय–समय पर कानून बनाए गए हैं। इस शोध में हम उन सभी कानूनों के इतिहास व पहलू पर नजर डालेगें। भारत में पर्यावरण कानून का इतिहास 125 वर्ष पुराना है। प्रथम कानून सन् 1894 में पास हुआ था। जिसमें वायु प्रदूषण नियंत्रणकारी कानून थे। वर्तमान समय में पर्यावरण संरक्षण एक जटिल समस्या है तथा वह संपूर्ण विश्व के लिए चुनौती है। विश्व में पर्यावरण से सम्बन्धित कानून में 1858 के 'ग्रेट स्टिंक' के दौरान टेम्स नदी में सीवरेज के डंपिगं से गर्मी में इतनी भयानक गंध आने लगी की संसद खाली करनी पड़ी। इसके कारण वहां ससंद में 1860 में पहला पर्यावरण कानून पास किया।

भारत में पर्यावरण को सुरक्षा प्रदान करने के लिए ब्रिटिशकाल में भी कुछ कानूनी बने थे, किन्तु स्वतन्त्रता संशोधन इस दिशा में महत्त्वपूर्ण कदम था। इसके अनुच्छेद 48 ए के अनुसार सरकार देश के पर्यावरण सरंक्षण और सुधार तथा वन एवं वन्य जीवों की रक्षा करने का प्रयास करेगी। 42वें संविधान के अनुच्छेद 51ए के अनुसार भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्त्तव्य होगा कि वह प्राकृतिक पर्यावरण की, जिसके अंतगर्त वन, झील, नदी और अन्य जीव है, रक्षा करें और उनका सुधार करें तथा प्राणीमात्र के प्रति दया–भाव रखें। भारत सरकार द्वारा सन् 1980 में पर्यावरण मंत्रालय की स्थापना की गई।

कानूनी स्थिति :-

प्रदूषण से पर्यावरण को सुरक्षित रखने के लिए संसार के कई देशों में कानून बनाए हैं, ये तीन श्रेणियों में बांटा गया है। सामान्य कानून इग्लैंड के परपरागत कानूनी की व्याख्या है। भारतीय संविधान का अनुच्छेद 372 कॉमन लॉ पर आधारित है। दूसरा विशेष विधान–जल एवं वायु प्रदूषण, जैसे भारतीय संविधान विश्व का पहला संविधान है। जिसमें पर्यावरण के लिए विशिष्ट प्रावधान हैं। भारतीय संविधान की प्रस्तवना यह सुनिश्चित करती है कि हमारा देश समाजवादी समाज की अवधारणा पर आधारित है। तीसरा प्रदूषण नियंत्रण कानून भारत में कई

इस प्रकार के कानून बनाए हैं।

पर्यावरण दिवस की शुरूआत :-

पर्यावरण दिवस का इतिहास पर्यावरण प्रदूषण की समस्या पर सन् 1972 में संयुक्त राष्ट्र संघ ने स्टॉकहॉम में विश्व भर के देशों का पहला पर्यावरण सम्मेलन आयोजित किया। इसमें 119 देशों ने भाग लिया और पहली बार एक ही पृथ्वी का सिद्धान्त मान्य किया। इस सम्मेलन में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (NEP) का जन्म हुआ तथा प्रतिवर्ष 5 जून को पर्यावरण दिवस आयोजित मनाा तथा लोगों को पर्यावरण के प्रति जागरूक करना था।

भारत में पर्यावरण संरक्षण कानून को 30 नवम्बर 1972 को संसद में प्रस्तुत किया और यह जल प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण अधिनियम 1974 कहलाया। इसमें जल प्रदूषण रोकने के उपाय करके स्वच्छ जल आपूर्ति सुनिश्चित कर सके। इस कानून ने एक केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड तथा राज्यों के प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की स्थापना की। इस कानून के अनुसार, कोई व्यक्ति जो जान बूझकर जहरीले अथवा प्रदूषण फैलाने वाले तत्वों को पानी में प्रवेश करने देता है तो उसको सजा मिलेगी।

जल प्रदूषण अधिनियम 1977 एक अन्य महत्त्वपूर्ण कानून है। जिसमें प्रदूषण बोर्डो को अधिकार देता है कि किसी भी औद्योगिक परिसर में प्रवेश का अधिकार व किसी भी जल में छोड़े जाने वाले तरल कचरे के नमूने लेने का अधिकार। वायु (प्रदूषण एवं नियंत्रण) अधिनियम 1981 – बढ़ते औद्योगिकरण के कारण पर्यावरण में निरन्तर हो रहे वायु प्रदूषण तथा इसकी रोकथाम के लिए यह अधिनियम बनाया गया। इसकी प्रस्तावना में कहा गया कि इसका मुख्य उद्देश्य पृथ्वी पर प्राकृतिक संसाधनों के सरंक्षण हेतू समुचित कदम उठाना है। इस अधिनियम में मुख्यतः मोटर–गाड़ियों और अन्य कारखानों से निकलने वाले धुंए और गंदगी का स्तर निर्धारित करके तथा उसे नियंत्रित करने का प्रावधान है। 1987 में इस अधिनियम में ध्वनि प्रदूषण को भी शामिल किया गया। इसके तहत राज्य के किसी भी क्षेत्र को वायु प्रदूषित क्षेत्र घोषित किया जा सकता है व प्रदूषण नियंत्रित क्षेत्रों औद्योगिक क्रियाओं को रोकना शामिल है।

वन्य जीवन संरक्षण अधिनियम 1972 में पारित किया गया। भारत जीव–जंतुओं और वनस्पतियों के समाप्त होने के खतरे में पड़ी प्रजातियों के अर्न्तराष्ट्रीय व्यापार संबधी समझौता(476) का सदस्य बना। भारत में सिंह के सरंक्षण के लिए 1972 में, बाघ के लिए 1973 में, मगरमच्छ के लिए 1984 में परियोजनाएं चलाई गई।

वन संरक्षण अधिनियम 1980 भारत सरकार के द्वारा वनों के संरक्षण तथा वनों के विकास के लिए पारित किया। इस अधिनियम का मुख्य उद्देश्य वनों का विनाश और वन भूमि को गैर–वानिकी कार्यों में उपयोग से रोकना था। इसमें वन संबधी योजनाएं इस प्रकार हों ताकि वन संरक्षण को बढ़ावा मिले। वनों की कटाई जहां तक सम्भव हो रोका जाना चाहिए। पशुओं के लिए चारागाहों को ध्यान रखना चाहिए व चारे के उत्पादन हेतू विशेष प्रावधान किये जाने चाहिए।

संयुक्त राष्ट्र का प्रथम मानव पर्यावरण सम्मेलन 5 जून, 1972 में स्टॉकहॉम में संपन्न हुआ। इसी से

प्रभावित होकर भारत ने पर्यावरण के सरंक्षण के लिए पर्यावरण(सरंक्षण), 1986 पास किया। इस अधिनियम का मुख्य उद्देश्य वातावरण में घातक रसायनों की अधिकता को नियंत्रित करना व पारिस्थितिकी तंत्र को प्रदूषण मुक्त रखने का प्रयास करना है। इस अधिनियम में 26 धाराएं है। जिन्हें 4 अध्यायों में बॉटा गया है।

यह कानून पूरे देश में 19 नवम्बर 1986 से लागू किया गया। इसके उद्देश्यों में पर्यावरण का सरंक्षण एवं सुधार करना। मानव पर्यावरण के स्टॉकहॉम सम्मेलन के नियमों को कार्यन्वित करना। मानव, प्राणियों, जीवों, पादपों को संकट से बचाना। पर्यावरण संरक्षण हेतू सामान्य एवं व्यापक विधि निर्मित करना। यह अधिनियम एक व्यापक कानून है। इसके द्वारा केन्द्र सरकार के पास ऐसी शक्तियां आ गई है। जिनके द्वारा वह पर्यावरण की गुणवत्ता मानक निर्धारित करने, औद्योगिक क्षेत्रों को प्रतिबंध करने, दुर्घटना से बचने के लिए सुरक्षात्मक उपाय निर्धारित करने जैसे प्रावधान शामिल हैं। जैव–विविधता सरंक्षण अधिरियम, 2002 – भारत विश्व में जैव–विविधता के स्तर पर 12वें स्थान पर आता है। अकेले भारत में लगभग 45000 पेड़–पौधों व 81000 जानवरों की प्रजातियॉ पाई जाती हैं। जो विश्व की लगभग 7.1 प्रतिशत वनस्पतियों तथा 6.5 प्रतिशत जानवरों की प्रजातियों में से हैं। जैव–विविधाता सरंक्षण हेतू केन्द्र सरकार ने सन् 2000 में एक राष्ट्रीय जैव–विविधता सरंक्षण कियानवयन योजना शुरू की। जिसके गैर सरकारी संगठनों, वैज्ञानिकों, पर्यावरणविदों तथा आम जनता को भी शामिल किया गया। इसी प्रक्रिया में सरकार ने जैव विविधिता संरक्षण कानून 2002 पास किया। जो इस दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम था। वर्ष 2002 में पारित इस कानून का उद्देश्य है– जैविक विविधता की रक्षा की व्यवस्था की जाए।

राष्ट्रीय जलनीति, 2002 – जल की समस्या के लिए 1 अप्रैल 2002 को राष्ट्रीय जल नीति पारित की। इसमें जल बंटवारे की प्रक्रिया में प्रथम प्राथमिकता पेयजल को दी गई है। इसके बाद सिंचाई, पन बिजली आदि को स्थान दिया। पर्यावरण तथा वन मंत्रालय ने दिसम्बर 2004 को राष्ट्रीय पर्यावरण नीति 2004 का ड्राफ्ट जारी किया। इसमें संकटग्रस्त पर्यावरणीय संसाधनों का संरक्षण करना। संसाधनों के प्रबंधन में खुलेपन, उत्तरदायित्व तथा भागीदारिता के मूल्यों को शामिल करना। वन अधिकार अधिनियम 2006 वन संबधी नियमों का एक महत्त्वपूर्ण दस्तावेज हे। इसमें यह जंगलों में निवास करने वाले या वनों पर अपनी आजीविका के लिए निर्भर अनुसूचित जनजातियों के अधिकारों की रक्षा करना है।

इसके अलावा और बहुत कानून हैं जो पर्यावरण संरक्षण पर न्यायपालिका के कुछ महत्त्वपूर्ण निर्णय इस प्रकार श्रीराम गैर रिसाव मामला 1987, गंगा प्रदूषण मामला 1988, पर्यावरण जागरूकता मामला 1992, दिल्ली वाहन प्रदूषण मामला 1994, ताजमहल का मामला 1997 इत्यादि।

निष्कर्ष :–

भारत संसार के उन थोड़े से देशों में से एक है जिनके संविधनों में पर्यावरण का विशेष उल्लेख है। भारत ने पर्यावरणीय कानूनों का व्यापक निर्माण किया है तथा हमारी नीतियॉ पर्यावरण संरक्षण में भारत की पहल दर्शाती

है। पर्यावरण संबधी सभी विधेयक होने पर भी भारत की स्थिति काफी गंभीर बनी हुई है। भारत में इतने कानून होने के बावजूद भी समस्या गंभीर है। इसका कारण है कि इन कानूनों को सही तरीके से लागू ना करना है। इनको सही नियमों के साथ लागू करना चाहिए। दूसरी तरफ इन कानूनों को आम जनता को जानकारी नहीं है। इसके लिए विभिन्न स्कूलों, कालेजों, विश्वविद्यालयों व अन्य शिक्षण संस्थानों में सेमिनार व जागरूकता के प्रोग्रामों का आयोजन करवाना चाहिए व टैलिविजन, रेडियो व अन्य तरह मीडिया के साधनों का प्रयोग करके लोगों को जागरूक करना चाहिए। अगर ऐसा होता है तो हम अपने पर्यावरण को बचा सकते हैं तथा आने वाली पीढ़ियों को एक शानदार व स्वच्छ वातावरण प्रदान करवा सकते हैं।

संदर्भ सूचि :-

1. Jim Flannery 'The Weather Makers' Text Publishing Company Melborn, Australia.
2 Robin Wall Kimmerer "Braiding Sweetgrass' London
3 B. Kingsalver "Animal' Vegetable, Miracle' Harper Calling 2007, United States
4 महेश वर्णपाल' पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी' कोसमो प्रकाशन नई दिल्ली– 2021
5 दीप्ति जैन 'पर्यावरण शिक्षा' नई दिल्ली
6 The Times of India 5 June, 2020
7 दैनिक भास्कर 5 जून, 2021

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 71-73

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

पर्यावरण और विज्ञान के संबंध पर एक नजर

-Parvender Singh
KUK University, Haryana

पर्यावरण और विज्ञान का गहरा संबंध है। क्योंकि विज्ञान के द्वारा जो खोज आविष्कार किये जाते है, उनका पर्यावरण पर गहरा प्रभाव पड़ता है। जैसे परमाणु बम, हाईड्रोजन बम व विमान ईंधन इत्यादि। इसलिए विज्ञान के अन्दर एक शाखा पर्यावरण विज्ञान है। जिसमें हम पर्यावरण और विज्ञान के बारे में पढ़ते हैं। पर्यावरण के भौतिक रासायनिक और जैविक पर्यावरणीय व्यवस्था के अध्ययन के लिए समन्वित परिमाणात्मक और अन्तरविषयक दृष्टिकोण उपलब्ध कराता है। पर्यावरणीय वैज्ञानिक पर्यावरण की गुणवत्ता की निगरानी करते हैं। स्थलीय और जलीय पारिस्थितिकी व्यवस्था पर मानवीय कृत्यों की व्याख्या करते हैं तथा पारिस्थितिकी व्यवस्था की बहाली के लिए रणनीतियां तैयार करते हैं। इसके अलावा पर्यावरणीय वैज्ञानिक योजनाकारों की ऐसे भवनों परिवहन कोरिडोरों तथा उपयोगिताओं के विकास तथा निर्णाण में सहायकता करते हैं। जिनसे जल संसाधनों की रक्षा हो सके तथा भूमि का सदुपयोग हो सके।

पर्यावरणीय विज्ञान की अन्तर–विषयक प्रकृति होने के कारण विशेषज्ञ दल पर्यावरणीय अनुसंधान करने या पर्यावरणीय प्रभाव के विवरण जैसा कि अमरीकी राष्ट्रीय पर्यावरणीय नीति अधिनियम (एन.ई.पी.ए.) या सरकारी कानूनों के तहत अपेक्षित हैं। सामान्यतः एक साथ मिल–जुलकर कार्य संचालित करते हैं। चूंकि ज्यादातर पर्यावरणीय मुद्दे मानवीय गतिविधियों से संबंधित होते हैं। अतः पर्यावरणीय विज्ञान के साथ अक्सर अर्थशास्त्र, विधि और समाज–विज्ञान विषयों का अध्ययन भी कराया जाता है। पर्यावरणीय विज्ञान के अंतर्गत जलवायु परिवर्तन, सरंक्षण, जैव–विविधता, भूमिजल और मृदा संतुषण, प्राकृतिक संसाधनों का प्रयोग, कचरा प्रबंधन, सतत विकास, वायु प्रदूषण और शोर से होने वाले प्रदूषण जैसे मुद्दों को शामिल किया जाता है।

उप–श्रेणियां वातावरणीय विज्ञान के अंतर्गत पृथ्वी की बाहरी गैसीय परत की अन्य प्रणालियों से संबद्धता के साथ नए घटना–क्रिया विज्ञान की जांच की जाती हे। वातावरणीय विज्ञान में मौसम विज्ञान का अध्ययन, ग्रीन हाऊस गैर घटना क्रिया–विज्ञान, वायुवाहित सम्मिश्रणों के वातावरणीय विखंडन मॉडलिंग, ध्वनि प्रदूषण और यहां तक कि प्रकाश प्रदूषण से संबंधित क्रियाओं का अध्ययन सम्मिलित है। विश्व में बढ़ती गर्मी को देखते हुए भौतिकीविद वातावरणीय प्रचालन और इन्फ्र–रेड विकिरण प्रसार के कम्प्यूटर मॉडल तैयार करते हैं। रसायन शास्त्री वातावरणीय रसायनों और उनकी क्रियाओं की जांच करते हैं। जैविक विज्ञानी पौधों और पशुओं के कार्बन–डाय–ऑक्साईड में योगदान का विश्लेषण करते हैं तथा विशेषज्ञ जैसे कि मौसम विज्ञानी और समुद्र–विज्ञानी वातावरणीय गतिशीलता को समझने में व्यापकाता का संचार करते हैं।

विश्लेषण के विषयों के अंतर्गत पर्यावरण में रासायनिक निम्नीकरण रसायनों के बहु–चरणीय परिवहन तथा बयोटा पर रासायनिक प्रभाव आदि क्षेत्र शामिल हैं। उदाहरणार्थ अध्ययन के तौर पर एक ऐसे लीक कर रहे माल से भरे टैंक के बारे में विचार करें जो कि संकटापन्न प्रजातियों के जलीय क्षेत्र में मिट्टी के ढलान में प्रवेश कर जाता है। ऐसे में भौतिकीविद मृदा प्रदूषण के स्तर को समझने के लिए एक कम्प्यूटर माडल तैयार करेगा। रसायन विज्ञानी मिट्टी के प्रकार में उस साल्वेंट की आणविक स्थिति का मूल्यांकन करेगा तथा जैविक शास्त्री मिट्टी सन्धिपाद, पौधों तथा अन्ततः तालाब में प्रावारकों पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करेगा। संकटापन्न प्रजातियों का जलीय भोजन है। भूविज्ञान के अंतर्गत पर्यावरणीय भूविज्ञान–जल विज्ञान, भौतिकी भूगोल, जलवायु विज्ञान तथा भू–आकृति विज्ञान शामिल है। इसमें समुद्र–विज्ञान तथा अन्य सम्बद्ध क्षेत्र भी सम्मिलित हो सकते हें। मिट्टी कटाव के अध्ययन के उदाहरण के रूप में मृदा वैज्ञानिकों द्वारा भूमि कटाव का अध्ययन के उदाहरण किया जाएगा। जल–विज्ञानी स्थल मार्ग बहाव में तलछट परिवहन की जांच में सहायता करेंगे।

भौतिकीविद पानी प्राप्त होने में लाइट करें। जीव–विज्ञानी ट्रॉसमिशन में परिवर्तनों के मूल्यांकन में योगदान करेंगे। जीव–विज्ञानी पानी में गंदगी बढ़ने से सका वनस्पति पर होने वाले प्रभाव की जांच करेंगे। पर्यावरण मूल्यांकन वह प्रक्रिया है, जिसके लिए पर्यावरण सुरक्षा और सत्त विकास पर विचार हो सकता है। पर्यावरणीय मूल्यांकन के अंतर्गत मुख्यतः फील्ड डाटा एकत्र् करके इसका पर्यावरण और विकास से संबंधित विभिन्न शाखाओं के जरिए परस्पर संबंधी का मूल्यांकन करना हे। पर्यावरणीय सूक्ष्म जीवविज्ञान पर्यावरण में सूक्ष्म जीवों के मिश्रण तथा शरीर क्रिया विज्ञान का अध्ययन है।

इस मामले में पर्यावरण से आशय मिट्टी, जल, वायु और ग्रह पर होने वाले अवसाद हैं और इनमें इन क्षेत्रों में रहने वाले पशु तथा पौधे भी शामिल किए जा सकते हैं। पर्यावरणीय सूक्ष्म जीव विज्ञान में बायो आर्गेनिज्म का अध्ययन भी शामिल हो सकता है। विज्ञान आधुनिक युग की एक क्रान्ति है। यह आधुनिक युग की देन है। यह विकास का आधान पर्यावरण है। हमें अपने जीवन की आवश्यक वस्तुओं का प्रयोग भी करना है और पर्यावरण को भी बचाना है। विज्ञान ने हमें बहुत सारी सुविधांए प्रदान की। जैसे बिजली का आविष्कार से हम कितने काम कर सकते हैं। लेकिन बिजली के कारण हमें कितना पर्यावरण के नुकसान को झेलना पड़ता है। इसलिए हमें बिजली का कम से कम प्रयोग करना चाहिए या फिर हमें सौर ऊर्जा के साथ बिजली का प्रयोग करना चाहिए। इसी प्रकार हमें वाहनों को ईधन के प्रयोग में डीजल व पैट्रोल के स्थान पर हमें सौर ऊर्जा का प्रयोग करना चाहिए।

एक तरफ हम विज्ञान से लाखें प्लास्टिक का सामान बना रहे हैं जो हमारे पर्यावरण के लिए हानिकारण है। इसलिए हमें इनके स्थान पर ऐसे समान का प्रयोग करना चाहिए जो दोबारा से प्रयोग किया जा सके। हमारे लिए पर्यावरण बहुत जरूरी है। इसलिए हमें बहुत सारे पेड़–पौधे लगाने चाहिए और वर्षा के पानी को बचाना चाहिए।

निष्कर्ष :–

इस प्रकार हमने देखा कि हमारे लिए विज्ञान भी जरूरी है और पर्यावरण भी। इसलिए हमें जो भी विज्ञान के द्वारा खोज करनी है उसको पर्यावरण को ध्यान में रखकर करनी चाहिए। एक तो विज्ञान ने जो इतने हथियार बनाए है, उनको शान्ति समझौतों के द्वारा नष्ट कर देना चाहिए। दूसरा हमें विज्ञान का प्रयोग हमेशा अच्छे के रूप में करना चाहिए। विज्ञान में भी खोज करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि यह हमारे पर्यावरण को

तो नुकसान तो नहीं पहुंचा रही हो। इस शोध के द्वारा हम पर्यावरण व विज्ञान का तालमेल किस प्रकार हो यह बताया है। क्योंकि दोनों एक सिक्के के पहलू हैं। अन्त में हम कह सकते हैं कि विज्ञान और पर्यावरण मानव की आवश्यकताओं के लिए जरूरी है।

सन्दर्भ सूचि :-

1 दीप्ति जैन (पर्यावरण शिक्षा) नई दिल्ली।

2 दैनिक जागरण 5 जू. 2019

3 जलवायु परिवर्तन एक लेख डेविड वाल्स

4 रनडोन अलर ''प्रदूषण'' नई दिल्ली।

5 कोलर्बट ''एकोलोनी'' इग्लैड 2017

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 74-77

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

चौटाला गांव पर नहरी पानी से पर्यावरणीय समस्याएं

–प्रदीप कुमार

प्राध्यापक वनस्पति विज्ञान एम.डी. स्नातकोतर महाविद्यालय, पल्लु

–कृष्णलाल

प्राध्यापक भूगोल के.आर. कन्या महाविद्यालय, बोलावाली संगरिया

परिचय :–

"भारत देश गांवों का देश है। महात्मा गांधी ने कहा था तक भारत की आत्मा गांवों में निवास करती है। भारत की 70 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है तथा गांवों में रहने वाली जनसंख्या प्राथमिकताओं में संलग्न है। ऐसे ही गांव में एक गांव चौटाला हरियाणा प्राथमिंक सरसी जनपद में डबवाली इकाई में स्थित है। चौटाला गांव 29'46' 60" उत्तरी आंकाश था 74' 31' 60" पूर्वी देशांतर के मध्य स्थित है। गांव चौटाला जो पश्चिम में संगररया, पूर्व में जाखेडा, अनूप शहर था उत्तर में तसकें की ढाणी, दतक्ण में आशा खेडा, सालीवाला, नगराना इत्यादि से तिरा हुआ है।"

वर्तमान समय में चौटाला गांव विकसित गांव की श्रेणी में आता है जहां पर चौटाला गांव के विकसित होने के कारण, कुछ पर्यावरणीय बदलाव तथा समस्याएं भी दिखाई पड़ती है। इन पर्यावरणीय समस्याओं में भूमि अपरदन जैसा की भूमि की उर्वरता में कमी मृदा अपरदन, विभिन्न फसलीय रोगों तथा वायुमंडल में उत्पन्न अनेक हानिकारक गैसें इत्यादि का प्रभाव पड़ा है। प्रस्तुत शोध–पत्र में इन विभिन्न पर्यावरणीय समस्याओं के विवरण को दर्शाया गया है तथा इनकी ओर ध्यान आकर्षण करने के लिए एक विनम्र प्रयास किया गया है।

अध्ययन का उद्देश्य :–

प्रस्तुत शोध कार्य के अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य है कि गांव चौटाला के बदलाव तथा इसमें उत्पन्न पर्यावरणीय समस्याओं के बारे में ध्यान आकर्षित करवाना हमारा प्रमुख उद्देश्य है।

शोध– विधि :–

प्रस्तुत शोध में ग्राम पंचायत चौटाला से प्राप्त आंकड़े तथा इसके साथ साथ ही ग्रामीण लोगों के द्वारा प्राचीन तथा नवीन ग्रामीण समस्याओं तथा वर्तमान ग्रामीण समस्याओं के बारे में लोगों के विचारों का समावेश किया गया है तथा आंकड़ों की विधि का समावेश किया गया है।

विवरण :–

स्वर्गीय चौधरी देवीलाल जो कि भारत के भूतपूर्व उपप्रधानमंत्री तथा किसानों के मसीहा थे। जिनके कारण ही गांव चौटाला का नाम भारत देश के सामने उभर कर आया तथा उनकी किसान समर्थित नीतियां गांव चौटाला

के लिए एक विशेष पहचान का केंद्र बनी।

हरियाणा प्रारंभ से ही ठाकुरों का जाटों का क्षेत्र रहा है। इसलिए गांव चौटाला में भी जाटो तथा ठाकुरों का बहुत प्रभाव था। यदि प्राथमिक रूप से देखा जाए तो ठाकुर सर्वप्रथम इस गांव के उदभव से पहले भी यहां पर शासन करते थे। इसके बाद सहारण ने इस गांव चौटाला को बसाया था। इसके बाद गोदारा जाति के लोग आए। जो लूणिया गांव से संबंध रखते थे। (लूणीया गांव वर्तमान में रावला खाजूवाला में स्थित है। इसके बाद में नोखा मंडी से सिहागो का आगमन इस गांव में हुआ। गोदारा सहारण तथा सिहाग इन तीनों जातियों ने कुंडली बनवाकर इस गांव चौटाला का नामकरण किया तथा इसे बसाया। आशाखेड़ा गांव गोदारा जाति के जाटों ने बसाया था। भारूखेड़ा साहरणों की देन है तथा तेजाखेड़ा गांव देवी लाल के परदादा तेजाराम ने बसाया था। जिसके कारण इसका नाम तेजाखेड़ा रखा गया।

चौटाला गांव में नहर निर्माण से पूर्व समस्याएं :-

आरम्भ में जब गांव को बसाया गया था तो यहां सबसे बड़ी समस्या पीने के पानी की थी तथा आरम्भ में लोग छोटे छोटे तलाबो (जोहड़ों से पीने के पानी की व्यवस्था करते थे। यह जोहडिया वर्षा के समय पानी से भर जाती थी। कई बार बर्षा न होने के कारण गांव के लोगों को अकाल तथा भुखमरी का शिकार भी होना पड़ता था। धीरे–धीरे इन स्थितियों से उभरने के लिए ग्रामीण लोगों के सहयोग से साहरणो ने गांव में सबसे पहला कुआं खुदवाया। जिसके पानी का उपयोग पीने के लिए अत्यधिक मात्रा में किया जाता था। इसके बाद दूसरा कुआं गोदारा, जाटों ने बनवाया, जिसके पानी का उपयोग गांव का उत्तर हिस्सा करता था तथा तीसरा कुआं सिहाग जाटों ने बनवाया था। जिसके अवशेष वर्तमान गांव के मुख्य बाजार के वाटर वर्कस में स्थित है।) इन कुओं से पानी लाव (जो कि चमड़े की बनी पड़ी थैली) द्वारा निकाला जाता था। इसमें प्रयुक्त होने वाली रस्सी घास फूस की बनी होती थी। बैलों को लाव के साथ जोड़कर उनके द्वारा कुओ से पानी निकाला जाता था।

जातिय भेदभाव तथा चौधरी जाटों के प्रभाव के कारण गांव के प्रत्येक कुए पर अलग–अलग जाति के घाट बने होते थे । जिससे प्रत्येक जाति के लोग अपने–अपने घाट से पानी भरते थे। वर्तमान समय में लगभग 2006 तक इन कुँओं के जल का उपयोग किया जाता था जिसके पश्चात इन कुओं के जल का उपयोग बंद कर दिया गया। जिसका कारण यह था कि इनका जल प्रदूषित हो चुका था तथा इनका जल स्तर समाप्त हो चुका है। अब केवल यह अवशेष मात्र रह गए है।

इन कुंओं के अतिरिक्त गांव में अनेक छोटी–छोटी जोहडियो तथा तालाबों का निर्माण करवाया गया। जिसमें चौधरी की जोहड़ी (जिसका निर्माण ओमप्रकाश हीटलर के पिता ने करवाया था) थाने की जोहड़ी माला वाला जोहड़ा तथा राम सागर जोहड़ा इत्यादि प्रमुख थे। किसानों की दशा भी उस समय अत्यधिक दयनीय थी। गांव की संपूर्ण उपजाऊ भूमि जो कि (52000 बीघा) चार गांव आशाखेड़ा भारूखेड़ा तेजाखेडा चौटाला को मिलाकर) थी। वर्तमान समय में केवल साढ़े 19000 बीघा ही गाँव चौटाला की उपजाऊ भूमि है। सारी जाटों के अधीन थी। गांव के छोटे किसान केवल उनकी भूमि पर कृषि करते थे। उन्हें भूमि की कुल फसल का दो हिस्से जमीदार के तथा एक हिस्सा किसान का होता था। जो उस पर किसी करता था। जिससे किसान भूमि के रखवाले ही बनकर रह जाते थे, तथा जमीदार (जाटों द्वारा घोषित किए जाते थे। इसके अतिरिक्त मौसम आधारित कृषि होने के कारण एवं परंपरागत कृषि होने के कारण किसानों की स्थिति अत्यधिक दयनीय थी। भूमि का लगान देने में असमर्थ होने

के कारण किसान जमीदारों के गुलाम बन कर रह जाते थे।

वर्तमान स्थिति में समस्याएं :-

भारत पाक विभाजन के समय लगभग 1943–44 में लोकतथ्यों के अनुसार गांव में भाखड़ा नहर के द्वारा दो शाखाओं को गांव चौटाला की सिंचाई के लिए निकाला गया। जिसमें एक शाखा गांव के उत्तर दिशा में तथा दूसरी शाखा गांव के दक्षिण दिशा में निकाली गई। दोनों शाखाओं में पानी मोजगढ़ हेड से आता है जो गांव अबुबशहर से कुछ ही दूरी पर स्थित है।

आरंभ में दोनों ही नहरे कच्ची थी इसके बाद में सन 1966 में हरियाणा का एक नए राज्य के रूप में उदय हुआ तथा स्वर्गीय श्री बंशीलाल जो मुख्यमंत्री बने थे। उनके शासनकाल में इन दोनों शाखाओं को पक्का करवाया गया। तथा गांव में बिजली भी इन्हीं की सरकार में आई थी। इनके बाद स्व. चौधरी देवीलाल जी हरियाणा के मुख्यमंत्री बने तथा इन्होंने गांव के अधूरे कार्यों को पूरा करवाया।

समस्याएं :-

नहर आने के कारण गांव विकासशीलता एवं प्रगति की ओर अग्रसर होने लगा। जिसके परिणाम स्वरुप गांव का आधुनिकरण होने लगा। सरकार ने जमीदारी प्रथा को खत्म कर भूमि पर कृषि करने वाले छोटे किसानों को भूमि के मालिक घोषित कर दिए तथा उनमें कृषि योग्य भूमि को बांट दिया गया।

नहर आने के कारण किसानों ने कृषि पद्धति में बदलाव कर दिया। अब वे परंपरागत कृषि छोड़कर आधुनिक कृषि करने लगे। विभिन्न तकनीकी में युक्त कृषि यंत्रों का प्रयोग करने लगे तथा भूमि की उपजाऊ शक्ति को बढ़ाने के लिए अनेक रसायनिक खादो इत्यादि का प्रयोग किया जाने लगा। नहरी पानी के अलावा खेतों में सिंचाई के लिए ट्यूबवेल, बोरवेल, इत्यादि का उपयोग किया जाने लगा। जिसका परिणाम यह हुआ कि भूमि की उपजाऊ शक्ति दिन प्रतिदिन कम होने लगी। इसके अतिरिक्त फसलों की वृद्धि व रोगों की रोकथाम के लिए अनेक कीटनाशकों व रासायनिक दवाइयों का उपयोग किया जाने लगा। जिसके कारण वायुमंडल अत्यधिक प्रदूषित होने लगा था तथा हानिकारक जीवों के साथ–साथ लाभदायक जीवों का भी अंत हो गया।

नहर आने से पूर्व गांव की भूमि पर अत्यधिक पेड़ पौधे हुआ करते थे तथा अनेक झाड़ीयां भी थी जिसमें कीकर, शहतुत, शीशम, नीम, खेजडी इत्यादि। अत्याधिक मात्रा में थे। लेकिन वर्तमान में किसानों ने अपने भूमि के विस्तार तथा आमदनी को बढ़ाने के लिए इन पेड़ों को काटना आरंभ कर दिया। जिसके परिणाम स्वरूप भूमि की उपजाऊ क्षमता में कमी आई। इसके अतिरिक्त ग्रीन हाउस का अत्यधिक निर्माण, इत्यादि पर्यावरण के प्रदूषण के अनेक कारको को समावेश करते हैं। नहर के निर्माण में भी अनेक कमियां सामने आई। जिसमें नहर का समतल न होना, कहीं–कहीं पर नहर की ऊंचाई अधिक है तो कहीं पर नहर अत्यधिक नीचे है। उदाहरण स्वरूप देखा जाए तो गांव के उत्तर की नहर अत्यधिक नीची तथा दक्षिणी नहर ऊंचाई पर स्थित है। इसके अतिरिक्त नहर विभिन्न स्थानों पर मरम्मत करवाने योग्य है जिसके कारण इन स्थानों से पानी रिस रिस कर बाहर की तरफ आ जाता है। जो भूमि में कटाव उत्पन्न करते. है तथा उसे दलदली बना देते हैं। जो गांव के छोटे किसानों के लिए अधिक घातक होती जा रही है।

इसके अलावा किसान गेहूं तथा अन्य फसलों के भूसे को जो भूमि पर बिखरा हुआ होता है उसमें आग लगा देते है जिसके कारण वायुमंडल में कार्बन मोनो ऑक्साइड, क्लोरोफ्लोरोकार्बन इत्यादि गैसों की मात्रा में वृद्धि

होने लगी है। इस क्रिया खेतों में खड़े हरे पेड़–पौधों को अत्यधिक नुकसान पहुंचता है। अत्यधिक तापमान के कारण पतियां जलकर राख हो जाती है तथा पेड़ पौधे केवल निर्जीव हो जाते है इस क्रिया से भूमि पर अत्यधिक राख उत्पन्न हो जाती है तथा भूमि मे ताप भी वृद्धि होती है जिससे फसले नाइट्रोजनीकरण की क्रिया नहीं कर पाती है तथा जिससे भूमि धीरे–धीरे अनउपजाऊ तथा बंजर हो जाती है।

संदर्भ सूची :-

1. लाल कृष्ण हरियाणा एवम् राजस्थान की जनसंख्या का भोगोलिक अध्यन सिरसा एवं हनुमानगढ़ जिले का तुलनात्मक विश्लेषण।
2. स्वामी केशवानंद संगरिया (1995) स्मारिक एवं मानचित्रावली जिला हनुमानगढ़ भूगोल विभाग, सिरसा
3. अलग वाई. के. (1990) एग्रो कलाइमेटिक प्लानिंग एवं रीजनल डेवलपमेंट इंडिया जनरल ऑफ एग्रीकल्चर इकोनोमिक।
4. सिरसा जन सांख्यिकी विभाग

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 78-81

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

मानव अधिकारों के लिए संघर्ष : भारत में मुस्लिम महिलाओं की दशा

–डॉ. विक्रम कुमार
अनुसंधान पर्यवेक्षक, विधि विभाग,
–प्रवीण कुमार, अनुसंधान शोध छात्र,
श्री खुशालदास विश्वविद्यालय, पीलीबंगा, हनुमानगढ (राजस्थान) भारत

सार :

भारत के पुरुष प्रधान समाज में आज भी मुस्लिम महिलाओं को संघर्ष करते हुए देखा जा सकता है। महिलाओं की समाज में स्थिति सुधारने के संबंध में कई बार अधिनियमों कानूनों के माध्यम से प्रयास होते रहे है। लेकिन जो स्थिति समाज द्वारा बना दी गई है उसमें से मुस्लिम महिलाओं का निकलना दुर्भर हो गया है जो यह दर्शाता है कि महिलाएं पुरुषों के अधीन है। यह भी कि महिलाएं अपने अस्तित्व के लिए पुरुषों पर निर्भर है। यह स्थिति आज भी बनी हुई है।

पहले से लेकर आज तक यही सोच रही है कि महिला एक वस्तु है और उसे धर्म की हर एक बात को बारीकी से सहन करना पड़ेगा इसको बदलने की जरुरत है। आने वाले समय में हम देखेंगे कि एक अच्छा समय धर्म या कानून वह है जो हमारे इस प्रगतिशील समाज की मांगो को और अधिक आगे ले जाने के लिए पर्याप्त रुप से व्यवहार्य हो। संसार में सबसे पहले इस्लाम धर्म द्वारा बच्चियों को मारने की प्रथा का समापन किया था और समाज में महिलाओं का सम्मान और गरिमा के कद को और अधिक बढ़ा दिया था। इसमें देखनें कि बात यह है कि क्या यह बढ़ाया हुआ सम्मान अभी भी उनके व्यक्तिगत कानूनों के हर कोने में मौजूद है। इस्लाम धर्म की धार्मिक भावनाओं के इस मुखौटें के पिछे किसी भी महिला के मूल मानवअधिकारों का गला नहीं घोंटा जा सकता है।

इस पत्र का उद्देश्य मुस्लिम महिलाओं के मानवाअधिकार व उनके व्यक्तिगत कानूनों के बीच का विश्लेषण करना हैं। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए शोधकर्ता एक मुस्लिम महिला के खिलाफ हो रही सामाजिक बुराई और मानवअधिकारों को देख कर उनके व्यक्तिगत कानून को प्रकाश में लाना चाहता हैं। यह पत्र ये दर्शाना चाहता है कि व्यक्तिगत कानूनों और सामाजिक सुधारों को एक बार फिर से लिखा जाना चाहिए।

परिचय :

यह देखने को अक्सर मिलता है कि जब भी मुस्लिम व्यक्तिगत कानून में किसी भी प्रकार का परिर्वतन या कोई टिका टिप्पणी की जाती है तो मुस्लिम समुदाय द्वारा हंगामा किया जाता है। इस पत्र में मुस्लिम समुदाय

के किसी भी धार्मिक भावना को ठेस पहुचाने का या उन पर प्रभाव डालने का कोई भी उद्देश्य नहीं है बल्कि उन मुद्दों पर प्रकाश डालना है जो इस विशेष समुदाय की महिलाओं को पीड़ा में डाल रहे है।

मुस्लिम समाज में मुख्य रुप से केवल इस समुदाय की महिलाओं को बहुत ही पुरानी रुढिवादी धारणाओं के कारण पीड़ित किया जा रहा है जो उनके द्वारा ही बनाए गए हैं। विवाह संपति आदि के संबंध में होने वाले सभी कानूनों के बावजूद मुस्लिम महिलाओं को ऐसे अधिकारों से वंचित रखा गया है। लेकिन हमारे पास सानिया मिर्जा, महबुबा मुफ्ती सईद जैसे कुछ ही उदहारण मोजूद है पर यह भी बहुत कम है और इन कुछ के ही आधार पर बहुत ही कम संख्या में सशक्त महिलाएं है, हम उनकी इस दशा को नजरअंदाज नहीं कर सकते हैं। जो अपने घरों की चार दीवारी के पीछे परेशानी और आत्म सम्मान के लिए जूझ रही है, वे अपनी इस दशा और परिस्थितियों को देखते हुए इन सब पीड़ाओं को गले लगाने पर मजबुर हो गई है, उन्होनें इसी को ही अपनी नीयती समझ लिया है।

लेकिन हम एक संवैधानिक और लोकतांत्रिक देश का हिस्सा होने के नाते इन सब मुद्दों को इस्लामी कानून के साथ हस्तक्षेप मानकर मुस्लिम समुदाय के निजि मामले के रुप में सीमित करके एक तरफ नहीं रख सकते है। इन पीड़ित मुस्लिम महिलाओं के जीवन में खुशियों को लाना आज के उभरते समय की जरुरत है।

यह देखने में आता है और माना जाता है कि मुस्लिम महिलाओं को भी तलाक का समान अधिकार दिया गया है जैसा कि एक मुस्लिम पुरुष को है पर यह पूरा सच नहीं है केवल पुरुष को ही यह अधिकार मिला है। इस अधिकार के माध्यम से पुरुष मनमानी करते है यह सब बंद होना चाहिए व पुरुष की तरह महिला को भी समान रुप से देखा जाना चाहिए ताकि बिना किसी भय या दमन के आसानी से अधिकारों का प्रयोग कर सके।

कुछ ऐसे कारण है जिन पर ध्यान देने की आवश्यकता है कि क्य मुस्लिम महिलाओं को इस देश का हिस्सा नहीं माना जाता है, क्या वो ऐसे सभी अधिकारो की हकदार नहीं है जो इस देश कि अन्य महिलाओं द्वारा प्राप्त किए जा रहे हैं। दूसरा क्या वे समाज में सिर्फ घरों की चार दिवारी तक ही व बच्चे पालने के लिए सीमित है। तीसरा क्या उन्हे समाज में एक वस्तु की तरह देखा जाएगा व पुरुष के अधीनस्त ही माना जाएगा, और उन्हे अपने पतियो कि हर बात को मानने के लिए मजबूर किया जाता रहेगा।

इन सब सवालो को हम ऐसे ही नहीं छोड़ सकते यह किसी भी धर्म में नहीं लिखा है कि महिलाओं को उनके अधिकारों से वचिंत किया जाए ऐसी तो कल्पना भी नहीं कि जा सकती है। इसलिए किसी भी व्यक्ति को धर्म का हवाला देकर उसके अधिकारों से उसको वंचित नहीं किया जा सकता है। यह भी कि मुस्लिम महिलाओं के जीवन को किसी पुराने रिती रिवाजों के माध्यम से उन पर किसी भी प्रकार कि बंदिश नहीं लगाई जा सकती है।

इसी तरह वाद सरला मुदग्ल बनाम भारत संघ और दूसरा लिली थॉमस बनाम भारत सघ के मामलो को सही ठहराने के पीछे कुछ वास्तविक कारण है। अब वह समय आ गया है कि मुस्लिम महिलाओं के मानवअधिकारों और व्यक्तिगत कानून के बीच जारी संघर्ष के मुद्दे पर मुस्लिम महिलाओं के सम्मान और गरिमा किसी अन्य धर्म की महिलाओं के समान ही हैं। भारतीय संविधान सभी के लिए समान है और इसके लिए किसी भी धर्म को आगे नहीं लाया जा सकता हैं।

हमारा संविधान का आदर्श किसी भी तरह की ऐसी बात को रोकने पर जोर देते है जो समानता की मूल

धारणा को नष्ट करने की कोशिश करता हैं इसको हम एक उदहारण द्वारा समझ सकते है जैसे अगर कोई पुरुष किसी महिला के प्रति क्रूरता करता है या हत्या करता है तो उसे जेल जाना होगा। यह बात अलग है कि मुस्लिम व्यक्तिगत कानून के माध्यम से पुरुष द्वारा महिला को तीन बार तलाक शब्द का उच्चारण कर उसकी पूरी जिंदगी को तबाह कर देता है ऐसे में उस महिला का क्या कसूर है।

मुस्लिम महिलाओं को भी उनके सम्मान और अधिकार के संबंध में हमारे देश का संविधान उनको औरो की तरह सभी अधिकार प्रदान करता है। किसी भी मुस्लिम महिला की नियति को उसके पति के संयम पर धर्म का नाम देकर तय नहीं किया जा सकता है। अगर हमारें संविधान द्वारा अन्य धर्म की महिलाओं की रक्षा की जा रही है तो मुस्लिम महिलाओं की क्यों नहीं की जा सकती। क्यों व्यक्तिगत कानून और धार्मिक भावनाएं देश की सुधार में बाधक बन रही है।

महिलाओं को क्षिक्षा से वंचित रखना :-

मुस्लिम क्षिक्षाविदों ने अतीत में महिलाओं की क्षिक्षा को प्रतिबंधित करने के लिए इस प्रकार से नियोजित किया है। इन क्षिक्षाविदों का मानना था कि क्षिक्षा से महिलाओं की नैतिकता में गिरावट आ सकती है, ऐसे सामाजिक नुकसान से बचना बेहतर है। यह स्थिति विशेष रुप से चितांजनक है, क्योंकि कुरान हर व्यक्ति को सीखने के लिए प्रोत्साहित करता है, और पैगंबर मोहम्मद न जोर देकर कहा है कि "क्षिक्षा हर मुस्लमान का कर्तव्य है, चाहे वह पुरुष हो या महिला''। जो लोग पैगम्बर के नक्से कदम पर चलना चाहते है उन्हे यह ध्यान रखना चाहिए कि उन्होने अपनी पत्नि को क्षिक्षित करने के लिए एक क्षिक्षक नियुक्त किया था।

निष्कर्ष :

यह एक बहुत ही विवादास्पद मुद्दा है जो हमारी लोकतात्रिक राजनिति की नींव को भी हिला सकता है अगर एक समान नागरिक संहिता की बात की जाती है तो हमारा संविधान यह अधिकार प्रदान करता है जिसमें हर व्यक्ति को समान रुप से देखा जाता है। इस बात पर जब भी प्रकाश डालने की बात आती है तो मुस्लिम समुदाय में आक्रामक हो जाता हैं। लेकिन मुस्लिम महिलाओं के व्यक्तिगत कानून के अलावा मुस्लिम समुदाय की महिलाओं के मानवअधिकारों से जुड़े मुद्दो का समाधान करने के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाने की जरुरत है, क्योंकि उनको आगे लाने के लिए ऐसा करना जरुरी है और हम इन मुद्दों को धर्म का नाम देकर इन्हे समाज से अलग नहीं किया जा सकता।

मुस्लिम समाज यह मानता है कि समान नागरिक संहिता को देखते हुए व्यक्तिगत कानूनों में किसी भी प्रकार के हस्तक्षेप से परे रहते है और वह यह कभी सहन नहीं कर सकते कि उनके कानूनो में कोई छेड़छाड़ की जाए। इस ज्वलनशील मुद्दे को कभी भी एक सांप्रदायिक रुप से नहीं देखा जाना चाहिए बल्कि देश की शांति और सदभाव को लेकर सही सोच से मामलों को हल करना चाहिए। जब भी हम बाहरी दुनीया की तरफ देखते है तो हम अपनी स्थिति सुधारने के बारे में चिंतित होते है। लेकिन हमें सुधार करने क लिए हमें अपनी ही रुढीवादी सोच को बदलकर आगे बढ़ना होगा तभी सुधार हो पाएगा और यह सोच हमारे भीतर ही मोजूद है।

किसी भी देश को तब तक समृद्ध नहीं माना जा सकता जब तक की वह अपने देश में रह रहे लोगो कि बुनियादी और सभी आवश्यकताओं की पूर्ती नहीं करता है, और उनको पूरा करने में सक्षम न हो। हम सभी जानते है भारत में बहुत कई धर्मो के लोग निवास करते है भारत एक विविधता में एकता वाला देश है। लिंग सम्बधी

भेदभाव को कम करने व धर्म की गरिमा को बनाए रखने के लिए एक महत्वपूर्ण कदम उठाना चाहिए। कोई भी व्यक्तिगत कानून मानव अधिकारों को किसी व्यक्ति से अलग नहीं कर सकता वह हर व्यक्ति की बुनियादी आवश्यकताएं है। इस कानून को एक अच्छा कानून माना गया है जो किसी अधिकार का उल्लघंन होने पर उन्हे रोकने का काम करता है।

सदंर्भ :-

1. एनन.ई.मेयर यूनीवर्सल वर्सेज इस्लामिक हयूमन राइटस एमआईसीएच.जे.आइएनटी.एलएल. 304 (1994)
2. एम.के.नवाज इस्लामिक कानून में मानवाधिकारों की अवधारणा (1965)
3. केस लॉ
4. लीगल सर्विसेज ऑफ इण्डिया

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 82-90

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

कामकाजी महिलाओं की भूमिका संघर्ष के बीच सशक्तिकरण अधिकार

–रजनी चौधरी, अनुसंधान नवद्वान,
–डॉ समृद्धि दाधीच, अनुसंधान पर्यवेक्षक,
संकाय भूगोल, श्री खुशाल दास यूनिवर्सिटी, हनुमानगढ़

शोध साराशं :–

महिलाएँ एक ही समय में कई प्रकार के कार्यों का अपने समय के साथ प्रबन्धन कर लेती है। पारिवारिक, सामाजिक एवं कामकाजी जीवन में विभिन्न चुनौतियों व तनावों का सामना करते हुए कामकाजी महिलाएँ अपने कार्यों पर ध्यान केन्द्रित कर सभी कार्य करने के लिए उचित समय प्रबन्धन द्वारा वे अपने परिवार की और संस्थान की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकती है। जब अपनी विविध भूमिका में वे असमायोजन एवं अन्तर्द्वन्द महसूस करती है, तो कामकाजी महिलाओं की भूमिका संघर्ष की स्थिति से गुजरना पड़ता है।

आज बदलते युग में मजदूर महिलाएँ सड़कों पर मुट्ठी बाधकर आक्रोश के साथ मंचों पर अत्याचारों के खिलाफ आवाज उठाने में सक्षम है। एक प्रस्थिति धारण करने के कारण व्यक्ति जो कार्य करता है, वह उस पद की भूमिका है। कामकाजी महिलाओं की विविध भूमिका का निर्वाह उन्हें कम या अधिक भूमिका संघर्ष की स्थिति में ला देता है। जैसे उनके पारिवारिक व वैवाहिक जीवन, संतान सम्बन्धी एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी दायित्व, निजी नौकरी एवं कामकाज के क्षेत्र प्रभावित होते हैं। महिलाएँ कामकाजी हो तो उसका लाभ उन्हें स्वयं को तो प्राप्त होता है साथ ही पुरूषों की चिन्ताएँ भी कम हो जाती है और पारिवारिक आय पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। बच्चों को अच्छी व उच्च शिक्षा के साधन प्राप्त होते हैं तथा महिलाओं की वृद्धावस्था की परेशानियाँ भी दूर हो जाती है। सब समस्याओं को ध्यान में रखते हुए महिलाओं को अपने समय का उचित प्रबन्धन भी करना होता है। जिसके बिना वे अपने किसी कार्य को सरलता पूर्वक नहीं कर सकती है। कामकाजी होने के कारण उन्हें प्रत्यके कार्य पर विचार करना पड़ता है कि कौनसा कार्य कैसे, क्या, कब करें।

शब्दार्थ : परिस्थिति, स्वास्थ्य, परिवार, शिक्षा, आय, प्रबन्धन, संस्थान, भूमिका, नौकरी, सामाजिक, कृषि, खेतीहर।

प्रस्तावना :–

भारतीय सामाजिक संरचना पुरूष प्रधान है। पुरूष घर से बाहर काम करने जाते हैं एवं महिलाएँ अपने घरेलू कार्य को संभालने में लगी रहती है। बच्चों का पालन–पोषण एवं परिवार की आवश्यकताओं की पूर्ति करना उनका मुख्य कार्य है। आर्थिक उपार्जन उनका कार्य क्षेत्र नहीं रहा है। यद्यपि इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता कि प्राचीन काल से महिलाएँ प्रकृति प्रदत्त वस्तुओं एवं कृषि कार्य में संलग्न रही है।

प्राचीन समय में महिलाओं को बाहर काम करने के लिए जाने नहीं दिया जाता था, उनका मूल कार्य घर में रहकर घर के कामकाज करना था। महिलाएँ चूल्हों पर भोजन पकाती थी तथा सामान्य रूप से संयुक्त परिवार प्रथा का प्रचलन था। परिवार बड़ा होने के कारण प्रायः छोटे–बड़े सभी कार्य घर की महिलाओं को ही करने होते थे।

आधुनिक युग में महिलाएँ कामकाजी होने के साथ–साथ सफल गृहणियाँ भी सिद्ध हो रही है, लेकिन कभी किसी ने ध्यान नहीं दिया होगा कि महिलाएँ किस प्रकार सभी कार्यों का समायोजन करती होगी। वर्तमान युग में कामकाजी महिलाएँ बदलते हुए वैश्विक दौर में समय के साथ बदलते परिवेश के साथ अपना सामंजस्य करने में सक्षम हो रही है। सरकारी या निजी कार्यस्थल व घर के काम में अपने प्रबन्धन की भूमिका बखुबी से निभाती है। धीरे–धीरे शिक्षा का विकास होने लगा, नवीन तकनीकी प्रकाश से पुरूषों के समान प्रत्येक क्षेत्र में महिलाएँ भी आगे आने लगी।

भारत में औसतन प्रत्येक घर की महिलाएँ घर के बाहर या घर पर कुछ ना कुछ आयार्जन करने में लगी है। साथ–साथ अपने निजी जीवन को भी गतिशील रखने के प्रयास करती है। कामकाजी महिलाएँ अपने परिवार और अपने भविष्य को संवारने के लिए कार्य करती है। इतनी मंहगाई के युग में केवल घर के पुरूष की आय पर ही निर्भर रहना और उस पर खर्च का बोझ लादना अकेले बैल से खेत जुतवाने के समान है।

वर्तमान में महिला शिक्षा का बढ़ते प्रभाव में क्रमशः 2001 व 2011 राजस्थान में महिला साक्षरता 43.90 व 52.7 प्रतिशत है। 2001–11 में 8.8 प्रतिशत की वृद्वि रही है। भारत में कुल 64.6 प्रतिशत साक्षरता, ग्रामीण क्षेत्र में 57.9 शहरी क्षेत्र में 79.1 रही है।

महिला शिक्षा के बढ़ते स्तर ने महिलाओं को कामकाजी होने की प्रेरणा दी है। फलतः उनकी प्रवृत्ति कामकाजी हो गयी है। आज वे विविध भूमिका का निर्वाह कर रही है, आज वे सभी क्षेत्रों में पुरूषों के समान पदों पर आसीन है। राजनीतिक सत्ता का क्षेत्र हो या आई.ए.एस. ऑफिसर की कुर्सी, अभिनय की अभिव्यक्ति हो या नृत्यांगना का नृत्य, साहित्य का क्षेत्र, ललित कला, आंगन, राग–रागिनीयाँ की सरगम हो या चित्रकारी की चितेरी, चिकित्सक या काननी सलाहकार, प्रशासन का क्षेत्र हो या शिक्षिका, प्राफेसर का दायित्व, ज्ञान विज्ञान हो या कलात्मक प्रस्तुति महिलाओं के कामकाज का विस्तार सभी क्षेत्रों में हुआ है।

कामकाजी महिलाएँ अपनी योग्यता से न केवल धन अर्जित करती है, अपितु वे अर्जित धन से पारिवारिक आर्थिक संरचना में अपना योगदान देकर आर्थिक संबल प्रदान करती है। महिलाओं का आर्थिक उपार्जन आर्थिक क्षत्रे में उनकी आत्म निर्भरता को प्रदर्शित करता है। प्रस्तुत शोध पत्र का प्रमुख उद्देश्य कामकाजी महिलाओं की भूमिका संषर्घ और प्रबन्ध का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना है।

उद्देश्य :-

1. कामकाजी महिलाओं की व्यवसायिक भूमिका का मूल्यांकन/विश्लेषण करना।
2. कामकाजी महिलाओं के कामकाजी और निजी जीवन में समायोजन की स्थिति ज्ञान करना।
3. कामकाजी महिलाएँ संयुक्त/एकल परिवार में भूमिका संघर्ष को ज्ञात करना।
4. महिला सशक्तिकरण के उपायों/निराकरण के सुझाव को अवगत करना।
5. कामकाजी महिलाओं के कानूनी अधिकार को ज्ञात करना।

अध्ययन क्षेत्र :–

राजस्थान क्षेत्र फल की दृष्टि से भारत का सबसे बड़ा राज्य है। राजस्थान राज्य भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तरी पश्चिमी भाग में स्थित है। इसकी भौगोलिक स्थिति $23^{o}3'$ से $30^{o}12'$ उत्तरी अक्षांश तथा $69^{o}30'$ से $78^{o}17'$ पूर्वी देशान्तरों के मध्य है।[2] जो भारत के लगभग 10.41 प्रतिशत भाग के बराबर है। राजस्थान देश की कुल जनसंख्या का 5.67 प्रतिशत राज्य में निवास करती है। जनगणना 2011 के अनुसार राज्य की कुल जनसंख्या 6,85,48,437 में 3,29,97,740 महिलाएँ है। कुल जनसंख्या में ग्रामीण क्षेत्र में 75.3 प्रतिशत व शहरी क्षेत्र में 24.7 प्रतिशत महिलाएँ निवासरत है। अनुसूचित जनजाति की कुल जनसांख्या 9,238,534 (कुल जनसंख्या का 13.5 प्रतिशत) में 44,95,591 महिला जनसंख्या है। साक्षरता की दृष्टि से राजस्थान महिला साक्षरता में काफी पिछड़ा राज्य है। कुल 51.2 प्रतिशत, ग्रामीण साक्षरता 45.8 प्रतिशत, शहरी साक्षरता 70.7 प्रतिशत है।[4]

अध्ययन विधि :–

द्वितीयक समंको का स्रोत सेन्सस ऑफ इण्डिया आर्थिक, सांख्यिकी विभाग, जयपुर जिला सांख्यिकी रूपरेखा का लेख, जर्नल, पत्र–पत्रिकाएँ में प्रकाशित आंकड़ों का विश्लेषण करना।

साहित्य समीक्षा :–

राजस्थान सरकार (2011) रिपोर्ट ''राजस्थान में महिलाओं की स्थिति'' में पाया गया कि ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों के पलायन से गन्दी बस्तियों में रहने के विवश से स्वास्थ्य पर बुरा असर, दुव्यवहार से जीवनयापन से आमर्थय पाती है।

सत्यशील अग्रवाल (2016) ''भारतीय कामकाजी महिलाओं की समस्याएँ'' ने बताया कि भारत में महिलाओं में शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य के कारण प्रसव के दौरान, उन्हें जीवन गवाना पड़ता है, अर्थात् महिलाओं की स्थिति में सुधार की आवश्यकता है।

रचनाकार (2015), ''भारत ने महिलाओं की वर्तमान स्थिति की सामाजिक विवेचना'' ने अपने लेख में महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक और राजनीतिक स्थिति के मुख्य धारा में लाने के लिए उनकी सोच में मूलभूत परिवर्तन, आत्म–निर्भरता और स्वावलम्बन की आवश्यकता है।

एम.आर. सिगारिया (2014) ''राजस्थान में महिला कार्य भागीदारी दरः रूझान और निर्धारक'' में ग्रामीण क्षेत्रों में घरेलू उद्योग और अन्य श्रमिकों को कौशल आधारित शिक्षा से नौकरियों को उत्पन्न कर रोजगार देना चाहिए।

मोनिका देव (2014) ''भारत मे असगंठित क्षेत्र में महिला श्रमिकों की स्थिति'' शोध में बुनियादीढाँचा, गरीब उन्मूलन, कौशल विकास और स्वास्थ्य सुविधा में वैश्वीकरण के साथ जोडना।

प्रकाश चन्द्र देवगड़िया (2002) ''महिला कार्य और आदिवासी महिलाओं की भागीदारी'' में वस्तुओं का कम मूल्य और कार्यक्षेत्र से जोड़ना श्रम सुविधा विकसित कर तकनीकी आधारित परिवर्तन का प्रशिक्षण के अभाव से महिला श्रमिकों पर प्रतिकुल प्रभाव पड़ रहा है।

परमजीत कौर (2011), ''असंगठित क्षेत्र में महिलाएँ : घरेलू कार्यशील महिलाओं की केस स्टडी'' में घरेलू कार्य सर्वाधिक अशिक्षित 83 प्रतिशत महिलाएँ अशंकालीन से अविकसित पाई गई। घरेलू नौकरी में अधिकांश अपने परिवार की देखभाल के कारण रोजगार से नहीं उभर पाई है।

कामकाजी महिलाओं की भूमिका :–

यह एक भ्रमपूर्ण धारणा है किकामकाजी महिलाएँ उच्च जीवन स्तर एवं अपने जीवन से सन्तुष्ट होती है। उन्हें न सकंट का सामना करना पड़ता है और ना किसी प्रकार के संघर्ष का वे मानसिक दबाव से मुक्त होती है। जीवन के किसी भी पहलू का वर्तमान भौतिक, सामाजिक–सांस्कृति में कोई न कोई स्थिति बनती है। जहाँ वे भूमिका संघर्ष का सामना करती है। थोड़ी या कम मात्रा में भूमिका संघर्ष जीवन से जुड़ा है। कामकाजी महिलाओं की स्थिति में बाह्य अवलोकन के साथ आन्तरिक पहलू भिन्न होता है। कोई भी व्यक्ति अपनी भूमिका निर्वाह में परिपूर्ण नहीं होता है। काम के दौरान कुछ न कुछ ऐसा घट ही जाता है, कुछ काम ऐसे ही आसानी से हो जाते हैं और कुछ उपेक्षित रह जाते हैं। जिन्हें पूर्ण करना भी उनके लिए आवश्यक होता है। कामकाजी संघर्ष की भी होती है। महिलाओं को प्रायः माना जाता है कि पद पर आसीन कामकाजी महिलाएँ सुख सम्पत्ति की स्वामित्व होता है। कामकाजी महिलाओं का कामकाजी होना उनके लिए सदैव प्रसन्नता का विषय नहीं होता है। कार्य क्षेत्र का दायित्व, घर में परिवार एवं बच्चों के दायित्व के साथ कामकाजी महिलाओं पर अन्य अनेक दायित्व भी होते हैं।

कामकाजी महिलाओं की स्थिति :–

आधुनिक काल में नारी को समाज में विशेष स्थान प्राप्त है। महिलाएँ राजनीतिक, सामाजिक तथा प्रशासनिक कार्यों में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। शिक्षा, धर्म, व्यक्तित्व और सामाजिक विकास की दृष्टि से समाज में उन्हें सम्मानित और प्रतिष्ठित स्थानों में कामकाजी महिलाओं की भागीदारी बढ़ी है। भारत में महिलाओं की स्थिति सदैव एक समान नहीं रही है। वैदिक काल से लेकर आधुनिक काल तक उनकी स्थिति में निरन्तर उतार–चढ़ाव आते रहे हैं। उनके अधिकारों में तद्नरूप बदलाव भी होते रहे है।

भारत में 1951 से 2011 के बीच 70 वर्षों में महिलाओं की स्थिति में युगान्तरकारी परिवर्तन आया है। इस समय भारत में स्त्री–शिक्षा का व्यापक प्रसार हुआ। स्त्रियों ने बुनियादी शिक्षा के साथ–साथ व्यावसायिक शिक्षा को भी ग्रहण किया है। 2011 की जनसंख्या के अनुसार देश में स्त्रियों की साक्षरता का प्रतिशत 65.46 तथा पुरूषों में 82.14 है जिससे पर्दा प्रथा, बाल विवाह, आदि कुरीतियों का प्रचलन कम हुआ है और सामाजिक जीवन में महिलाओं की सहभागिता में निरन्तर वृद्धि हुई है।[5]

सारणी 1. कुल जनसंख्या में कार्यशील जनसंख्या का प्रतिशत

श्रेणी	राजस्थान		भारत	
	कार्यशील पुरूष	कार्यशील महिला	कार्यशील पुरूष	कार्यशील महिला
कुल कार्यशील जनसंख्या	43.6	39.8	35.1	25.5
मुख्य कार्यशील जनसंख्या	70.5	75.2	50.2	59.6
सीमान्त कार्यशील जनसंख्या	29.5	24.8	49.8	40.4
काश्तकार	45.6	24.7	52.6	24.0
कृषि श्रमिक	16.5	30.0	24.2	41.1
लघु उद्योग श्रमिक	4.2	3.8	2.5	5.7
अन्य श्रमिक	35.5	46.6	20.7	29.2

स्रोत : जनगणना सेन्सस ऑफ इण्डिया 2011, Some facts about Rajtash an, 2016

सारणी संख्या 1 में आंकड़ों के अनुसार विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि राजस्थान में कुल जनसंख्या में से कुल कार्य की भागीदारी दर 43.6 प्रतिशत में से महिलाओं की कार्य में भागीदारी 39.8 प्रतिशत ही हिस्सा है जो दर्शाता है कि राज्य में महिलाएँ आधे से भी कम हिस्सा कार्य क्षेत्र में भागीदार है। भारत में कुल जनसंख्या में से कुल व्यक्ति कार्य में भागीदारी प्रतिशत 35.1 है। कुल भागीदारी प्रतिशत में से महिलाओं की भागीदारी मात्र 25. 5 प्रतिशत है जो बहुत कम है। सीमान्त कार्यशील की भागीदारी में राजस्थान कुल कार्य में 29.5 प्रतिशत है जिसमें से महिलाओं की भागीदारी 24.8 प्रतिशत है। इससे स्पष्ट होता है कि राज्य में महिलाएँ बेरोजगार है, जो उनके परिवार में गरीबी को दर्शाता है।[6]

कार्यशील महिला की जनसंख्या :

कृषि मजदूर से स्पष्ट है कि कृषि प्रधान देश में कृषि कार्य में संलग्न श्रमिक पूर्णतः अविकसित है। महिलाएँ अपनी आजीविका के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि मजदूरी, ईंट भट्टा, दहाड़ी मजदूरी, पक्के निर्माण कार्य के माध यम से चलाते हैं।

राजस्थान प्रदेश में मात्र 39.8 प्रतिशत महिलाएँ कार्यरत है। यह तथ्य समाज मे धार्मिक रूढ़िवादिता के प्रत्यक्ष प्रभाव को द्योतक है। कुल कार्यशील जनसंख्या की 24.7 प्रतिशत कृषि, 300 प्रतिशत कृषि मजदूरी में, 3. 8 प्रतिशत पारिवारिक उद्योग एवं 46.6 प्रतिशत अन्य कार्यों में लगी हुई है जो जिला स्तर पर महिला जनसंख्या में पर्याप्त विभिन्नताएँ दिखाई देती है।

सारणी 2. राजस्थान कार्यशील महिला (प्रतिशत) 1981–2011

वर्ष	मुख्य कार्यशील जनसंख्या	सीमान्त कार्यशील जनसंख्या	अकायशील जनसंख्या
1981	9.52	12.14	78.26
1991	13.08	14.64	72.78
2001	16.96	17.30	65.68
2011	36.66	17.64	63.36

स्रोत : जनगणना सेन्सस ऑफ इण्डिया 1981–2011

आरेख संख्या 1 से स्पष्ट है कि राजस्थान की वर्ष 1981 में मुख्य कार्यशील महिलाएँ मात्र 9.52 प्रतिशत, 2001 में 16.95 प्रतिशत, 2011 में बढ़कर 36.65 प्रतिशत भागीदारी रही है। सीमान्त कार्यशील महिलाओं की हिस्सेदारी वर्ष 1981 में 12.14 प्रतिशत, 2011 में 17.39 प्रतिशत तथा वर्ष 2011 में मात्र 025 प्रतिशत की बढ़ोतरी रही है जो मुख्य कार्यशील में बढ़ोतरी से महिलाओं के रोजगार से जुड़ने की संभावनाएँ बढ़ी है, जिसका प्रभाव ग्रामीण व शहरी क्षत्रे में रोजगार से जुड़ी है, जो मनरेगा, स्वरोजगार, सार्वजनिक क्षेत्र में भागीदारी ब अकार्यशील महिला जनसंख्या में वर्ष 1981 में 78.26 प्रतिशत, 1981 में 72.48 प्रतिशत, 2001 में 65.66 तथा वर्ष 2011 में 63. 35 प्रतिशत रही है, जो वर्ष 1981 से 2011 के मध्य लगातार कमी आई है। अकार्यशील में कमी का परिणाम यह रहा है कि वर्ष 2005 में महिलाओं से जुड़े रोजगार, नरेगा, महिला सुरक्षा और सरकारी योजनाओं से आत्मनिर्भरता बढ़ने से प्रतिशत में कमी रही है।

सारणी संख्या 3 में आंकड़ों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि राजस्थान में सन् 1981 की मुख्य कार्यशील में 2001 तक पुरूषों की संख्या के प्रतिशत में गिरावट रही है। जहाँ महिलाओं के प्रतिशत में लगातार 1981 से 2011 तक वृद्धि रही है, जो अकार्यशील महिलाओं की संख्या में लगातार वर्ष 1981 में 78.26 प्रतिशत, 2001 में 65.66 प्रतिशत तथा 2011 में 63.35 प्रतिशत गिरावट हुई है।

सारणी 3. राजस्थान में व्यवसायिक जनसंख्या (प्रतिशत) 1981-2011

वर्ष	मुख्य कार्यशील जनसंख्या			सीमान्त कार्यशील जनसंख्या			अकायशील जनसंख्या		
	कुल	पुरूष	महिला	कुल	पुरूष	महिला	कुल	पुरूष	महिला
1981	31.04	50.18	9.52	6.14	1.07	12.14	62.74	47.68	78.26
1991	31.84	49.05	13.08	7.45	0.64	14.39	60.2	50.34	72.48
2001	30.91	43.70	16.95	11.73	6.53	17.39	57.36	49.77	65.66
2011	44.56	51.58	36.85	30.59	17.64	50.73	55.44	48.12	63.35

स्रोत : जनगणना सेन्सस ऑफ इण्डिया 1981—2011

महिलाओं की कामकाजी में भागीदारी बढ़ी है। जिसका परिणाम मुख्य कार्यशील तथा सीमान्त कार्यशील जनसंख्या प्रतिशत में वर्ष 1981 से 2011 तक बहुत भागीदारी में बढ़ोतरी रही है। जिसमें सरकारी सेवा क्षेत्र, निजी क्षेत्र, लघु—उद्यमियों, तकनीकी क्षत्रे में कार्यशील महिलाओं का रूझान बढ़ा है।

पुरूषों की संख्या वर्ष 1901 में मात्र 0.84 प्रतिशत सीमान्त जो बढ़कर शिक्षा के प्रभाव से कार्य में लगातार भागीदारी से सार्वजनिक क्षेत्र निजी सेक्ट, स्वरोजगार, आधारित रोजगार में वृद्धि से महिलाओं के सशक्तिकरण, आत्मनिर्भरता से आय अर्जन व रोजगार के क्षत्रे में सुरक्षा, शिक्षा के स्तर में वृद्धि का परिणाम रहा है। सारणी संख्या 4 के आंकड़ों के विश्लेषण से प्राप्त परिणाम से स्पष्ट होता है कि वर्ष 2001 के आंकड़ों के अनुसार मुख्य कार्यशील जनसंख्या में सर्वाधिक उच्च भागीदारी चित्तौड़गढ़ 31.32, बाँसवाड़ा 26.24, भीलवाड़ा, 25.12, टोंक 25.12 तथा जालौर 23.99 प्रतिशत महिलाओं की भागीदारी रही थी, जो 2011 में सर्वाधिक महिलाओं का बढ़कर उच्च प्रतिशत प्रतापगढ़ 53.40, बांसवाड़ा 48.80, चितौड़गढ़ 45.50, जालौर 45.00 तथा डूंगरपुर 42.60 प्रतिशत जिलों में दुगुनी वृद्धि रही है। सबसे कम 2001 में कोटा जिले की 9.10 प्रतिशत, गगांनगर 10.48 प्रतिशत तथा धौलपुर में 10.27 प्रतिशत महिलाओं की हिस्सेदारी है, अकार्यशील महिलाओं का प्रतिशत सर्वाधिक रहा है। इन जिलों में रूढ़िवादिता के दुष्प्रभाव का द्योतक अर्थात् महिलाएँ कम कार्यरत है।

सारणी 4. राजस्थान में कार्यशील महिलाओं का योगदान जिलेवार तुलनात्मक (प्रतिशत)

जिला	मुख्य कार्यशील जनसंख्या		सीमान्त कार्यशील जनसंख्या		अकायशील जनसंख्या	
	2001	2011	2001	2011	2001	2011
श्री गंगानगर	10.48	34.20	14.49	52.60	75.04	65.83
बीकानेर	15.50	30.80	12.02	43.40	72.48	69.23
चुरू	18.11	36.60	20.34	49.60	61.56	63.42
झुंझुनूं	12.92	33.90	19.69	57.90	67.39	66.07
अलवर	18.52	41.20	25.36	51.90	56.12	58.83

भरतपुर	10.81	35.50	22.18	61.10	67.01	64.46
धौलपुर	10.27	33.30	23.70	69.60	66.03	66.70
सवाई माधोपुर	22.1	37.10	13.54	44.50	64.45	62.90
जयपुर	14.95	23.70	7.33	33.90	77.72	76.25
सीकर	15.37	26.80	16.09	56.30	68.55	73.23
अजमेर	17.14	29.20	10.83	38.60	72.03	70.80
टोंक	25.12	40.00	13.15	36.00	61.73	59.99
जैसलमेर	13.05	34.50	16.32	64.60	70.63	65.50
जोधपुर	14.18	29.80	12.91	51.70	72.91	70.25

वर्ष 2011 में डूंगरपुर जिले में सीमान्त कार्यशील महिलाओं की भागीदारी में दोगुनी वृद्धि के साथ 84.60 प्रतिशत सर्वाधिक है। सीमान्त कार्यशील जनसंख्या वर्ष 2001 के आंकड़ों के अनुसार सर्वाधिक डूगंरपुर जिले में 32.09 प्रतिशत तथा सबसे कम जयपुर जिले में 7.33 प्रतिशत महिलाओं की भागीदारी है। सबसे कम चितौड़गढ़ जिले में 28.50 प्रतिशत महिलाएँ कार्य करती है। इससे स्पष्ट होता है कि चित्तौड़गढ़ जिले में महिलाएँ सर्वाधिक बेराजेगार है, जो अपने परिवार में आय अर्जन में बहुत ही पिछड़ी है। क्षेत्र में रोजगार में साधनों की उपलब्धता व सुविधा न होने की वजह से बेराजगारी की संख्या बढ़ी है।अकार्यशील जनसंख्या में महिलाओं की भागीदारी वर्ष 2001 के जनगणना आंकड़ों के अनुसार 7772 प्रतिशत जयपुर जिले में तथा सबसे कम चितौड़गढ़ जिले में 53. 73 प्रतिशत, जालौर जिले में 53.91 प्रतिशत महिलाएँ है।

जयपुर जिले में सर्वाधिक रहने का परिणाम यह है कि उच्च शिक्षा स्तर, शहरी क्षत्रे, रिटायर वेतन भोगी कर्मचारियों की संख्या तथा सर्वाधिक महिलाएँ घरेलू कार्य में संलग्न होने से सर्वाधिक अकार्यशील है। 2011 के अनुसार सर्वाधिक 76.97 प्रतिशत रहा है, जो शहरीकरण बढ़ने, शिक्षा प्राप्त विद्यार्थी, घरेलू कार्य में सर्वाधिक प्रतिशत रहा है। सबसे कम बांसवाड़ा जिले में 51.17 प्रतिशत जहाँ कृषि कार्य, नौकरी पेशा, रोजगार की वजह से प्राथमिक कार्य क्षेत्र में सर्वाधिक महिलाओं के जुड़ाव से अकार्यशील जनसंख्या में महिलाओं की भागीदारी बराबर रही है।

कामकाजी महिलाओं के कानूनी अधिकार महिला की सुदृढ़ सम्मानजनक स्थिति एक उन्नत एवं मजबूत समाज का द्योतक है। भारतीय संविधान में महिलाओं को पूर्ण समानता प्रदान करता है। संविधान के भाग–3 के अन्तर्गत 'मूल अधिकारों' के रूप में भी महिलाओं को मानव अधिकार प्राप्त है। भारतीय संविधान में अनुच्छेद 14 में प्रत्येक नागरिक महिला एवं पुरूष की विविध के समक्ष संरक्षक प्रदान करता है। अनुच्छेद 15(3) महिलाओं को राज्य के पक्ष में 'सकारात्मक' कदम उठाने का अधिकार, अनुच्छेद 16 के आधार पर महिलाओं को लोक नियाजे न में समान अवसर प्राप्त है।

अनुच्छेद 24 मानव दुर्वव्यवहार बालात् श्रम तथा शोषण के विरूद्ध अधिकार देता है।[7] संविधान के भाग 4 में राज्य द्वारा अनुसरणीय 'नीति निर्देशक' में स्त्री–पुरूष को समानता प्रदान करते हैं। अनुच्छेद 39 जीविकापोर्जन के समान अधिकार तथा समान कार्य के लिए समान वेतन का प्रावधान करता है। अनुच्छेद 42 काम की न्याय संगत तथा प्रसूति सहायता का उपबन्ध है। अनुच्छेद 43 में न्यूनतम मजदूरी का प्रावधान है तथा महिलाओं के अधिकार की दृष्टि

से महत्त्वपूर्ण है। 42वें संविधान संशोधन (1976) के बाद ''मूल कर्त्तव्यों'' के प्रावधानों में नागरिक कर्तव्य महिला का सम्मान करता है। यथा अनु. 325 एवं 326 सभी नागरिकों महिला एवं पुरूष दोनों की व्यवस्क मताधिकार में लिंग भेद का निषेध करते हैं।[8]

भारत में विधि शासन के अनुसार महिलाओं के प्रतिनिधित्व के आधार संविधान में 33 प्रतिशत महिला प्रतिनिधित्व की व्यवस्था की गयी है। उपर्युक्त संवैधानिक प्रावधानों के अतिरिक्त प्रदत्त विधियों द्वारा महिला अधिकारों को संरक्षण प्रदान किया गया है यथा कारखाना अधिनियम 1948 (संशोधित, 2003) के अनुसार महिला कार्यकारों के लिए अलग शौचालय की व्यवस्था होनी चाहिये तथा 30 महिला कामगारों पर कार्यस्थल पर 6 वर्ष से कम आयु के बच्चों हेतु पालनागृह की सुविधा होनी चाहिये।[9] मातृत्व लाभ अधिनियम 1956 (संशोधित 2017) के तहत् प्रत्येक महिला श्रमिक काल में 22 सप्ताह तक संवैधानिक अवकाश प्राप्त करने की अधिकारिणी है। प्रसूति प्रसुविधा अधिनियम, 1961 (संशोधित, 1996) के अन्तर्गत संगठित क्षत्रे में नियोक्ता द्वारा गर्भाधारण के चिकित्सीय सत्यापन, नसबन्दी तथा गर्भधारण के कारण होने वाली बीमारी की स्थिति में मजदूरी सहित छुट्टी का प्रावधान है।

समान परिश्रम 1976 (संशोधिक 1987) के तहत महिला कामकारों को समान कार्य के लिए पुरूषों के समान वेतन दिए जाने का प्रावधान है। बन्धित श्रम पद्धति (उत्पादन) अधिनियम 1976 के अन्तर्गत पुरूषों और महिलाओं को सभी बंधित श्रम पद्धति के उत्पादन के परिणामस्वरूप बधुआ मजदूरी की दासता से मुक्ति का प्रावधान है। इसके तहत पीड़ित व्यक्तियों के बांधित ऋण और पुनर्वास के लिए सहायता का भी उपबन्ध है।

अन्तर्राज्यिक प्रवासी कामगारों (नियोजन का विनियमन और सेवा शर्त अधिनियम 1979) के तहत असगंठित क्षत्रे में महिलाओं में परिकल्पित संरक्षी उपायों में विस्थापन, भत्तों का भुगतान, मजदूरी दर, कपड़े धोने व शौचालय की पृथक, व्यवस्था, समान वेतन, निःशुल्क चिकित्सा सुविधा आवास की सुविधा इत्यादि उपलब्ध कराने का प्रावधान है।

निष्कर्ष :– भारत सरकार, राज्य सरकारों, स्वयं सेवी संगठनों एवं महिलाओं के संवैधानिक अधिकारों के प्रयासों और आधुनिक शिक्षा पद्धति एवं नई चिन्तन शैलीएँ फलस्वरूप कामकाजी महिलाओं की स्थिति, संधर्ष के बढ़ते प्रभाव से महिला सशक्तिकरण की दिशा में कदम बढ़े है। है। महिलाओं में व्याप्त अशिक्षा, अधिकारों के प्रति उदासीनता अज्ञानता आदि प्रमुख चुनौतियां है। मुख्य कार्यशील महिला जनसंख्या में ग्रामीण क्षेत्र में जिले की भागीदारी मेंबढ़ोतरी का कारण प्राथमिक क्षेत्र में जुड़ाव, रोजगार से कहीं न कहीं जुड़े रहना है। अकार्यशील में शहरी क्षत्रे में प्रतिशत अधिक रहा है। जहाँ पर रूढ़िवादिता दुष्प्रभाव व घरेलू कार्य में अधिक संख्या है। दक्षिणी राजस्थान में सर्वाधिक अकार्यशील जनसंख्या में कमी रही है।

वर्ष 2001 से 2011 के बीच में महिलाएँ कृषि क्षेत्र, सिचाई सुविधा, स्वरोजगार या दिहाड़ी मजदूरी में सक्रिय भागीदारी की भूमिका रही है। महिलाओं का पारिवारिक उद्योगों में कम भागीदारी से स्वरोजगार में कमी रही है। संवैधानिक अधिकारों के कानूनी नियमों के अभाव से महिलाओं के शोषण की बढ़ावा देता है। इसी तरह महिला काश्तकारों, शिल्पकारों, कामगारों यहा तक की लधु उद्यमियों की सुविधाओं एवं विकास के अवसरों में कटौती स्पष्ट दिखती है। एक और गुणवत्ता की दौड़ में महिलाओं का अतिरिक्त आर्थिक एवं मानसिक दबाव बढ़ रहे हैं। दूसरी ओर कार्य क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी में कमी रहने से असन्तुष्टि पैदा होती है।

उपाय/सुझाव अनेक कानूनी प्रावधानों, अधिकारों के बावजदू भी कामकाजी महिलाओं की समस्याएँ अपनी

जगह साफ दिखाई देती है, इस स्थिति के लिए तथा इन विषम परिस्थितियों में समाजस्य स्थापित करने हेतु कुछ सुझाव इस प्रकार है–

1. महिलाओं की सामाजिक जीवन में सहभागिता बढ़ने और उनके सर्वागीण विकास के लिए आवश्यक है कि संविधान द्वारा प्रदत्त मूलाधिकारों ढ़ग से गहन कर कार्यस्थलों में पृथक प्रकोष्ठ में महिला कार्मिकों की नियुक्ति की जानी चाहिये।

2. भारत में 2011 की जनगणना में महिलाओं में साक्षरता का प्रतिशत 65.46 तथा पुरूषों में 82.14 प्रतिशत है। अशिक्षा के परिणामस्वरूप महिला अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता नहीं है। अतः इसके लिए स्त्री शिक्षा को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

3. सार्वजनिक स्तर से सम्बन्धित नीतियों में महिलाओं की भागीदारी को बढ़ाना चाहिये, ताकि महिलाओं की सुरक्षा, रोजगार शिक्षा से जुड़ी समस्याओं को पहचाना जा सके।

4. महिलाओं के विभिन्न अधिकारों की प्राप्ति हेतु सम्बन्धित न्यायिक प्रक्रिया को अधिक सरल, शीघ्रगामी तथा अल्पव्ययी बनाया जाये ताकि उसका लाभ महिलाओं को आसानी से उपलब्ध को सके।

5. महिला–सशक्तिकरण की दिशा के नए परिदृश्य में सामाजिक–आर्थिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी को सुनिश्चित किया जाये, ताकि वे अपने कामकाज के दौरान आने वाली समस्याओं को भली–भांति पहचानने में मदद मिल सके।

6. समाज में महिलाओं को आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर बनाने और उन्हें रोजगार के अवसर उपलब्ध करवाये जाने चाहिए। कौशल प्रशिक्षण के बाद ऋण की सहायता प्रदान करनी चाहिए।

7. ग्रामीण क्षत्रे में महिलाओं की स्वास्थ्य सुविधा आधारित तकनीकि, संचार से सुविधा का लाभ उठाया जाये ताकि स्वास्थ्य सुविधाओं से कामकाजी संख्या में बढोतरी की जा सकती है।

8. कामकाजी महिलाओं विशेषतः ग्रामीण क्षेत्र में कृषि कार्य से जुड़े एवं स्वरोजगार आधारित योजनाओं को ग्रामीण क्षेत्र पर ट्रेनिंग सेन्टर खोलना चाहिये।

7. कामकाजी महिलाओं को ज्यादा भागीदारी बढ़ाने का सरकारी स्तर पर सार्वजनिक क्षेत्रों या निजि क्षेत्र उनकी भागीदारी सुनिश्चित की जाए, ताकि वह अपनी सुरक्षा तथा कार्य के प्रति अधिक जुड़ाव को बढ़ाया जा सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ :–

1. भल्ला, एल.आर., राजस्थान का भूगोल, कुलदीप पब्लिशिंग हाउस, जयपुर, 2015, पृ.1।
2. The Imperical Gazetter of India, 1908, Vol. XXI
3. Economics Survey, 2014-15, Govt. of India
4. Some Facts About Rajasthan, 2016, p. 4.
5. वही, पृ. 55
6. वही, पृ. 27–40
7. डॉ. बसु, डी.डी., भारत का संविधान एक परिचय, LIXIS Nexis Publication : 10 वां संस्करण, 2013, हरियाणा, पृ. 321
8. वही, पृ. 27–40
9. पंकज गुप्ता, मानवाधिकार और महिलाएँ, साहित्यागार प्रकाशन, जयपुर, 2014, पृ. 152–156।
10. राजस्थान पत्रिका एवं दैनिक भास्कर, उदयपुर संस्करण, 22 मार्च, 2017, पृ. 2
11. गुप्ता सुभाषचन्द्र, कार्यशील महिलाएँ एवं भारतीय समाज, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2004।
12. गौड, संजय, आधुनिक महिलाएँ और समाज उत्पीड़न, अत्याचार व अधिकार बुक एनक्लेव, जयपुर, प्रथम संस्करण, 2006।

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 91-94

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

हनुमानगढ़ की वनस्पति क्षेत्रवृद्धि में घग्घर नदी का योगदान

–रेखा सुथार, शोधार्थी (भूगोल)
–डॉ. राजेन्द्र मेघवंशी, शोध निर्देशक
श्री खुशालदास विश्वविद्यालय, हनुमानगढ़

राजस्थान का हनुमानगढ़ जिला देश के गर्म इलाके के रूप में जाना जाता है। यहाँ ग्रीष्म ऋतु में धूलभरी आँधियाँ व मई–जून के महीने में उष्ण हवा चलती है जिसे 'लू' कहते हैं। सर्दियों में चलने वाली उत्तरी ठंडी हवाएं 'डांफर' कहलाती हैं। गर्मियों में तापमान 45 डिग्री सेल्सियस के पास पहुँच जाता है वहीं सर्द ऋतु में शून्य डिग्री तक, जिससे रातें बहुत ज्यादा ठंडी हो जाती हैं। ज्यादातर इलाका कुछ वर्षों पहले तक शुष्क रेगिस्तान वाला था परन्तु सिंचाई की व्यवस्था का लगातार विस्तार होते रहने के कारण अब लगभग आधे से अधिक क्षेत्रफल में हरियाला के दर्शन होने लगे हैं। अब हनुमानगढ़ की गिनती राजस्थान के हरे–भरे जिलों में आती है।

हनुमानगढ़ पहले बीकानेर संभाग के अन्तर्गत श्रीगंगानगर जिले की एक तहसील के रूप में था। 12 जुलाई, 1994 को जिला घोषित किया गया। जिले में हनुमानगढ़, संगरिया, पीलीबंगा, रावतसर, टिब्बी, नोहर और भादरा तहसीलें हैं। कमोबेश सभी तहसीलों में सिंचाई की जाने लगी है। सम्पूर्ण जिले का भौगोलिक क्षेत्रफल 12645 वर्ग किलो मी. है।

घग्घर नदी इलाके की एकमात्र नदी है जो हनुमानगढ़ जिले के बीच में से होकर प्रवाहित होती है। इंदिरा गांधी फीडर सर्वप्रमुख नहर है।

घग्घर–हकरा नदी भारत से प्रवाहित होकर पाकिस्तान पहुंचने वाली तथा केवल वर्षा ऋतु में प्रकट होने वाली एक मौसमी नदी है। शिवालिक की पहाड़ियों से

इसका उद्‌गम होता है। हरियाणा के ओटू बांध से पहले इसे 'घग्घर' नदी के नाम से तथा उसके बाद पाकिस्तान में 'हकरा' नदी के नाम से जाना जाता है।

कुछ विद्वानों के अनुसार यह प्राचीनकाल में बहने वाली 'सरस्वती' नदी का ही बचा हुआ रूप है। घग्घर नदी का उद्‌गम स्थल चण्डीगढ़ के समीप हिमाचल व हरियाणा की सीमाओं पर स्थित शिवालिक पर्वत है, जहां से निकल कर पटियाला, संगरूर, सिरसा, हनुमानगढ़ व श्रीगंगानगर जिले की अनूपगढ़ तहसील से बहती हुई पाकिस्तान में प्रवेश कर जाती है। इसके द्वारा लाये गये बरसाती जल ओर कठोर चिकनी मिट्‌टी में धान की भरपूर खेती व पैदावार होती है।

उष्ण मरूस्थल में जहाँ–जहाँ से अस्थाई रूप से घग्घर नदी बहती है, वहां सामान्य मरूस्थलीय विशेषताएँ संपोषित हो जाती है। नदी–तटवर्ती क्षेत्र स्थलीय उच्चभूमि एवं जलीय कटिबंध को जोड़ने वाले संक्रमण क्षेत्र बन गये हैं, जिन्हें हरित पेटी द्वारा दृष्टिक रूप से भी पहचाना जा सकता है। नदी–तटवर्ती पारिस्थितिक तंत्रों को तीन प्रमुख आधारों पर परिभाषित किया जा सकता है। इनमें जलगत, मृदा एवं वानस्पतिक तत्त्व शामिल हैं, जो कि अतिरिक्त नमी की उपलबधता को परिलक्षित करते हैं। नदी के चैनल में अल्पकालिक या स्थाई जल प्रवाह, तथा बाढ़ के समय बाढ़ के मैदान में पहुँचा जल, इस तटवर्ती कटिबंध में भूजल स्तर को बढ़ा देता है। यहाँ का भूजल सामान्य मरूस्थली जल के विपरीत मीठा हो गया है। चैनल में प्रवाहित होकर तथा बाढ़ के जल के साथ उपजाऊ सिल्ट के निक्षेप भी इस कटिबंध को प्राप्त होते रहते हैं।" फलस्वरूप नदी–तटवर्ती कटिबंध शेष मरूस्थली क्षेत्र से जैविक रूप से अधिक उत्पादक क्षेत्र होते हैं, जहां विविध पादप–समुदाय पाए जाते हैं। इन कारणों से रैखिक आकृति के ये विशिष्ट पारिस्थितिक तंत्र जैव–विविधता के समृद्ध क्षेत्र बन जाते हैं।

जल, मृदा आदि की उपयुक्त परिस्थितियों के कारण इस मरूस्थली क्षेत्र

का नदी पाट व बाढ़ के मैदान मौसम–विशेष में अथवा वर्ष भर, कृषि की बेहतर सम्भावनाएं प्रस्तुत करते हैं। इसलिए यहाँ शेष मरूस्थली प्रदेश से अधिक फसल सघनता व उत्पादकता पाई जाती है। पशुपालन व उसकी उत्पादकता में भी ऐसे तटवर्ती कटिबंध विशिष्टता लिए हुए रहते हैं। प्रकृति–प्रदत्त अनुदानों के फलस्वरूप मरूस्थलों के नदी–तटवर्ती कटिबंधों में रहने वाले समुदायों की सामाजिक–आर्थिक दशा उच्चतर स्तर पर होती है।

नदी–तटवर्ती क्षेत्र भूमि तथा जल की सीमा पर स्थित होते हैं। इसलिए इस क्षेत्र की मृदाएं प्रायः जल द्वारा निक्षेपण से बनी होती हैं, यद्यपि जल द्वारा उनके अपरदन की भी उच्च सम्भावनाएं बनी रहती है। इन क्षेत्रों की मृदाएं विभिन्न गठन वाले स्तरीकृत अवसादों से बनी होती हैं। ये मृदाएं थोड़े–बहुत अंतराल के बाद बाढ़, अथवा सतह तक पहुंचने वाले परिवर्तनशील जल–स्तर से प्रभावित होती रहती है। बाढ़ के आने पर नदी तटीय भागों में मृदाओं का पुनःनवीनीकरण होता रहता है जिससे ये उपजाऊ बनी रहती है। शुष्क मरूस्थली तथा अर्द्ध–शुष्क प्रदेशों की नदियों के पाट प्रायः रेतीले होते हैं तथा उनमें जल प्रायः अल्प काल के लिए ही प्रवाहित होता है। घग्घर क्षेत्र में नदी–तटवर्ती कटिबंधों तथा स्थलीय उच्चभूमि तंत्रों के मध्य संक्रमण को आसानी से पहचाना जा सकता है। यह परिवर्तन आकस्मिक होता है क्योंकि चारों ओर का स्थलीय परिवेश नदी–तटीय कटिबंध की अपेक्षा कुछ ज्यादा ही शुष्कतर होता है। शुष्क प्रदेशों की मृदाओं में, विरल वनस्पति के कारण मृदा के कार्बनिक तत्त्वों का स्तर न्यून रहता है। गर्म जलवायु में पादप अवशेषों का वियोजन तीव्र होने से मृदा की विशेषताओं पर कार्बनिक पदार्थ का प्रभाव कम रहता है लेकिन परन्तु इस क्षेत्र में नदी–नहरों के किनारे मृदा में कार्बनिक तत्त्व अधिक भी हो सकता है।

स्थाई अथवा अल्पकालिक नदियों के निकट होने से चतुर्दिक क्षेत्रों की अपेक्षा तटवर्ती क्षेत्रों में भूजल अपेक्षाकृत उथला या कम गहराई पर पाया जाता है।

तटवर्ती कटिबंधों में अधिक नमी, तथा अपेक्षाकृत सघनतर वनस्पति, मिलकर मृदा की ऊपरी परत में वियोजित होने वाले कार्बनिक पदार्थ की चादर निर्मित कर देते हैं। इससे मृदा को उर्वरता में भी वृद्धि होती है। आर्द्र जलवायु के क्षेत्रों में उच्च भूजल स्तर के कारण जलोढ़ जलभरे कई नदियों में बेस फ्लो को बनाए रखने में मदद करते हैं। अपेक्षाकृत शुष्कतर जलवायु के क्षेत्रों में नदियों का प्रवाहित जल भूमिगत होकर नदी के निचले भाग के भूजल स्तर को बढ़ाने में सहायक बन सकता है। नदी–तटवर्ती कटिबंधों को स्वस्थ बनाए रखने के लिए प्राकृतिक बाढ़ चक्रकों की अहम् भूमिका रहती है। बाढ़ के जल से अवसाद, पोषक तत्त्वों तथा जल की अत्यावश्यक आपूर्ति प्राप्त होती है। नदियों के ऊपरी भागों में बांध आदि का निर्माण निचले भागों में बाढ़ की सम्भावना को समाप्तप्रायः या कम कर देता है, जिससे जल तथा उपजाऊ अवसाद की आवक बंद हो सकती है। शुष्क प्रदेशों में यह प्रभाव और सघनतर रूप में दिखाई देता है।

संदर्भ

1. ब्रिटेनिका, डेल होइबर्ग, इन्दु रामचंदानी, पॉपुलर प्रकाशन
2. द एंसियेट इन्डस वैली : न्यू पर्सपेक्टिवस्–जॉन मैकिनहोस
3. Hansen et al., 2010, Naiman et al. 2010m tackner & standford, 2002
4. NRCS, 2018
5. आर्टिफिशएल ग्राउण्ड वाटर सिचार्ज, ए.भट्टाचार्य, सी. कुमार

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 95-102

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

पर्यावरण प्रदूषण और कानून

–रोज़ी बंसल
सहायक प्रोफेसर

सारांश :–

पर्यावरण प्रदूषण सबसे गंभीर वैश्विक चुनौतियों में से एक है। पर्यावरण प्रदूषण कोई नई घटना नहीं है, फिर भी यह दुनिया की सबसे बड़ी समस्या है। शहरीकरण, औद्योगीकरण, खनन और अन्वेषण के माध्यम से मनुष्य की गतिविधियाँ वैश्विक पर्यावरण प्रदूषण में सबसे आगे हैं। विकसित और विकासशील दोनों देश इस बोझ को एक साथ साझा करते हैं, हालांकि विकसित देशों में जागरूकता और सख्त कानूनों ने उनके पर्यावरण की रक्षा करने में काफी हद तक योगदान दिया है। पर्यावरण शब्द का तात्पर्य उन सभी स्थितियों के योग से है जो मनुष्य को घेरती हैं। मनुष्य पर्यावरण का हिस्सा है और उसे अलग–थलग नहीं किया जा सकता है। मनुष्य आदिकाल से ही अपने आराम के लिए पर्यावरण का उपयोग कर रहा है। अतीत में इस पर्यावरण का उपयोग इतना सीमित था कि पर्यावरण संतुलन को प्रभावित नहीं करता है।

"आखिरकार, पर्यावरण वह जगह है जहाँ हम सभी मिलते हैं, जहाँ हम सभी का परस्पर हित होता है। यह एक चीज है जिसे हम सभी साझा करते हैं। यह न केवल स्वयं का दर्पण है, बल्कि हम क्या बन सकते हैं, इस पर ध्यान केंद्रित करने वाला लेंस है।'– लेडीबर्ड जॉनसन।

पर्यावरण प्रदूषण की अवधारणा :–

पर्यावरण शब्द की उत्पत्ति 'पर्यावरण' शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है 'घेरना' इस प्रकार, व्युत्पत्ति के अनुसार पर्यावरण का अर्थ है'। आसपास की परिस्थितियाँ, लोगों के जीवन को प्रभावित करने वाली परिस्थितियाँ। पर्यावरण में जल, वायु और भूमि और अंतर्संबंध शामिल हैं जो जल, वायु, भूमि और मनुष्यों, अन्य जीवित प्राणियों, पौधों, सूक्ष्म जीवों और संपत्ति के बीच और उनके बीच मौजूद हैं।

इसमें जीव या पारिस्थितिक समुदाय के आसपास के जटिल भौतिक, रासायनिक और जैविक कारक शामिल हैं। ऐसे कारक विभिन्न प्रजातियों और जीवों के साथ उनके रूप, वृद्धि और अस्तित्व को प्रभावित करने के लिए कार्य करते हैं और बातचीत करते हैं। इस पर्यावरण के किसी भी प्रतिकूल परिवर्तन को पर्यावरणीय स्थिति कहा जाता है। 'पर्यावरण' में वे सभी संस्थाएं शामिल हैं, जीवित और निर्जीव, प्राकृतिक या मानव निर्मित, स्वयं के बाहर, और उनके अंतर्संबंध, जो मानव जाति को अभी या शायद भविष्य में मूल्य प्रदान करते हैं। पर्यावरण संबंधी चिंताएं मनुष्यों के कार्यों के माध्यम से उनके क्षरण से संबंधित हैं।

प्रदूषण प्राकृतिक वातावरण में हानिकारक या जहरीले पदार्थों की शुरूआत है। समान रूप से, प्रदूषण का अर्थ है प्राकृतिक वातावरण में अवांछित सामग्री की उपस्थिति या प्राकृतिक पर्यावरण की स्थिति मानव गतिविधियों के परिणाम स्वरूप संभावित हानिकारक पदार्थों से दूषित हो रही है। प्रदूषकों को संयुक्त रूप से संदूषक कहा जाता है क्योंकि वे प्राकृतिक वातावरण को दूषित और परिवर्तित करते हैं। विशेष रूप से, प्रदूषण के अधीन प्राकृतिक वातावरण में मुख्य रूप से शामिल हैं : पदार्थों की उपस्थिति जैसे (तरल, गैस, ठोस) या ऊर्जा जैसे (गर्मी, प्रकाश, विकिरण, शोर) जिनके गुण प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्राकृतिक पर्यावरणीय प्रक्रिया को आंशिक रूप से या संपूर्ण रूप से बदलते हैं, और कारण या पैदा करने की क्षमता रखते हैं मनुष्यों, जानवरों या पौधों के स्वास्थ्य या कल्याण को नुकसान प्रदूषण को परिभाषित करता है। एक राष्ट्र जो अपनी मिट्टी को नष्ट कर देता है वह स्वयं को नष्ट कर देता है। वन हमारी भूमि के फेफड़े हैं, जो हवा को शुद्ध करते हैं और हवा को नई ताकत देते हैं। देर–सबेर हमें यह स्वीकार करना होगा कि पृथ्वी को भी प्रदूषण के बिना जीने का अधिकार है। मानव जाति को यह जानना चाहिए कि मनुष्य पृथ्वी माता के बिना नहीं रह सकता, लेकिन ग्रह मनुष्यों के बिना रह सकता है। पृथ्वी हर आदमी की जरूरतों को पूरा करने के लिए पर्याप्त प्रदान करती है, लेकिन हर आदमी के लालच को नहीं।

पर्यावरण कानून पर्यावरण संरक्षण अधिनियम :–

पर्यावरण नीति के लक्ष्यों को कई तरीकों से तैयार किया जा सकता है – मानव स्वास्थ्य की रक्षा के लिए, वन्य जीवन की व्यवहार्यता सुनिश्चित करने के लिए, ऐतिहासिक स्मारकों का संरक्षण, पर्यावरण के और गिरावट को रोकने के लिए भारत में पर्यावरण कानून का प्रावधान है। अंतरराष्ट्रीय कानूनों के अलावा, हर देश ने पर्यावरण संरक्षण, प्रदूषण नियंत्रण आदि के संबंध में कानून बनाए हैं। भारत में, पर्यावरण संरक्षण के लिए कई अधिनियम हैं जो कहते हैं कि पर्यावरण की सुरक्षा सरकार का कर्तव्य है।

मध्यकालीन भारत में नीति और कानून (1638–1800 ई.) :–

मुगल शासकों के लिए जंगल का मतलब जंगल से ज्यादा कुछ नहीं था जहां वे शिकार कर सकते थे। मध्ययुगीन भारत के इतिहास में मुस्लिम शासकों का वर्चस्व था। जहां मुगल सम्राट अकबर के शासन के अलावा पर्यावरणीय न्याय शास्त्र का कोई उल्लेखनीय विकास नहीं हुआ। अकबर के शासन के दौरान शासकों को छोड़कर अन्य लोगों को शिकार या शिकार करने की मनाही थी। लेकिन मध्ययुगीन काल में पर्यावरण संरक्षण और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण को रोकने के लिए कोई बड़ी पहल नहीं हुई क्योंकि शासक केवल युद्ध, धर्म प्रचार और साम्राज्य निर्माण में रुचि रखते थे। 'शाही पेड़ों' को छोड़कर, जिन्हें शुल्क के अलावा काटे जाने से संरक्षण प्राप्त था, अन्य पेड़ों को काटने, जानवरों का शिकार करने आदि पर कोई प्रतिबंध नहीं था। इस अवधि के दौरान वन आकार में लगातार सिकुड़ते गए।

ब्रिटिश भारत में कानून (1800–1947 ई.) :–

- ☐ शोर उपद्रव (बॉम्बे और कोलाबा) अधिनियम, 1853 ने समुद्री जल के दूषित होने पर प्रतिबंध लगाया।
- ☐ 1858 का मर्चेंट शिपिंग एक्ट तेल द्वारा समुद्री प्रदूषण की रोकथाम से संबंधित है।
  मात्स्यि की अधिनियम, 1897
- ☐ बंगाल धुआँ उपद्रव अधिनियम 1905
- ☐ बॉम्बे स्मोकन्यूसेंस एक्ट 1912

☐ वन्य पक्षी और पशु संरक्षण अधिनियम, 1912

स्वतंत्रता के बाद के कानून (1947):-

भारतीय संविधान, जैसा कि 1950 में अपनाया गया था, पर्यावरण या प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण के विषय (1976 के संशोधन तक) से संबंधित नहीं था। स्वतंत्र भारत के बाद का दृष्टिकोण आर्थिक विकास और गरीबी उन्मूलन पर केंद्रित था न कि संसाधन संरक्षण पर।

वर्ष 1972 पर्यावरण के क्षेत्र में एक मील का पत्थर था, जब 5 से 16 जून तक स्टॉक होम (स्वीडन) में मानव पर्यावरण पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन आयोजित किया गया था, जिसमें 'मानव पर्यावरण पर घोषणा' को अपनाया गया था। इसे विश्व में पर्यावरण आंदोलन की शुरुआत माना जा सकता है। 1972 की स्टॉक होम घोषणा शायद अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मानव पर्यावरण के संरक्षण और संरक्षण का पहला बड़ा प्रयास था। इसकी प्रस्तावना में कहा गया है, 'मानव पर्यावरण के संरक्षण और वृद्धि में दुनिया के लोगों को प्रेरित और मार्गदर्शन करने के लिए एक सामान्य दृष्टिकोण और सामान्य सिद्धांतों की आवश्यकता है।

इस घोषणा के परिणाम स्वरूप, राज्यों को पर्यावरण की रक्षा और सुधार के लिए उपायों को अपनाने की आवश्यकता थी। तदनुसार, भारतीय संसद ने 1976 में भारत के संविधान में दो अनुच्छेद, अर्थात 48। और 51। सम्मिलित किए।

भारत में पर्यावरण संरक्षण के प्रमुख कार्य इस प्रकार हैं :-

1. वन संरक्षण अधिनियम, 1980
2. वायु और जल प्रदूषण की रोकथाम, 1974, 1981 (केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड) (CPCB) का गठन इस अधिनियम के तहत किया गया था।
3. वायु रोकथाम और प्रदूषण नियंत्रण, 1981।
4. परमाणु ऊर्जा अधिनियम। 1982.
5. पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986। (यह भोपाल गैस त्रासदी के तुरंत बाद लागू हुआ)
6. पर्यावरण संरक्षण अधिनियम। 1989.
7. राष्ट्रीय पर्यावरण न्यायाधिकरण, 1995।
8. राष्ट्रीय पर्यावरण अपीलीय प्राधिकरण अधिनियम, 1997।
9. राष्ट्रीय पर्यावरण प्रबंधन अधिनियम (एनईएमए), 1998
10. 1989 में खतरनाक अपशिष्ट नियम का संचालन और प्रबंधन।
11. सार्वजनिक देय ता बीमा अधिनियम (नियम और संशोधन), 1992।
12. बायोमेडिकल वेस्ट मैनेजमेंट एंड हैंडलिंग रूल्स, 1998।
13. पर्यावरण (औद्योगिक परियोजनाओं के लिए स्थान) नियम, 1999।
14. म्युनिसिपल सॉलिडवेस्ट (प्रबंधन और हैंडलिंग) नियम, 2000।
15. ओजोन क्षयकारी पदार्थ (विनियमन और नियंत्रण) नियम, 2000।
16. जैविक विविधता अधिनियम 2002।

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम :-

जल (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) अधिनियम, 1974 :-

जल प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण अधिनियम, 1974 ('जल अधिनियम') को देश में जल प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण और पानी की स्वच्छ्ता को बनाए रखने या बहाल करने के लिए अधिनियमित बनाया गया है। यह उक्त उद्देश्यों को पूरा करने की दृष्टि से जल प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण के लिए बोर्डों की स्थापना का भी प्रावधान करता है। जल अधिनियम एक निश्चित मानक से परे प्रदूषकों को जल निकायों में छोड़ने पर रोक लगाता है, और गैर–अनुपालन के लिए दंड निर्धारित करता है। केंद्र में, जल अधिनियम ने सीपीसीबी की स्थापना की है जो जल प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण के लिए मानक निर्धारित करता है। राज्य स्तर पर, एस.पी.सी. बी.औरराज्य सरकार के निर्देशन में कार्य करते हैं। इसके अलावा, जल (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) उपकर अधिनियम 1977 में कुछ प्रकार की औद्योगिक गतिविधियों को संचालित करने और चलाने वाले व्यक्तियों द्वारा उपभोग किए गए पानी पर उपकर लगाने और संग्रह करने के लिए अधिनियमित किया गया था। यह उपकर जल (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) अधिनियम, 1974 के तहत गठित जल प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण के लिए केंद्रीय बोर्ड और राज्य बोर्डों के संसाधनों को बढ़ाने की दृष्टि से एकत्र किया जाता है। अधिनियम में अंतिम बार 2003 में संशोधन किया गया था।

वायु (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) अधिनियम, 1981 :-

वायु (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) अधिनियम, 1981 ('वायु अधिनियम') वायु प्रदूषण की रोकथाम, नियंत्रण और उपशमन के लिए और केंद्र और राज्य स्तर पर बोर्डों की स्थापना के लिए एक दृष्टिकोण के साथ प्रदान करने के लिए एक अधिनियम है। उपरोक्त उद्देश्यों को पूरा करना। वायु प्रदूषण से जुड़ी समस्याओं का मुकाबला करने के लिए वायु अधिनियम के तहत परिवेशी वायु गुणवत्ता मानकों की स्थापना की गई। वायु अधिनियम प्रदूषणकारी ईंधन और पदार्थों के उपयोग पर रोक लगाकर वायु प्रदूषण का मुकाबला करने के साथ–साथ वायु प्रदूषण को जन्म देने वाले उपकरणों को विनियमित करने का प्रयास करता है। वायु अधिनियम राज्य सरकार को राज्य के भीतर किसी भी क्षेत्र या क्षेत्रों को वायु प्रदूषण नियंत्रण क्षेत्र या क्षेत्रों के रूप में घोषित करने के लिए एस.पी.सी.बी. के परामर्श के बाद अधिकार देता है। अधिनियम के तहत, किसी भी संस्थान की स्थापना या संचालन प्रदूषण नियंत्रण क्षेत्र में किसी भी औद्योगिक संयंत्र की स्थापना या संचालन के लिए एस.पी.सी.बी. की सहमति की आवश्यकता होती है। एस.पी.सी.बी. से वायु प्रदूषण नियंत्रण क्षेत्रों में हवा का परीक्षण करने, प्रदूषण नियंत्रण उपकरण और निर्माण प्रक्रियाओं का निरीक्षण करने की भी उम्मीद है।

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 :-

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 ('पर्यावरण अधिनियम') यह पर्यावरण के संरक्षण और सुधार का प्रावधान करता है। पर्यावरण संरक्षण अधिनियम पर्यावरण सुरक्षा की दीर्घकालिक आवश्यकताओं के अध्ययन, योजना और कार्यान्वयन के लिए ढांचा स्थापित करता है और पर्यावरण को खतरे में डालने वाली स्थितियों के लिए त्वरित और पर्याप्त प्रतिक्रिया की प्रणाली निर्धारित करता है। यह जल अधिनियम, 1974 और वायु अधिनियम के तहत स्थापित केंद्रीय और राज्य प्राधिकरणों के समन्वय के लिए एक रूप रेखा प्रदान करने के लिए बनाया गया एक व्यापक कानून है। पर्यावरण अधिनियम की धारा 2 (ए) के तहत 'पर्यावरण' शब्द को बहुत व्यापक शब्द में समझा जाता

है। इसमें जल, वायु और भूमि के साथ–साथ जल, वायु और भूमि, और मनुष्य, अन्य जीवित प्राणियों, पौधों, सूक्ष्म जीवों और संपत्ति के बीच मौजूद अंतर्संबंध शामिल हैं।

पर्यावरण अधिनियम के तहत, केंद्र सरकार को किसी उद्योग या गतिविधि को चलाने वाले किसी भी व्यक्ति द्वारा वातावरण में प्रदूषण के उत्सर्जन और निर्वहन के लिए मानक निर्धारित कर के पर्यावरण की गुणवत्ता की रक्षा और सुधार के लिए आवश्यक उपाय करने का अधिकार है; उद्योगों के स्थान को विनियमित करना; खतरनाक कचरे का प्रबंधन, और सार्वजनिक स्वास्थ्य और कल्याण की सुरक्षा। केंद्र सरकार पर्यावरण की दृष्टि से संवेदनशील क्षेत्रों की सुरक्षा के लिए पर्यावरण अधिनियम के तहत अधिसूचन ा जारी करती है और पर्यावरण अधिनियम के तहत मामलों के लिए दिशा–निर्देश जारी करती है।

पर्यावरण अधिनियम, या उक्त अधिनियम के तहत नियमों या निर्देशों के किसी भी गैर–अनुपालन या उल्लंघन के मामले में, उल्लंघनकर्ता को पांच साल तक के कारावास या 1,00,000 रुपये तक के जुर्माने या दोनों के साथ दंडनीय होगा, यदि उल्लंघन दोष सिद्ध होने की तारीख के बाद एक वर्ष की अवधि के बाद भी जारी रहता है, तो अपराधी को कारावास से दंडित किया जा सकता है, जिसे सात वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है।

भारत में, पर्यावरण कानून पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 (60) :-

यह अधिनियम केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड और कई राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों द्वारा लागू किया जाता है। इसके अलावा, जल, वायु, वन्य जीव आदि की सुरक्षा के लिए विशेष रूप से अधिनियमित व्यक्तिगत कानून भी हैं। ऐसे कानूनों में शामिल हैं :–

जल (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) अधिनियम, 1974

1. जल (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) उपकर अधिनियम, 1977
2. वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980
3. वायु (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) अधिनियम, 1981
4. वायु (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) (केंद्र शासित प्रदेश) नियम, 1983
5. जैविक विविधता अधिनियम, 2002 और वन्य जीवन संरक्षण अधिनियम, 1972
6. बैटरी (प्रबंधन और हैंडलिंग) नियम, 2001
7. पुनर्नवीनीकरण प्लास्टिक, प्लास्टिक निर्माण और उपयोग नियम, 1999
8. राष्ट्रीय हरित अधिकरण अधिनियम, 2010 (61) :–

अधिनियम के तहत स्थापित राष्ट्रीय हरित अधिकरण के पास एक महत्वपूर्ण पर्यावरणीय प्रश्न और जल (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) अधिनियम, 1974 के अंतर्गत आने वाले कृत्यों से संबंधित सभी पर्यावरणीय मामलों पर अधिकार क्षेत्र है।

9. जल (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) उपकर नियम, 1978
10. गंगा कार्य योजना, 1986
11. वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980
12. वन्य जीव संरक्षण अधिनियम, 1972
13. सार्वजनिक देयता बीमा अधिनियम, 1991 और जैविक विविधता अधिनियम, 2002 :–

भारतीय वन्य जीवन संरक्षण अधिनियम 1972 के तहत शामिल अधिनियम राष्ट्रीय हरित अधिकरण के अधिकार क्षेत्र में नहीं आते हैं। (62), भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय में अपील दायर की जा सकती है।(63),

14. खतरनाक अपशिष्टों और उनके निपटान पर सीमा पार आंदोलनों के नियंत्रण पर बेसल कन्वेंशन, 1989 और इसके प्रोटोकॉल

15. खतरनाक अपशिष्ट (प्रबंधन और प्रबंधन) संशोधन नियम, 2003 (64),

खतरनाक अपशिष्ट प्रबंधन विनियम :–

खतरनाक अपशिष्ट का अर्थ है कोई भी अपशिष्ट जो अपनी भौतिक, रासायनिक, प्रति क्रियाशील, विषाक्त, ज्वलनशील, विस्फोटक या संक्षारक विशेषताओं के कारण, खतरे का कारण बनता है या स्वास्थ्य या पर्यावरण के लिए खतरा पैदा करने की संभावना है, चाहे वह अकेले या अन्य कचरे के संपर्क में हो या पदार्थ।

ऐसे कई कानून हैं जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से खतरनाक अपशिष्ट प्रबंधन से संबंधित हैं। संबंधित कानून फैक्ट्री अधिनियम, 1948, सार्वजनिक देयता बीमा अधिनियम, 1991, राष्ट्रीय पर्यावरण न्यायाधिकरण अधिनियम, 1995 और पर्यावरण अधिनियम के तहत नियम और अधि सूचनाएं हैं। खतरनाक अपशिष्ट प्रबंधन से संबंधित कुछ नियमों की चर्चा नीचे की गई है।

खतरनाक अपशिष्ट (प्रबंधन, प्रबंधन और सीमा पार) नियम, 2008, खतरनाक रसायनों के निर्माण, भंडारण और आयात और खतरनाक कचरे के प्रबंधन के लिए एक गाइड लाईन।

16. बायो मेडिकल वेस्ट (प्रबंधन और हैंडलिंग) नियम, 1998, संक्रामक कचरे के उचित निपटान, पृथक्करण, परिवहन आदि के लिए समानांतर लाइनों के साथ तैयार किए गए थे।

17. म्युनिसिपल सॉलिडवेस्ट (मैनेजमेंट एंड हैंडलिंग) रूल्स, 2000 का उद्देश्य नगर पालिकाओं को म्युनिसिपल सॉलिडवेस्ट को एक वैज्ञानिक तरीके से निपटाने में सक्षम बनाना है।

ई–अपशिष्ट (प्रबंधन और हैंडलिंग) नियम, 2011 :–

1 मई, 2011 को अधि सूचित किया गया है और 1 मई 2012 से प्रभावी हुआ है, जिसका प्राथमिक उद्देश्य बिजली और इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों में खतरनाक पदार्थों के उपयोग को कम करना है। खतरनाक सामग्री का और देश में उत्पन्न ई–कचरे को चौन लाइजकर ने के लिए नियम प्रत्येक उत्पादक, उपभोक्ता या थोक उपभोक्ता, संग्रह केंद्र, विखण्डक और विद्युत और इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों या घटकों के निर्माण, बिक्री, खरीद और प्रसंस्करण में शामिल ई–कचरे के पुनर्चक्रण पर लागू होते हैं, जैसा कि नियमों में वर्णित है।

पर्यावरण से संबंधित अन्य कानून :–

इसके अलावा, पर्यावरण से संबंधित कई अन्य कानून भी हैं, जैसे–वन्य जीव संरक्षण अधिनियम, 1972 वन्य जीवन (संरक्षण) अधिनियम, 1972 इस देश के वन्य जीवन की प्रभावी ढंग से रक्षा करने और वन्य जीवों और इसके डेरिवेटिव में अवैध शिकार, तस्करी और अवैध व्यापार को नियंत्रित करने के उद्देश्य से अधिनियमित किया गया था। जनवरी 2003 मे अधिनियम में संशोधन किया गया और अधिनियम के तहत अपराधों के लिए सजा और दंड को और अधिक कठोर बना दिया गया है। मंत्रालय ने अधिनियम को मजबूत करने के लिए और अधिक कठोर उपायों की शुरुआत करके कानून में और संशोधन का प्रस्ताव दिया है।

वन संरक्षण अधिनियम, 1980 :-

वन संरक्षण अधिनियम, 1980 देश के वनों के संरक्षण में मदद करने के लिए अधिनियमित किया गया था। यह केंद्र सरकार की पूर्व स्वीकृति के बिना वनों के गैर–आरक्षण या गैर–वन उद्देश्यों के लिए वन भूमि के उपयोग को सख्ती से प्रतिबंधित और नियंत्रित करता है। इस उद्देश्य के लिए अ धिनियम गैर–वन उद्देश्यों के लिए वन भूमि के विपथन के लिए पूर्व–आवश्यकताएं निर्धारित करता है। अनुसूचित जन–जाति और अन्य पारंपरिक वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006, वन में रहने वाले अनुसूचित जन–जातियों और अन्य पारंपरिक वन वासियों के उनके द्वारा बसे हुए वन क्षेत्रों पर अधिकारों को मान्यता देता है और उसी के अनुसार एक रूपरेखा प्रदान करता है। भारतीय वन अधिनियम, 1927 वनों से संबंधित कानून, वन–उत्पाद के पारगमन और लकड़ी और अन्य वन–उत्पादों पर लगाए जाने वाले शुल्क को सामेकित करता है।

सार्वजनिक देयता बीमा अधिनियम, 1991 :-

सार्वजनिक देयता बीमा अधिनियम, 1991 को किसी भी खतरनाक पदार्थ को संभालने के परिणामस्वरूप होने वाली दुर्घटना के पीड़ितों को नुकसान पहुंचाने के उद्देश्य से अधिनियमित किया गया था। यह अधिनियम किसी भी खतरनाक रसायनों के उत्पादन या संचालन से जुड़े सभी मालिकों पर लागू होता है।

जैविक विविधता अधिनियम, 2002 :-

जैविक विविधता अधिनियम 2002 का जन्म जैव विविधता पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन (सी.बी.डी), 1992 में निहित उद्देश्यों को साकार करने के भारत के प्रयास से हुआ था, जो राज्यों के अपने स्वयं के जैविक संसाधनों का उपयोग करने के संप्रभु अधिकारों को मान्यता देता है। इस अधिनियम का उद्देश्य जैविक संसाधनों और संबंधित ज्ञान के संरक्षण के साथ–साथ एक स्थायी तरीके से उन तक पहुंच की सुविधा प्रदान करना है। अधिनिय म के उद्देश्यों को लागू करने के उद्देश्य से चेन्नई में राष्ट्रीय जैव विविधता प्राधिकरण की स्थापना की गई है।

राष्ट्रीय प्रदूषण निवारण नीति :-

प्रदूषण निवारण अधिनियम एक राष्ट्रीय नीति स्थापित करता है जिसे EPF लागू करता है :–

18. जब भी संभव हो प्रदूषण को स्रोत पर रोका या कम किया जाना चाहिए।

19. जिस प्रदूषण को रोका नहीं जा सकता, उसे जब भी संभव हो पर्यावरण की दृष्टि से सुरक्षित तरीके से पुनर्चक्रित किया जाना चाहिए।

जिस प्रदूषण को रोका या पुनर्चक्रित नहीं किया जा सकता है, उसका पर्यावरण की दृष्टि से सुरक्षित तरीके से उपचार किया जाना चाहिए।

20. पर्यावरण में निपटान या अन्य रिलीज को केवल अंतिम उपाय के रूप में नियोजित किया जाना चाहिए और इसे पर्यावरण की दृष्टि से सुरक्षित तरीके से संचालित किया जाना चाहिए।

2010–2014 प्रदूषण निवारण कार्यक्रम सामरिक योजना :-

यह योजना कई अवसरों की पहचान करती है। ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन; खतरनाक सामग्री का उपयोग; और प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग, जबकि योगदान पूरे ई.पी.ए. और अन्य संघीय एजेंसियों में प्रदूषण निवारण नीति को एकीकृत करने के लिए ई.पी.ए. प्रयासों का मूल्यांकन–अक्टूबर 2008 से यह मूल्यांकन उन प्रमुख क्षेत्रों का वर्णन करता है जो पी2 एकीकरण पर अतिरिक्त ध्यान देने से लाभान्वित हो सकते हैं और पी2 एकीकरण

गतिविधियों और स्थिरता नीति विकास के बीच संबंध बनाते हैं।

निष्कर्ष :-

भारत में, पर्यावरण संरक्षण की चिंता न केवल देश के मौलिक कानून की स्थिति तक उठाई गई है, बल्कि यह मानवाधिकारों के दृष्टि कोण से भी जुड़ी हुई है और अब यह अच्छी तरह से स्थापित हो गया है कि, यह प्रत्येक व्यक्ति का मूलमान व अधिकार है। पूरी मानवीय गरिमा के साथ प्रदूषण मुक्त वातावरण में रहें। पर्यावरण से संबंधित स्थानीय सरकारी कानूनों की सफलता के लिए सड़कों, सार्वजनिक स्थानों, जल निकासी आदि जैसी नगर पालिका सेवाओं के उपयोग में नागरिक चेतना और सार्वज निक स्वच्छता की भावना पैदा करना आवश्यक है। कानून के प्रावधानों को भी सख्ती से लागू करने की आवश्यकता है। कानून नागरिकों को स्वच्छता का पालन करने और इस तरह प्रदूषण से निपटने के लिए मज बूर करने का एक मजबूत माध्यम है। भारत में पर्यावरण संरक्षण कानूनों को आधुनिक संदर्भ में एक नए अभिविन्यास की आवश्यकता है।

संदर्भ सूची :-

1. N. T. स्वनग, Y. S. Su, और S. M. हसन, 'निर्मित नैनो मैटिरियल्स के लिए पर्यावरणीय जोखिम का आकलन करने में मुद्दे, 'पर्यावरण अनुसंधान और सार्वजनिक स्वास्थ्य के अंतर्राष्ट्रीय जर्नल, वॉल्यूम। 8, नहीं। 9, पी.पी.। 3562–3578, 2011। यहां देखें : Google विद्वान।
2. टी. अब्बासी और एस.ए. अब्बासी, 'जैव मूल्यांकन पर आधारित जल गुणवत्ता सूचकांक : जैविक सूचकांक, 'जल और स्वास्थ्य के जर्नल, वॉल्यूम। 9, नहीं। 2, पी.पी. 330–348, 2011. यहां देखें। प्रकाशक साइट : गूगल शास्त्री
3. एच.यु.आन, 'एस के मूल्यांकन के लिए एक मॉडल'।
4. आर. के. ली. शादी, एन. मिरघाफरी, पी. पोरसाफा, और एस. एस. गिडिंग, 'जीवन शैली और पर्यावरणीय का रकजोसूजन, ऑक्सीडेटिवत नाव और बच्चों में इंसुलिन प्रतिरोध से जुड़े हैं, 'एथेरोस्क्लेरोसिस, वॉल्यूम। 203, नहीं। 1, पी.पी. 311–319, 2009. यहां देखें : प्रकाशक साइट : गूगल शास्त्री।
5. आर. के. ली. शादी और पी. पोरसाफा, 'वायु प्रदूषण और बच्चों के लिए गैर–श्वसन स्वास्थ्य खतरे, 'चिकित्सा विज्ञान के अभिलेखागार, वॉल्यूम। 6, नहीं। 4, पी.पी. 483–495, 2010. यहां देखें : प्रकाशक साइट : गूगल शास्त्री
6. एम. करगारफर्ड, पी. पोरसाफा, एस. रेजानेजाद, और एफ. मौसाविनासब, 'एरोबिक पावर पर प्रदूषित हवा में व्यायाम के प्रभाव, सीरमलैक्टेट स्तर और सक्रिय व्यक्तियों के से लब्लडकाउंट, 'इंटरनेशन लजर्नल ऑफ प्रिवेंटिव मेडिसिन, वॉल्यूम. 2, नहीं। 3, पी.पी. 145–150, 2011. यहां देखें : Google विद्वान
7. पी. एफ. कूगन, एल.एफ. व्हाइट, एम. जेरेटएटअल।, 'वायु प्रदूषण और लॉसएंजिल्स में रहने वाली अश्वेत महिलाओं में उच्च रक्तचाप और मधुमेह में। लेटसकी घटना, 'परिसंचरण, वॉल्यूम। 125, नहीं। 6, पी.पी. 767–772, 2012. देखें।
8. खान, आई. ए., पर्यावरण कानून, केंद्रीय कानून एजेंसी, इलाहाबाद, 2002।
9. कैलाश ठाकुर, पर्यावरण संरक्षण कानून और भारत में नीति, दीप और दीपप्रकाशन, नई दिल्ली।
10. स्टर्लिंग, एस., पर्यावरण शिक्षा का मान चित्रण। W. D. S. Leal Filho.
11. आर्मिनरोसेनक्रांज़, श्यामदीवान और मार्थाएल. नोबल, भारत में पर्यावरण कानून और नीति – मामले, सामग्री और क़ानून, 1991।

मोबाइल 9354127070, मेलआईडी radhikabansal75@gmail.com

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 103-107

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

पर्यावरण क्षरण से पर्यावरणीय असंतुलन : कारण एवं निवारण

–सज्जन कौशिक

शोध छात्र, एस. के. डी. विश्वविद्यालय, हनुमानगढ़ (राजस्थान)

भूमिका :–

पृथ्वी पर जीवधारी अपने अस्तित्वकाल से ही विभिन्न प्रकार के जीव भौतिक पर्यावरण के विभिन्न संघटको में परिवर्तन एंव परिमार्जन करते आ रहे है, परन्तु 1860 में विश्व स्तर पर औद्योगिकी क्रांति की शुरूआत से ही मनुष्य आधुनिक प्रौद्योगिकी से युक्त होकर सर्वाधिक शक्तिशाली पर्यावरणीय प्रकम के रूप में उभर कर सामने आया है। अब वह भौतिक पर्यावरण को बड़े पैमाने पर परिवर्तन करने लगा है। वास्तव में मनुष्य बुद्धिमान, शक्तिमान वह जो भी चाहे वह कर सकता है तथा वह पर्यावरण को उस सीमा तक बदलने में समर्थ है जो न केवल जीवों के लिए घातक होगा अपितु उसका स्वंय का अस्तित्व संकट में पड़ जायेगा बीसवी शताब्दी में जनसंख्या में हुई। वृद्धि के कारण प्राकृतिक संशाधनो पर अत्यधिक दबाव पड़ा है। परिणाम स्वरूप निरंतर बढ़ती जनसंख्या की आवश्यकताओं की आपूर्ति के लिए प्राकृतिक संशाधनों का धुँआधार विदोहन हो रहा है। पर्यावरण क्षरण का अर्थ यह होता है कि मनुष्य के क्रिया कलापों द्वारा पर्यावरण के संघटको की आधारभूत संरचना में प्रतिकूल परिवर्तनों के कारण पर्यावरण की गुणवत्ता में इस सीमा तक हास होता कि इन परिवर्तनों का जैविक समुराय तथा मानव समाज पर गहरा प्रतिकूल प्रभाव पड़ने लगता है। पर्यावरण क्षरण के कारण पारिस्थितिकीय तंत्र एंव पारिथितिकीय की विविधता में कमी होने से पारिस्थितिकी एंव पर्यावरण असंतुलन उत्पन्न होता है।

पर्यावरण क्षरण तथा प्रदूषण में भिन्नता :–

सामान्य रूप मे जनसाधारण के लिए पर्यावरण क्षरण (ENVIRONMENTAL DEGRADATION) तथा पर्यावरण प्रदूषण (ENVIRONMENTAL POLLUTION) समानार्थी होते है, क्योंकि दोनों का सम्बन्ध पर्यावरण की गुणवत्ता में ह्रास से होता हैं। परन्तु इनके कारको तथा इनके प्रभाव के क्षेत्र एंव मापक के आधार पर इनमें अंतर स्थापित किया जा सकता है। पर्यावरण प्रदूषण का अर्थ मनुष्य के कार्यो द्वारा स्थानीय स्तर पर पर्यावरण की गुणवत्ता में ह्रास जबकि पर्यावरण क्षरण का अर्थ होता है। मानव के कार्यो तथा प्राकृतिक प्रकमों द्वारा स्थानीय, प्रादेशिक एंव विश्व स्तरों पर पर्यावरण की गुणवत्ता में ह्रास तथा क्षरण उदाहरण के लिए ज्वालामुखी उदभेदन, भूकम्प, स्थलखण्ड में उत्थान एंव अवतलन, वलन एंव भ्रंषन वायुमण्डलीय तूफान, टाइफून, हरीकेन, टारनैडो आदि बाढ़ तथा सूखा प्राकृतिक कारणों से वन में अग्नि का प्रकोप, प्राकृतिक विधुत विसर्जन, उपलवृष्टि (ओलापात) अति हिमपाल, भौमिकीय अपरदन, भूमिस्खलन, एवालांश आदि प्राकृतिक कारक हैं जिनके द्वारा पर्यावरण क्षरण प्रारम्भ हो जाता है। परन्तु कभी–कभी मनुष्य के कार्यो का इतना व्यापक प्रभाव पड़ता है कि पर्यावरण में विश्व स्तर पर

क्षरण हो जाता है। जैसे कि ओजोन की परत में छेद तथा हरितग्रह प्रभाव। यह अत्यधिक विस्तृत क्षेत्रों से सम्बन्धित होता है। तथा यह मानव के क्रियाकलापों तथा प्राकृतिक कारकों दोनो के द्वारा होता हैं।

पर्यावरणीय समस्याओं एंव पर्यावरण क्षरण के कारण :-

पर्यावरणीय क्षरण तथा उससें जनित विश्वव्यापी पर्यावरणीय संकट का सर्वप्रथम कारण है, मनुष्य तथा प्राकृतिक पर्यावरण के मध्य तेजी के बिगड़ता सम्बन्ध। वास्तव में प्राकृतिक संशाधनों के तेजी से विरोहन, प्रौद्योगिकीय प्रगति एंव औद्यौगिक एंव नगरीय विस्तार के कारण प्राकृतिक पर्यावरण उसके पारिस्थितिकीय स्वरूप पर दूरगामी प्रतिकूल प्रभाव पड़े हैं। सामान्य तौरपर पर्यावरण क्षरण तथा उससे उत्पन्न पर्यावरणीय समस्याओं एंव पर्यावरण संकट के निम्न कारण हैं।

(1) मानव जनसंख्या में गुणोतर वृद्धि।
(2) तीव्र गति से वैज्ञानिक एंव प्रौद्योगिकीय विकास।
(3) तीव्र गति से विकास के लिए महात्वकांक्षी विकासीय योजनाओं एंव कार्यक्रमों का नियमन एंव क्रियान्वयन।
(4) औद्योगिकरण नगरीकरण एंव कृषि विकास में तेजी से वृद्धि।
(5) समाज के दार्शकनिक एंव धार्मिक दृष्टिकोण।
(6) मनुष्य का प्राकृतिक पर्यावरण एंव प्रकृति के प्रति शत्रुतापूर्ण निर्दयी व्यवहार।
(7) जनसाधारण में पर्यावरण बोध तथा पर्यावरणीय समस्याओं के प्रति जागरूकता एंव जानकारी की कमी।
(8) निर्धनता।
(9) कुछ देशों में कुछ वर्गो में आवश्यकता से अधिक समृद्धि, अर्थात् असमान आर्थिक विकास।
(10) प्राकृतिक संशोधनों का अविवेकपूर्ण एंव लोलुपतापूर्ण विदोहन आदि।

मनुष्य के कार्यो तथा पर्यावरण में तेजी से हो रहे परिवर्तनों तथा उनसे उत्पन्न पर्यावरण क्षरण के भयावह रूप को देखते हुए R.F DASMANN (1976) नें कहा है कि ''मानव दौड हाथ में ग्रेनेड लिया बंदर के समान है। कोई यह नही जानता है कि वह कब ग्रेनेड से पिन खीच लेगा तथा विश्व तहस–नहस हो जायेगा। अब हम कुछ बिंदुओं पर पर्यावरण क्षरण के कारणों पर विषेश दृष्टिपात करेगें।

(1) वन विनाश तथा पर्यावरण क्षरण– वन विनाश के कारण निम्न समस्यायें उत्पन्न होती है, तीव्र मृदा अपरदन, नदियो के अवसाद भार में वृद्धि, नदियों की तलियों तथा जलभण्डारों का भराव, बाढ़ तथा सूखे की आवृत्ति तथा तीव्रता में वृद्धि आदि।

वनों के अभाव में मानव–जनित कार्बन डाईऑक्साइड की अतिरिक्त मात्रा का अवशोषण नहीं हो पायेगा जिस कारण वायुमण्डल के तापमान में वृद्धि होती है, जिससे पृथ्वी एवं वायुमण्डल का ऊष्मा संतुलन अव्यवस्थित हो जायेगा।

2. कृषि विकास एवं पर्यावरण क्षरण मानव ने आधुनिक वैज्ञानिक तकनीक में विकास, प्रौद्योगिकी रासायनिक खादों के उत्पादन तथा उपयोग में वृद्धि सिचाई के साधनों एवं सुविधाओं में वृद्धि एवं विस्तार, अधिक उत्पादन वाले बीजों के विकास आदि के माध्यम से कृषि में पर्याप्त विस्तार एवं विकास किया है तथा निरंतर बढ़ती जनसंख्या

के कारण बढ़ती खाद्यान्नों की माँग की पूर्ति तो कर दी है, परन्तु साथ ही साथ घातक पर्यावरणीय समस्याओं को जन्म दिया है।

2. कृषि में तेजी से विस्तार होने से पर्यावरण में निम्न क्षरण होता है।

(1) वन विनाश तथा सम्बन्धित, भूमि उपयोग में परिवर्तन होने से।

(2) खेतों में रासायनिक खादों, कीटनाशी एवं रसायनों के प्रयोग से।

(3) सिंचाई की सुविधाओं एवं सिंचाई की मात्रा में वृद्धि होने से।

(4) जैविस समुदायों में परिवर्तन होने से।

3. जनसंख्या में वृद्धि तथा पर्यावरण क्षरण

कृषि में विस्तार, नगरीकरण, औद्योगिकरण आदि बढ़ते मानव समुदाय के ही प्रतिफल हैं जनसंख्या में लगातार वृद्धि होने के कारण सीमित प्राकृतिक संशाधनों पर दबाव दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है, जिस कारण प्राकृतिक संशाधनों के तेजी से परंतु धुँआधार विदोहन के कारण अनेक पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न हो रही है।

जनसंख्या का सर्वाधिक सांन्द्रण महानगरों तथा विकासशील देशों में पाया जाता है।

जनसंख्या से सम्बन्धित पर्यावरण क्षरण के निम्न कारण हैं :–

(1) विश्व की जनसंख्या में तेजी से वृद्धि।

(2) नगरों में विस्तार तथा नगरो में जनसंख्या के सांन्द्रण में सतत् वृद्धि।

(3) विश्व के विकसित एंव विकासशील देशों की जनसंख्या में तीव्र गति सें बढ़ता अन्तराल।

(4) नगर ग्रामीण जनसंख्या के अनुपात में वृद्धि आदि।

पर्यावरण क्षरण की रोकथाम के लिए एंव पर्यावरण की गुणवत्ता सुधारने के लिए जनसंख्या की वृद्धि पर रोक लगाना नितांत आवश्यक है।

(4) औद्योगिक विकास एंव पर्यावरण क्षरण विज्ञान एंव प्रौद्योगिकी में प्रगति, औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि का पर्यावरण पर बुरा असर पड़ता है।

कारखानों में कच्चे पदार्थो के उपयोग के लिए प्राकृतिक संशाधनों के अत्यधिक विदोहन के कारण निम्न परिणाम उत्पन्न होते हैं। जो पर्यावरण की गुणवत्ता को दुष्प्रभावित करते हैं।

(1) वनों की कटाई के कारण वन क्षेत्र का ह्रास।

(2) खनिज पदार्थो के खनन के कारण धरातल का उत्खनन तथा बंजर भूमि में परिवर्तन।

(3) औद्योगिक विस्तार के कारण कृषि भूमि में ह्रास।

(4) भूमिगत जल के अधिक निष्कासन के कारण भूमिगत जल के तल में गिरावट।

(5) भूमिगत जल एंव खनिज तेल के निष्कासन के कारण धरातलीय सतह में अवतलन आदि। कारखानों मे औद्योगिक अपशिष्ट पदार्थ, प्रदूषित जल, जहरीली गैस, रासायनिक अवक्षेप, एअरोसॉल, धूल एंव राख तथा धूम आदि।

5. नगरीकरण का विस्तार एंव पर्यावरण क्षरण :–

नगरीकरण का विस्तार एंव वृद्धि से नगरों में मानव जनसंख्या के सांद्रण में अत्यधिक वृद्धि तथा इस नगरी जनसंख्या में प्रस्फोट के कारण भवनों सड़कों, गलियों, मलजल के नालों बरसाती नालों, पक्की सतह, स्वचालित

वाहनों (मोटरकार, ट्रक, बस, मोटर साइकिल, स्कूटर आदि कारखानों की संख्या नगरीय अपशिष्ट पदार्थ, एअरोसाँल, धूम, धूल, राख, दूषित जल, हानिकारक गैसों आदि में भारी वृद्धि हुई है।

दिल्ली (कमसीप) के पास यमुना नदी अब एक मलजल वाहक (सीवेज) बनकर रह गयी है, क्योंकि दिल्ली (कमसीप) शहर के 17 खुले बड़े नालों से प्रतिदिन 323 मिलियन गैलेन मलजल यमुना नदी में पहुँचता है, जबकि दिल्ली के नगर महापालिका निगम के दूषित जल के शोधन संयत्रो (Treatment plant) की क्षमता महज 184 मिलियन गैलेन प्रतिदिन है। नगरों के विभिन्न स्थानों पर शहरी कचरा कई दिनों तक सड़ता रहता है, जिससे ढेरों जहरीली गैसे निकलती हैं, जिनसे पर्यावरण प्रदूषित होता है।

6. आधुनिक प्रौद्योगिकी तथा पर्यावरण क्षरण :–

प्रारम्भिक युगो में प्रयुक्त प्रौद्योगिकी अधिक विनाशकारी नही थी, क्योकि उन दिनों प्रौद्योगिकी के प्रयोग का प्रमुख उद्देश्य था आम जनता को जीवन निर्वाह के लिए मात्र आवश्यक न्यूनतम वस्तुओं को सुलभ कराना, परन्तु वर्तमान प्रौद्योगिकी अधिक खतरनाक एंव विनाशकारी हो गई है, क्योंकि अब आधुनिक प्रौद्योगिकी के प्रयोग का प्रमुख उद्देश्य प्राकृतिक संशाधनों का तीव्र गति से विदोहन करना तथा मानव समाज के भौतिक स्तर को ऐश्वर्यपूर्ण बनाना।

आधुनिक प्रौद्योगिकी की सहायता से मनुष्य नरियों पर बड़े–बड़े बाँध तथा जलमण्डारों के निर्माण करने में सक्षम तो हो गया है परन्तु इसके दुष्परिणाम भी हैं जो निम्न है।

(1) बड़े बाँधो तथा जलाशयों के भार के कारण नीचे स्थित शैलों का संतुलन बिगड़ जाता है जिस कारण विनाशकारी भूकम्प का जन्म होता है। बड़े–बड़े जलभण्डारों के कारण विस्तृत प्राकृतिक वन क्षेत्र जलमग्न हो जाते हैं, जिस कारण प्रभावित क्षेत्र का पारिस्थितकीय संतुलन बिगड़ जाता है। कृषि उत्पादन मे वृद्धि के लिए रासायनिक खादों, कीटनाशी, शाकनाशी कृत्रिम रसायनों का भारी मात्रा में प्रयोग किया जाता है, जिससे मिट्टी जलाशय, झील, नदियों के जल तथा भूमिगत जल प्रदूषित होते हैं।

रेफीजेरेटर, एअरकण्डीशनर, स्प्रेकैन डिस्पेंसर हेयर ड्रायर आदि के संचालन एंव अग्नि बुझाने वाले यंत्रो के संचालन से भारी मात्रा में CFC तथा हैलन का वायुमण्डल में प्रसार हो रहा हैं। जिसके कारण अधिक से अधिक मात्रा में सूर्य से निकलने वाली पराबैंगनी किरणों के धरातल तक पहुँचने पर तापमान में वृद्धि की संभावना है।

निष्कर्ष :–

पर्यावरण क्षरण के लिए जिम्मेदार प्रकमों एंव कारणो से भावी जीवन के प्रति निराशा जागृत होती है, तथा यह भी आभास होता है कि सभी विकासीय कार्य प्रकृति तथा पर्यावरण के विपरीत हैं। ज्ञातव्य है कि यदि हमें वर्तमान समाज को विकसित करना हैं, तथा बढ़ती जनसंख्या की माँगो को पूरा करना है तो विकास की गति को बनाये रखना होगा। परन्तु विकास कार्य पर्यावरण एंव मानव समुदाय के अस्तित्व को खोकर नही किया जाना चाहिए पर्यावरण क्षरण का मूल कारण जनसंख्या में तीव्र गति से वृद्धि ही है। अतः पर्यावरण क्षरण को रोकने के लिए निम्न उपाय करना होगा।

(1) प्रदूषण मुक्त प्रौद्योगिकी का विकास।

(2) प्राकृतिक संषोधनों के अंधाधुंध विदोहन पर नियंत्रण।

(3) वन विनाश से प्रभावित क्षेत्रों तथा अन्य बंजर भूमियों पर वनारोपण।

(4) रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशी, शाकनाशी रसायनों के उपयोग पर नियंत्रण।

(5) ओजोन को विनष्ट करने वाले रसायनों के उत्पादन एंव उपभोग में भारी कमी।

(6) हरितगृह प्रभाव को कम करने के लिए जीवाश्म ईधनों के उपयोग में कमी तथा नियंत्रण।

(7) परमाणु शस्त्रों के उत्पादन पर पूर्ण तथा रोक भूमण्डलीय ऊष्मन एंव जलवायु परिवर्तन के कारकों पर नियंत्रण।

(8) आम जनता को पर्यावरण के प्रति शिक्षित एंव जागरूक करना।

(9) अपरदन से प्रभावित कृषि भूमियों का सुधार तथा संरक्षण।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. द्विवेदी डा. अनुराग, उपाध्याय डॉ आंनद कुमार पर्यावरण विज्ञान, अंकित पब्लिकेशंस।
2. घोड़पड़े डॉ तुषार, पर्यावरण पारिस्थितिकी शाहदरी पब्लिकेशंस।
3. प्रसाद डॉ गायत्री, नौटियाल डॉ राजेश पर्यावरण अध्ययन, शारदा पुस्तक भवन प्रकाशन।
4. राजगोपालन आर पर्यावरण एंव पारिस्थितिकी ओक ब्रिज पब्लिकेशंस।
5. तिवारी डॉ पर्यावरण सतत विकास एंव जीवन प्रभात प्रकाशन।

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 108-114

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

पर्यावरण प्रदूषण : राजनीतिक विमर्श

-श्रीमती श्वेता मोर

सहायक प्राध्यापक राजनीति विज्ञान, शा.क.ने.कन्या महाविद्यालय, बालाघाट (म.प्र.)

पर्यावरण प्रदूषण का अर्थ :-

पर्यावरण को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से प्रदूषित करने वाला प्रक्रम (Process) जिसके द्वारा पर्यावरण (स्थल, जल अथवा वायुमंडल) का कोई भाग इतना अधिक प्रभावित होता है कि वह उसमें रहने वाले जीवों या पादपों के लिए अस्वास्थ्यकर, अशुद्ध, असुरक्षित तथा संकटपूर्ण हो जाता है अथवा होने की संभावना होती है, पर्यावरण प्रदूषण कहलाता है। पर्यावरण प्रदूषण सामान्यतः मनुष्य के इच्छित अथवा अनिच्छित कार्यों द्वारा पारिस्थितिक तंत्र में अवांछित एवं प्रतिकूल परिवर्तनों के परिणामस्वरूप उत्पन्न होता है जिससे पर्यावरण की गुणवत्ता में ह्रास होता है, और वह मनुष्यों, जीवों तथा पादपों के लिए नुकसानदेह होता है। पर्यावरण प्रदूषण को दो प्रधान वर्गों में रखा जा सकता है :-

1. भौतिक प्रदूषण -स्थल प्रदूषण, जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण आदि,
2. मानवीय प्रदूषण-सामाजिक प्रदूषण, राजनीतिक प्रदूषण, जातीय प्रदूषण, धार्मिक प्रदूषण, आर्थिक प्रदूषण आदि।

सामान्य अर्थों में पर्यावरण प्रदूषण का प्रयोग भौतिक प्रदूषण के संदर्भ में किया जाता है।

भारतीय संस्कृति में पर्यावरण संरक्षण :-

भारतीय संस्कृति में पर्यावरण के संरक्षण को बहुत महत्त्व दिया गया है। यहाँ मानव जीवन को हमेशा मूर्त या अमूर्त रूप में पृथ्वी, जल, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्र, नदी, वृक्ष एवं पशु-पक्षी आदि के साहचर्य में ही देखा गया है। पर्यावरण शब्द का अर्थ है- हमारे चारों ओर का वातावरण। पर्यावरण संरक्षण का तात्पर्य है कि हम अपने चारों ओर के वातावरण को संरक्षित करें तथा उसे जीवन के अनुकूल बनाए रखें। पर्यावरण और प्राणी एक-दूसरे पर आश्रित हैं। यही कारण है कि भारतीय चिन्तन में पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा उतनी ही प्राचीन है जितना यहाँ मानव जाति का ज्ञात इतिहास है।

भारतीय संस्कृति का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि यहाँ पर्यावरण संरक्षण का भाव अति पुरातनकाल में भी मौजूद था पर उसका स्वरूप भिन्न था। उस काल में कोई राष्ट्रीय वन नीति या पर्यावरण पर काम करने वाली संस्थाएँ नहीं थीं। पर्यावरण का संरक्षण हमारे नियमित क्रियाकलापों से ही जुड़ा हुआ था। इसी वजह से वेदों से लेकर कालीदास, दाण्डी, पंत, प्रसाद आदि तक सभी के काव्य में इसका व्यापक वर्णन किया गया है। भारतीय दर्शन यह मानता है कि इस देह की रचना पर्यावरण के महत्त्वपूर्ण घटकों- पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश

से ही हुई है। समुद्र मंथन से वृक्ष जाति के प्रतिनिधि के रूप में कल्पवृक्ष का निकलना, देवताओं द्वारा उसे अपने संरक्षण में लेना, इसी तरह कामधेनु और ऐरावत हाथी का संरक्षण इसके उदाहरण हैं। कृष्ण की गोवर्धन पर्वत की पूजा की शुरुआत का लौकिक पक्ष यही है कि जन सामान्य मिट्टी, पर्वत, वृक्ष एवं वनस्पति का आदर करना सीखें। वर्तमान में जिस प्रकार राष्ट्रीय वन–नीति के अनुसार सन्तुलन बनाए रखने हेतु 33 प्रतिशत भू–भाग वनाच्छादित होना चाहिए, ठीक इसी प्रकार प्राचीन काल में जीवन का एक तिहाई भाग प्राकृतिक संरक्षण के लिये समर्पित था, जिससे कि मानव प्रकृति को भली–भाँति समझकर उसका समुचित उपयोग कर सके और प्रकृति का सन्तुलन बना रहे।

पर्यावरण प्रदूषण पर राजनीतिक विमर्श :–

पर्यावरण एक ऐसा विषय है, जो प्रत्येक व्यक्ति के जीवन को प्रभावित करता है। वर्तमान वैश्विक पृष्ठभूमि में जिस तेजी से पर्यावरण प्रदूषण की समस्या बढ़ रही है, उस हिसाब से सरकार, समुदाय और व्यक्ति का चिंतित होना स्वाभाविक है। दुनिया के कई देशों ने इसे गंभीरता से समझा है, और वहां पर्यावरण हरियाली और हरियाली विषय को लेकर राजनीतिक पार्टियां बन रही है। वर्तमान समय में विकास के नाम पर प्राकृतिक संसाधनों का असीमित दोहन किया जा रहा है, और इस तरह पर्यावरण को जानबूझकर नजरअंदाज किया जा रहा है। विविध देश अपने राष्ट्र निर्माण, आधुनिकीकरण, बहुमुखी विकास और सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में वृद्धि के नाम पर प्राकृतिक संसाधनों का असीमित दोहन करने के साथ–साथ पर्यावरण को गंभीर नुकसान पहुंचा रहे हैं। ऐसा महसूस हो रहा है कि विकास और पर्यावरण के मध्य गंभीर युद्ध छिड़ गया है।

अब विद्वानों और राजनेताओं को यह महसूस होने लगा कि ''अनियन्त्रित विकास हमें विपदा की ओर ले जाता है।'' सन् 1972 में प्रकाशित ''लिमिट्स ऑफ ग्रोथ (Limits of Growth)'' नामक रिपोर्ट में यह चेतावनी दी गई थी कि अगर संसाधनों का दोहन मौजूदा दर से हो होता रहा तो आने वाले सौ वर्षों में मानवीय अस्तित्व खतरे में पड़ जायेगा। रिपोर्ट में यह भी कहा गया कि यह मसला अल्पावधि तकनीकी समस्याओं के हल से नहीं सुलझ सकता क्योंकि ऐसे हल पर्यावरणीय संकट के लिये जिम्मेदार बुनियादी आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक कारणों को दूर नहीं करते। पर्यावरण प्रदूषण पर राजनीतिक विमर्श एक ऐसा प्रयास है जिसके माध्यम से पर्यावरण को संरक्षित करने का प्रयास किया जा रहा है। पर्यावरण संरक्षण, कार्बन उत्सर्जन, जलवायु परिवर्तन आदि विविध महत्वपूर्ण मुद्दों पर निरंतर अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों के माध्यम से राजनीतिक विमर्श किया जा रहा है।

इस सन्दर्भ में किये गये मुख्य अन्तर्राष्ट्रीय प्रयासों की विस्तृतविवेचना नीचे की जा रही है–

स्टॉकहोम सम्मेलन, 1972 (Stockholm Conference, 1972)

संयुक्त राष्ट्र महासभा (General Assembly) द्वारा सन् 1962 में एक प्रस्ताव पारित किया गया था कि मानव पर्यावरण की क्षति को सीमित करने और प्राकृतिक परिस्थितियों के संरक्षण के लिए राष्ट्रीय, क्षेत्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास किया जाना चाहिए। इस निर्णय के तारतम्य में जून 1972 में स्टॉकहोम में पर्यावरण सम्मेलन का आयोजन किया गया। सम्मेलन के बाद जारी घोषणा पत्र में नदी जल के प्रदूषण, वायुमण्डल तथा खाद्य पदार्थों के प्रदूषण, शस्त्रीकरण की होड़, रासायनिक युद्ध प्रणाली, नाभिकीय परीक्षण और औद्योगिक बस्तियों के विकास पर चिन्ता व्यक्त की गई। इसमें एक ऐसी कार्ययोजना को भी स्वीकृति प्रदान की गई, जिसमें जीवन रक्षा, प्रदूषण नियन्त्रण तथा शहरों की मलिन बस्तियों के लिए राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय उपाय किये जा सके।

रियो घोषणा, जून 1992 (Rio Declaration June 1992)

रियो सम्मेलन का आयोजन ब्राजील की पूर्व राजधानी रियो डि जेनरो में 3 जून से 14 जून, 1992 तक किया गया। इसमें 150 देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। सम्मेलन के उपरान्त जारी घोषणा पत्र को रियोघोषणाके नाम से जाना जाता है। रियो घोषणा में पर्यावरण और विकास को परस्पर अन्तनिर्भर माना गया और पृथ्वी के पर्यावरण की सुरक्षा के लिये राष्ट्रों के अधिकार और कर्तव्य का निरूपण किया गया। रियो घोषणा में सम्मिलित मुख्य बातें निम्नवत् हैं :–

(1) सतत् विकास या सम्पोषी विकास (Sustainable Development) के लिये पर्यावरण की सुरक्षा आवश्यक ही नहीं वरन अपरिहार्य है।

(2) पर्यावरण की रक्षा के लिये विकसित देशों की अपेक्षाकृत अधिक जिम्मेदारी बनती है।

(3) राज्यों को पर्यावरण की सुरक्षा के लिये कानून बनाना चाहिए और इसको क्षति पहुँचाने वाले को दण्डित करना चाहिए तथा।

(4) शान्ति, विकास और पर्यावरण रक्षण एक–दूसरे पर अवलम्बित और अविभाज्य हैं।

क्योटो प्रोटोकोल, 1997 (Kyoto Protocol, 1997)

जलवायु परिवर्तन पर एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन क्योटो (जापान) में 1 दिसम्बर से 15 दिसम्बर, 1997 तक आयोजित किया गया। सम्मेलन में 150 राष्ट्रों ने सहभागिता की। इन देशों के प्रतिनिधियों ने विस्तृत विचार–विमर्श के उपरान्त ग्रीन हाउस गैसों (Green House Gases) के उत्सर्जन को सीमित करने के लिए एक सन्धि का प्रारूप तैयार किया गया जिसे क्योटो प्रोटोकॉल (Kyoto Protocol) कहा जाता है। प्रोटोकॉल में उत्सर्जन स्तर (Emission level) के विषय में विस्तृत प्रावधान किये गये। यह कहा गया है कि सन् 2012 तक अमेरिका अपने उत्सर्जन स्तर में 7 प्रतिशत, यूरोपीय संघ के सदस्य 8 प्रतिशत, कनाडा 6 प्रतिशत तथा जापान 6 प्रतिशत की कमी लायेंगे। रूस को अपना उत्सर्जन स्तर 1990 के स्तर पर लाने को निर्देशित किया गया। विकासशील देशों के लिए ऐसा कोई स्तर नहीं निर्धारित किया गया, परन्तु यह कहा गया है कि वे अपने उत्सर्जन स्तर का मापन अवश्य करें। अब तक 157 राष्ट्र क्योटो प्रोटोकॉल या सन्धि की पुष्टि कर चुके हैं। भारत ने सन् 2002 में इस सन्धि पर हस्ताक्षर किये। अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया ने अभी तक इस सन्धि की पुष्टि नहीं की है। ये देश कानूनी आधार के स्थान पर स्वेच्छा से ग्रीन हाउस गैसों को कम करने पर जोर दे रहे हैं।

जोहांसबर्ग शिखर सम्मेलन–2002 :–

यह शाश्वत विकास पर विशेष रूप से आयोजित वैश्विक शिखर सम्मेलन (World Summit on Sustainable Development) था। इसे पृथ्वी–10 सम्मेलन भी कहा गया है, क्योंकि रियो–डि–जेनेरियो में 1992 ई. में दिए गए एजेंडा–21 के कार्यान्वयन की यह दस वर्षीय समीक्षा भी थी। इसमें जलवायु परिवर्तन पर नियंत्रण हेतु क्योटो प्रोटोकॉल को अनिवार्य व समयबद्ध रूप से लागू करने पर बल दिया गया। जैव विविधता को बनाए रखने एवं प्रजातीय विनाश की स्थिति पर प्रभावी नियंत्रण हेतु वर्ष 2015 तक का लक्ष्य निर्धारित किया गया। गैर परम्परागत ऊर्जा के व्यापक प्रयोग हेतु भी 2015 ई. को लक्ष्य वर्ष रखा गया।

कोपेनहेगन सम्मेलन, 2009 (Copenhagen Conference 2009) :–

दिसम्बर, 2009 के तीसरे सप्ताह में कोपेनहेगेन में जलवायु परिवर्तन पर सम्मेलन का आयोजन हुआ।

इसकी समाप्ति पर कोपेनहेगन घोषणा–पत्र जारी किया। 28 राष्ट्रों द्वारा निर्मित घोषणा पत्र को 188 देशों द्वारा स्वीकृति दी जा चुकी है। घोषणा–पत्र में यह कहा गया है कि कार्बन डाइऑक्साइड द्वारा पैदा प्रदूषण 2 डिग्री सेल्सियस से कमकरने का लक्ष्य होना चाहिए जितना कि पूर्व–औद्योगिक समाज में था।

कोपेनहेगेन घोषणा के अन्तर्गत विकासशील देशों की इस सन्दर्भ में सहायता करने के उद्देश्य से 30 बिलियन डॉलर के Fast Start Fund की स्थापना की गई। विकसित देशों ने इस Fund में योगदान करने की घोषणा की। जापान और यूरोपीय यूनियन ने सन् 2012 तक इस Fund में क्रमशः 15 और 10.5 बिलियन डॉलर देने की घोषणा की। अमेरिका ने। बिलियन डॉलर देने का वचन दिया।

जैव विविधता सम्मेलन 2010 :–

जापान के नागोया में 18–29 अक्टूबर, 2010 को जैव–विविधता सम्मेलन आयोजित हुआ। संयुक्त राष्ट्र संघ वर्ष 2010 को 'अन्तर्राष्ट्रीय जैव विविधता वर्ष' के रूप में मना रहा है। सम्मेलन की समाप्ति पर ऐतिहासिक नागोया जैव विविधता घोषणा–पत्र (नागोया प्रोटोकॉल) जारी किया गया, जिसमें क्लाइमेट चेंज से जैव विविधता में आने वाली कमी की चुनौतियों से निपटने के लिए सदस्य देशों ने अपना समर्थन व्यक्त किया। अप्रैल, 2002 में इस कन्वेंशन के पक्षकारों ने वर्ष 2010 तक जैव विविधता के नष्ट होते दर में व्यापक कमी लाने के प्रति अपनी निष्ठा व्यक्त की थी। इस सम्मेलन में जैव विविधता के संरक्षण से सम्बंधित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए एक 10 वर्षीय रणनीति बनाई गई, जिसे 'आईची' लक्ष्य नाम दिया गया। वस्तुतः आईची जापान का परफैच्यूर (प्रांत के जैसा) है जिसकी राजधानी नागोया है, जहाँ जैव विविधता सम्मेलन आयोजित किया गया। आईची लक्ष्य के अन्तर्गत 20 लक्ष्य शामिल हैं जिसे पाँच रणनीति शीर्षकों में विभाजित किया गया है, जिसमें जैव विविधता ह्रास के कारणों, जैव विविधता संरक्षण, जैव विविधता से प्राप्त लाभों को बढ़ाना व क्षमता निर्माण की प्राप्ति शामिल है।

पेरिस जलवायु सम्मेलन, 2015 (Paris Climate Conference, 2015) :–

30 नवम्बर से 11 दिसम्बर, 2015 के मध्य विश्व के 190 देश फ्रांस की राजधानी पेरिस में एकत्रित हुए ताकि विश्व स्तर पर ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन पर कोई समझ बन सके। सम्मेलन में सभी देश कार्बन उत्सर्जन के स्तर में जल्द से जल्द कमी लाने पर सहमत हुए। इसके अनुसार ग्रीन हाउस गैसों और उनके प्रोत के बीच सन् 2020 तक सन्तुलन बनाया जायेगा। वैश्विक तापमान को आगे 1.5 डिग्री सेल्सियस पर सीमित करने का लक्ष्य है, लेकिन तत्काल 2 डिग्री सेल्सियस करने पर राष्ट्र सहमत हुए। हर पाँच साल पर स्थिति की समीक्षा की जायेगी।यह भी तय हुआ है कि कार्बन उत्सर्जन में कमी लाने के लिए विकासशील देशों को हर वर्ष 100 डॉलर की मदद की जायेगी जिसे बढ़ाया भी जा सकता है।

भारत में पर्यावरण संरक्षण :–

भारत में पर्यावरण संरक्षण का इतिहास बहुत पुराना है। हडप्पा संस्कृति पर्यावरण से ओत–प्रोत थी, तो वैदिक संस्कृति पर्यावरण–संरक्षण हेतु पर्याय बनी रही। भारतीय मनीषियों ने समूची प्रकृति ही क्या, सभी प्राकृतिक शक्तियों को देवता स्वरूप माना। भारतीय संविधान जिसे 1950 में लागू किया गया था परन्तु सीधे तौर पर पर्यावरण संरक्षण के प्रावधानों से नहीं जुड़ा था। सन् 1972 के स्टॉकहोम सम्मेलन ने भारत सरकार का ध्यान पर्यावरण संरक्षण की ओर खिंचा। सरकार ने 1976 में संविधान में संशोधन कर दो महत्त्वपूर्ण अनुच्छेद 48 ए तथा 51 ए (जी) जोड़ें। अनुच्छेद 48 ए राज्य सरकार को निर्देश देता है कि वह 'पर्यावरण की सुरक्षा और उसमें सुधार सुनिश्चित

करे, तथा देश के वनों तथा वन्यजीवन की रक्षा करे'। अनुच्छेद 51 ए (जी) नागरिकों को कर्तव्य प्रदान करता है कि वे 'प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा करे तथा उसका संवर्धन करे और सभी जीवधारियों के प्रति दयालु रहे'। स्वतंत्रता के पश्चात बढते औद्योगिकरण, शहरीकरण तथा जनसंख्या वृद्धि से पर्यावरण की गुणवत्ता में निरंतर कमी आती गई। पर्यावरण की गुणवत्ता की इस कमी में प्रभावी नियंत्रण व प्रदूषण के परिप्रेक्ष्य में भारत सरकार ने समय–समय पर अनेक कानून व नियम बनाए। इनमें से अधिकांश का मुख्य आधार प्रदूषण नियंत्रण व निवारण था। उनका उल्लेख इस प्रकार है–

पर्यावरणीय कानून व नियम निम्नलिखित हैं :-

- ☐ जलु प्रदूषण निवारण एवं नियत्रण अधिनियम 1974
- ☐ पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986
- ☐ वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम, 1981
- ☐ फोरेस्टकंजरवेशन एक्ट, 1960
- ☐ वाइल्ड लाईफ प्रोटेक्शन एक्ट, 1972
- ☐ फोरेस्टस कंजरवेशन एक्ट, 1980
- ☐ वाइल्ड लाईफ प्रोटेक्शन एक्ट, 1995
- ☐ जैव–विविधता अधिनियम, 2002

इन सब कानूनों के द्वारा भारत सरकार ने जल, वायु और ध्वनि प्रदूषण को रोकने के लिए विभिन्न कानूनों का निर्माण किया। वनों की कटाई को रोकने के लिए भी अधिनियम बनाए। साथ ही वन्य जीवों की सुरक्षा से संबंधित कानून बनाए जिससे भारत में विभिन्न प्रजातियों का संरक्षण किया जाए और साथ ही पर्यावरण नीति का भी निर्माण किया गया। 2015 के पेरिस सम्मेलन में ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों के रूप में व्यापक रूप से सौर ऊर्जा के प्रयोग को प्रोत्साहित करना भारत की एक बहुत ही सराहनीय पहल थी जिसे पूरी दुनिया ने स्वीकार किया, यह भारत के लिए बड़ी उपलब्धि थी। इसके साथ ही अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन के शुभारंभ की घोषणा भारतीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और फ्रांस के पूर्व राष्ट्रपति फ्रांस्वा ओलांद ने पेरिस में संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन सम्मेलन के 21वें सत्र में की थी। अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन में 124 सदस्य देश है जिसकी शुरुआत भारत ने की थी. है।

आईएसए सौर–संसाधन संपन्न देशों के बीच सहयोग के लिए एक समर्पित मंच प्रदान करता है, अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन (आईएसए) की कल्पना कर्क रेखा और मकर रेखा के बीच में पूरी तरह से या आंशिक रूप से स्थित सौर–संसाधन संपन्न देशों के गठबंधन के रूप में की गई थी। इस गठबंधन का मुख्य उद्देश्य सौर ऊर्जा का ज्यादा से ज्यादा उपयोग कर जीवाश्म ईंधन से निर्भरता कम करना, इसके अतिरिक्त सदस्य देशों को सस्ती दरों पर सोलर टेक्नोलॉजी का प्रबंध कराना व इस क्षेत्र में अनुसंधान एवं विकास (Research & Development) को बढ़ावा देना है। है. अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन का मुख्यालय भारत के गुरुग्राम में स्थित है। अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन (आईएसए) एक संधि आधारित अंतर–सरकारी संगठन है जो सौर ऊर्जा के लाभों के जरिए और स्वच्छ ऊर्जा अनुप्रयोगों को बढ़ावा देने के लिए वैश्विक बाजार प्रणाली बनाने के लिए काम कर रहा है। इस वैश्विक समूह में 75 हस्ताक्षरकर्ता देशों के साथ, आईएसए एक बहु–हितधारक पारिस्थितिकी तंत्र बनाता है जहां एक सुरक्षित और टिकाऊ दुनिया की ऊर्जा मांगों को पूरा करने के सामान्य और साझा लक्ष्य को बढ़ावा

देने के लिए संप्रभु राष्ट्र, बहुपक्षीय संगठन, उद्योग, नीति निर्माता और नव प्रवर्तक मिलकर काम करते हैं। संयुक्त राष्ट्र महासभा (United Nations General Assembly & UNGA) ने संकल्प 76/123 को अपनाकर अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन (International Solar Alliance & ISA) को पर्यवेक्षक का दर्जा दिया है। यह निर्णय यूएनजीए की छठी समिति की रिपोर्ट के आधार पर लिया गया है।

निष्कर्ष :-

पर्यावरण प्रदूषण को रोकने के लिए संपन्न हुए राजनीतिक विमर्श में अंतरराष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय दोनों ही प्रयास सम्मिलित हैं, लेकिन इन प्रयासों का परिणाम तभी प्राप्त होगा जब इन राजनीतिक विमर्शों में लिए गए निर्णयों को लागू भी किया जाएगा। भारत की इच्छा शक्ति इस संदर्भ में ग्राहय है। अंतर्राष्ट्रीय सौर ऊर्जा गठबंधन का निर्माण इसका ज्वलंत उदाहरण है कि भारत बढ़ते पर्यावरण प्रदूषण के प्रति चिंतित है और अपने विकास को पर्यावरण की बलि चढ़ाकर प्राप्त नहीं करना चाहता। भारत निरंतर पर्यावरण प्रदूषण को रोकने के लिए कृत संकल्पित है, किंतु विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में विकसित राष्ट्रों के भेदभावकारी रवैये का वह विरोधी रहा है, वह इस मत का समर्थक है कि पर्यावरण को दूषित करने में विकसित देशों का महत्वपूर्ण हाथ है इसलिए पर्यावरण संरक्षण में भी उनकी भागीदारी सबसे ज्यादा होनी चाहिए चाहे वह कार्बन के उत्सर्जन में कमी करके हो, पेड़– पौधे लगाकर हो या अविकसित देशों को वित्तीय सहायता देकर हो।

पर्यावरण संरक्षण भारतीय मूल्यों में अंतर्निहित रहा है और वैश्विक सम्मेलनों और संधियों में हमारी भागीदारी में भी यह भाव दिखाई देता है। खतरनाक कचरे को सीमापार ले जाने को नियंत्रित करने संबंधी बेसल कन्वेंशन, रसायन और कीटनाशी के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार संबंधी रॉटरडैम कन्वेंशन, लगातार जैविक प्रदूषण (पीओपी) से मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण की रक्षा के लिए स्टॉकहोम कन्वेंशन, तापमान के संबंध में वैश्विक रूप से बाध्यकारी साधन विकसित करने के लिए मिनामाटा कन्वेंशन, जैव विविधता संबंधी रियो डी जेनेरियो कन्वेंशन, आर्द्रभूमि के संरक्षण के लिए रामसर कन्वेंशन, ओजोन परत की रक्षा के लिए वियना कन्वेंशन, जलवायु परिवर्तन संबंधी संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन (यूएनएफसीसीसी) के लिए पेरिस समझौते जरुरी मुद्दों को उठाते हैं और अब हमारी नीतियों की आधारशिला हैं।

1987 में प्रकाशित 'आवर कॉमन फयूचर' जिसे ब्रूटलैण्ड रिपोर्ट भी कहते हैं, मैं सतत विकास को परिभाशित करते हुए कहा गया कि "हमें प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग इस प्रकार करना चाहिए की आने वाली पीढ़ियों के लिए संसाधनों की कमी न हो।" भारत प्राचीनकाल से ही संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग पर बल देता है। भारत अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन (आईएसए) के माध्यम से, सौर ऊर्जा क्षमता बढ़ाने की वैश्विक मुहिम का नेतृत्व कर रहा है। भारत पर्यावरण रक्षण की अपनी पुरातन शाश्वत वैदिक परंपराओं को निरंतर रखते हुए अपने सतत् विकास की आकांक्षा रखता है जो कि विश्व के अन्य राष्ट्रों के लिए भी अनुकरणीय होना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Babel Basantilal : Environmental Protection Laws (Paryavaran Sanrakshan Kanoon), Khetrapal Publishing.
2. arkariguider.com/

3. चंद्रशेखर तिवारी : ''राजनीति : मानव, पर्यावरण और समन्वयवाद "Jansatta.com/politics/jansatta-raajneeti-editorial-on-human-environment-and-coordination/1042149
4. दीप्ति एवं कुमार महेंद्र : ''पर्यावरण संरक्षण'', अर्जुन पब्लिशिंग हाउस 2012
5. यादव कुसुम एवं यादव सरोज : ''पर्यावरण मुद्दे एवं नीतियां'', नालंदा प्रकाशन 2019
6. शर्मा प्रभुदत्त : ''अंतर्राष्ट्रीय राजनीति'', पेपरबैक पब्लिकेशन 2014
7. पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986
8. अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन में शामिल हुआ अमेरिका]https://www.drishtiias.com/hindi/daily-updates/prelims-facts/us-joins-international-solar-alliance
9. अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन (आईएसए) की सदस्यता का सार्वभौमिकरण, https://mea.gov.in/press-releases-hi.htm?dtl/32866/

E Mail-shwetamore.rpr@gmail.com
Mobile- 9713602775

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 115-118

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

अति उपभोग एवं धारणीय विकास : पर्यावरण के संदर्भ में

डॉ. पंकज बीरमाल, शोध निर्देशक

–श्रीमती शीतल सुरेश भिडोदिया, शोधार्थी

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,देवी अहिल्या विश्वविद्यालय क्रिश्चियन कॉलेज, इन्दौर (म.प्र.)

जीवधारियों एवं वनस्पतियों के चारों ओर जो आवरण है, वह पर्यावरण कहलाता है। पर्यावरण शब्द की उत्पत्ति फ्रेंच शब्द Environ से हुई है, जिसका अर्थ है –आवृत्त या घिरा हुआ। पर्यावरण जैविक तथा अजैविक अवयवों का सम्मिश्रण है, जो जीवों को अनेक प्रकार से प्रभावित करता है।

सबसे सरल अर्थों में हमारा परिवेश ही पर्यावरण है। भारत वर्ष ऐसा देश है जहाँ पर्यावरण से संबंधित ज्ञान नया नहीं अपितु एक धरोहर है। पृथ्वी को माता मानने का दृष्टिकोण हमारे अतीत से जीवन में सहज विद्यमान रहा है। भारतीय दर्शन में पर्यावरण के वैज्ञानिक पक्ष के साथ इसके संरक्षण के नैतिक दायित्व एवं उपाय भी सुझाए गए हैं। उदाहरण के लिए वेदों में वर्णित शान्तिपाठ में पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, अंतरिक्ष एवं वनस्पति समेत सभी की शान्ति की कामना की गई है। वृक्षों का पूजन, नदियों को पवित्र मानना, धरती को नमन जैसे संस्कारों में पर्यावरण संरक्षण के सिद्धांत छुपे हैं।

इस सदी के आठवें दशक तक पर्यावरण को मूल रूप से प्रदूषण तथा इसके भौतिक तथा जीव विज्ञानीय प्रभावों तक ही सीमित रखा जाता था परन्तु पर्यावरण संबंधी नयी समस्याओं और अवधारणाओं ने संदर्भों को अत्यंत व्यापक बना दिया है। इसके अंतर्गत अब वनों की कटाई एवं भूमि और मिट्टी के अत्यधिक प्रयोग से उत्पन्न बाढ़ और अकाल प्रदूषित वायु, असुरक्षित जलापूर्ति से होने वाली हानियाँ, बच्चों तथा किशोरों में बढ़ती कुपोषणता, बढ़ती जनसंख्या के कारण प्राकृतिक संसाधनों पर बढ़ता हुआ दबाव आदि पर्यावरणीय समस्याएँ सम्मिलित है। यह नई अवधारणा स्पष्टतः पर्यावरण को विकास के साथ जोड़ती है।

प्राकृतिक घटकों के अन्तर्संबंधों को साफ–साफ समझ लिया जाए तो यह निष्कर्ष सामने आता है कि लोगों के कल्याण, सुरक्षा और पर्यावरण सुरक्षा के उद्देश्यों के लिए अपेक्षित सामाजिक, राजनैतिक प्रणाली को बनाए रखना उतना ही अनिवार्य है जितना कि आर्थिक विकास एवं आर्थिक संवृद्धि को सुनिश्चित करना।

विकास :–

''विकास'' के बारे में हम कैसा सोचते हैं? हमारी नजरों में विकास का रूप कैसा होना चाहिए? पूरी दुनिया में सरकारे और लोग विकास को पारम्परिक आर्थिक संवृद्धि और खपत के समकक्ष रखते हैं और सभी चेतावनियों के बावजूद ऐसा करने जा रहे हैं। निश्चित रूप से यह सच है कि आर्थिक विकास का यही अर्थ है जिसे ताकतवर तत्वों ने अपनी पेशेवराना हरकतों के जरिये बड़ी कामयाबी से ज्यादातर लोगों पर लाद दिया है लेकिन यह अवधारणात्मक

भ्रष्टाचार है।

पर्यावरण विकास का सिर्फ साधन नहीं है, बल्कि वह विकास का लक्ष्य भी है। विकास पर्यावरण के विनाश की बुनियाद पर खड़ा नहीं हो सकता है। ''विकास'' जितना विकास करता है, उससे ज्यादा का विनाश नहीं कर सकता। यह तो मानव की अति शोषण की क्रूर मानसिकता है जो वह प्राकृतिक संसाधनों का अति दोहन कर अपने ही पैरों पर खुद कुल्हाड़ी मार रहा है।

अतिउपभोग :–

''प्रकृति हर व्यक्ति की जरुरत को पूरा कर सकती है लेकिन किसी एक के लालच को नहीं।''

–महात्मा गाँधी

मानव के उपभोग की लगभग सभी गतिविधियाँ पर्यावरण को कहीं न कहीं प्रभावित करती है। अति उपभोग का मतलब है कि एक मानव समूह द्वारा बड़े पैमाने पर प्राकृतिक संसाधनों का उपभोग करके प्रदूषण फैलाना और पर्यावरण का क्षरण करना। पानी, रोटी, कपड़ा और मकान ये हमारी सबसे बुनियादी जरुरतें प्राकृतिक संसाधनों से पूरी होती है। यह उपभोग कब 'अति उपभोग' हो जाता है? इसका उत्तर देना एक ढेढ़ा काम है।

''भोजन'' साधारण दाल और चावल भी भोजन है और भारी पुलाव, मिठाई, आइसक्रीम आदि चीजें भी भोजन हैं। यानी जिस गुणवत्ता और मात्रा का भोजन हम करते हैं उससे पता चलता है कि हम सिर्फ अपनी बुनियादी जरुरते पूरी कर रहे हैं या विलासितापूर्वक जी रहे हैं।

''मकान'' साधारण रूप से बनाए गए मकान जिसमें धूप व वर्षा से बचाव होना चाहिए एवं परिवार के सदस्यों के लिए आरामदायक होना चाहिए लेकिन आज इसकी परिभाषा ही परिवर्तित हो गई है जिसमें सुविधाओं के साथ दिखावे ने भी स्थान ले लिया है। मकान जो बंगले बनते जा रहे हैं। जिसमें कहीं लकड़ी के काम में अति है तो कहीं बिजली के काम में अति है। फर्नीचर और पी.ओ.पी. मकान की सुन्दरता में चार चाँद लगाते हैं पर इसमें छुपी हानि जैसे वनों और बिजली के क्षरण पर ध्यान नहीं दिया जाता है।

''कपड़ा'' जिसमें सूत के साथ–साथ चमड़े ने भी लोगों के दिलों में विशेष स्थान बना लिया है। लेदर से बने कपड़े, बेग, जूते इत्यादि लोगों की पहली पसंद बनते जा रहे हैं परन्तु यह सब बनने में और बाजार में आने में चमड़ा किस गतिविधि से गुजरता है यह कम ही जानते होंगे। मवेशियों को केवल मारा ही नहीं जाता बल्कि उन्हें जीते जी भी भूखा प्यासा रख उनके चमड़े को उस लायक बनाया जाता है जिसको वे उपयोग में ले सके यह बहुत ही ह्रदय विदारकघटना है पर हम उसका रूप बदलने पर या उपभोग करते समय इन पर ध्यान नहीं देते हैं।

जरुरतों और विलासिता की मान्यताएँ भी व्यक्ति–व्यक्ति समुदाय और देशों के हिसाब से बदलती है। हो सकता है कि कुछ लोग बुनियादी जरुरतों को जीने के लिए जरुरी समझें तो कुछ लोग तमाम सुविधाओं को बुनियादी जरुरतें समझें।

हमें यह ध्यान रखना ही होगा कि अति जनसंख्या और अतिउपभोग दोनों का पर्यावरण पर असर पड़ता है। दोनों मुद्दों की पड़ताल और उनका समाधान इस ध्यान में रखकर ही ढूंढ़ा जाना चाहिए।

''अधिकांश कानून संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा जून 1972 को स्टॉकहोम में हुए ''मानवीय पर्यावरण के प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन'' के बाद में बनाए गए हैं।''[1] इसी सम्मेलन की याद में प्रति वर्ष 5 जून को पर्यावरण दिवस

के रूप में मनाया जाता है। इस सम्मेलन में भारत का प्रतिनिधित्व भारत की तत्कालिक प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी ने किया था।

भारत में इस समय पर्यावरण संरक्षण के लिए लगभग 200 से अधिक प्रमुख कानून विद्यमान हैं, जिन्हें केन्द्रीय एवं राज्य सरकारें लागू करती हैं।

यद्यपि सरकार अनेक प्रकार के प्रयासों से पर्यावरण की रक्षा करने के प्रयत्न कर रही है, फिर भी धारणीय विकास का मार्ग अपनाना बहुत ही आवश्यक है क्योंकि यहाँ कुछ ऐसी आलोचनाएँ भी हैं जो इन नियमों पर आपत्ति जता रही हैं–

एन.एस. चंद्रशेखर ''इस तरह का श्वान बताया है जो भौंकता तो बहुत है परन्तु काटता नहीं है।''[2]

सी.एस. मेहता ''उस नागराज की तरह से है जिसके विष दंत तो बहुत बड़े हैं परन्तु उनमें विष है ही नहीं।''[3]

धारणीय विकास :-

''पर्यावरण को यदि यथावत छोड़ दिया जाये, तो वह निरंतर लाखों वर्षों तक जीवन का सहारा बन सकता है। इस योजना में एकमात्र सर्वाधिक अस्थिर और संभावित विनाशकारी शक्ति मानव प्रजाति है। मनुष्य आधुनिक प्रौद्योगिकी की सहायता से पर्यावरण में जाने–अनजाने दूरगामी और अपरिवर्तनीय बदलाव लाने की क्षमता रखता है।''

– अनजान

आज ऐसे विकास की आवश्यकता है, जो भावी पीढ़ियों को जीवन की संभावित औसत गुणवत्ता प्रदान करें, जो कम से कम वर्तमान पीढ़ी के द्वारा उपभोग की गई सुविधाओं के बराबर हो। धारणीय विकास की अवधारणा पर संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण और विकास सम्मेलन (UNCED) ने बल दिया, जिसने इसे इस प्रकार परिभाषित किया– 'ऐसा विकास जो वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को भावी पीढ़ियों की आवश्यकताओं की पूर्ति क्षमता का समझौता किये बिना पूरा करें।'

वर्तमान पीढ़ी को आगामी पीढ़ी द्वारा एक बेहतर पर्यावरण उत्तराधिकार के रूप में सौंपा जाना चाहिए। कम से कम हमें आगामी पीढ़ी के जीवन के लिए अच्छी गुणवत्ता वाली परिसंपत्तियों का भंडार छोड़ना चाहिए जोकि हमें उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त हुआ है।

धारणीय विकास की रणनीतियाँ :-

(1) ऊर्जा के गैर पारंपरिक स्रोतों में हम वायु शक्ति और सौर किरणों का उपयोग कर सकते हैं।

(2) ग्रामीण क्षेत्रों में एल.पी.जी. गोबर गैस संयंत्र आसान ऋण और सहायिकी देकर उपलब्ध कराये जा रहे हैं।

(3) शहरी क्षेत्रों में उच्च दाब प्राकृतिक गैस (CNG) का प्रयोग।

(4) जिन क्षेत्रों में हवा की गति तीव्र होती है वहाँ पवन चक्की से बिजली प्राप्त की जा सकती है।

(5) फोटोवोल्टीय सेल द्वारा सौर शक्ति को विद्युत में परिवर्तित किया जा सकता है।

(6) पहाड़ी इलाकों के झरनों से मिनिहाइडल प्लांट, छोटी टरबाइन चलाते हैं। टरबाइन से बिजली का उत्पादन होता है।

(7) पारंपरिक औषधीय प्रणालियों जैसे आयुर्वेदिक, यूनानी, तिब्बती को व्यवहार में लाकर हम उपचार को अपना सकते हैं।

(8) जैविक कंपोस्ट खाद का उपयोग कर मिट्टी को उर्वर बना सकते हैं।

वर्तमान में धारणीय विकास शब्द बहुत लोकप्रिय हो गया है। विकास की विचारधारा में निश्चय ही यह एक दृष्टांत परिवर्तन है। इस मार्ग को अपनाने से चिरस्थायी विकास और सभी के लिए कल्याण सुनिश्चित होगा।

निष्कर्ष :–

पर्यावरण हमारे परिवार के समान है जो हमारे लिए ही अपने सारे कार्य करता है जिससे कि हम खुश, स्वस्थ एवं आरामदायक जीवन जी सके। इसलिए हमारे भी कुछ दायित्व बनते हैं जिससे हम पर्यावरण संरक्षण में सहायता दे सकें। पशु–पक्षियों, पेड़–पौधों से प्रेम व उनकी देखभाल ही हमारा उनके प्रति कृतज्ञता पूर्ण कार्य है जो हम उन्हें दे सकते हैं।

पर्यावरण संसाधनों की बढ़ती माँग जरुर है किन्तु उनकी पूर्ति अत्यधिक उपयोग एवं दुरुपयोग की वजह से सीमित है। धारणीय विकास का लक्ष्य उस प्रकार के विकास का संवर्द्धन है, जो कि पर्यावरण समस्याओं को कम करें और भावी पीढ़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति करने की क्षमता से समझौता किए बिना, वर्तमान पीढ़ी की जरुरतों को पूरा करें।

संदर्भ ग्रंथ :–

1. पर्यावरण अध्ययन – भोपाल सिंह, शिरीष पाल सिंह, मोनिका पब्लिकेशन, जयपुर, पृष्ठ 263
2. पर्यावरण अध्ययन – भोपाल सिंह, शिरीष पाल सिंह, मोनिका पब्लिकेशन, जयपुर, पृष्ठ 264–265
3. पर्यावरण अध्ययन – भोपाल सिंह, शिरीष पाल सिंह, मोनिका पब्लिकेशन, जयपुर, पृष्ठ 280
4. पर्यावरण अध्ययन – भोपाल सिंह, शिरीष पाल सिंह, मोनिका पब्लिकेशन, जयपुर, पृष्ठ 280

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 119-123

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

नीमराणा क्षेत्र में विकसित आधारभूत संरचनाओं का सामाजिक आर्थिक विकास पर प्रभाव

–सुमित कुमार जाट, शोधार्थी
डॉ. राजबाला साईवाल, निर्देशक
एसोसिएट प्रोफेसर

सारांश :–

आधुनिक युग में उद्योग व्यावसायिक क्रिया का एक आवश्यक भाग है। उद्योगों का शनैः–शनैः विभिन्न रूपों में या समान प्रकृति के रूप में विस्तृत क्षेत्र में स्थापित होना औद्योगिकरण कहलाता हैं। औद्योगिकरण स्थापना के दौरान साधनों की उपयोगिता में वृद्धि कर आर्थिक आवश्यकताओं को पूरा किया जा सकता है। औद्योगिकरण के द्वारा न केवल भवनों का निर्माण किया जाता हैं बल्कि साथ–साथ अर्थव्यवस्था के विभिन्न आधारभूत संरचना के कारकों जैसे परिवहन, बैंकिंग, वित्त, विद्युत, कृषि तथा प्रशासन के विभिन्न सत्रों का भी विकास होता है।

औद्योगिक विकास अर्थव्यवस्था के विकास का अभिन्न अंग हैं। जिसके माध्यम से साधनों की कुशलता में वृद्धि कर जीवन स्तर को ऊँचा उठाया जा सकता है। औद्योगिक विकास आर्थिक विकास के संतुलन का भी कार्य करता है। संतुलन के उद्देश्य को ही ध्यानान्तर्गत रखते हुए नीमराणा औद्योगिक क्षेत्र का विकास किया गया है। राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय जोन, फूड पार्क तथा सिरेमिक जैसे विशेष उद्योगों की यहाँ स्थापना की गई हैं।

यह अर्द्धशुष्कीय जलवायविक विशेषताओं का क्षेत्र हैं। जिसका भूमिगत जल स्तर भी अत्यधिक गहराई पर हैं, यह क्षेत्र मौसमी नदी नालों से युक्त हैं। अतः कृषि भी यहाँ पर निर्वहन प्रकार की जाती थी। ऐसे में इस क्षेत्र का विकास औद्योगिक क्षेत्र की स्थापना के माध्यम से ही संभव हो सका। वर्तमान में यहाँ अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के उद्योगों को स्थापित किया गया हैं। यहाँ औद्योगिक विकास का मुख्य कारण राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या–8 तथा राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र का हिस्सा होना हैं।

कुंजी शब्द :– आधारभूत संरचना, अन्तर्राष्ट्रीय जोन, विशेष उद्योगों, राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या–8.

अध्ययन के उद्देश्य :–

शाहजहाँपुर–नीमराना–बहरोड़ क्षेत्र में औद्योगिक विकास हेतु आधारभूत संरचनाओं का अध्ययन कर उनका सामाजिक आर्थिक उत्थान पर प्रभाव ज्ञात करके सुझाव प्रस्तुत करना हैं।

परिकल्पना 1. औद्योगिक क्षेत्रों के विकास हेतु निर्मित आधारभूत संरचनाएँ समाज के आर्थिक उत्थान की चालक होती हैं। जिससे पिछड़े हुए क्षेत्रों का विकास संभव हो पाता है।

2. औद्योगिक विकास से मानव विकास संकेतांक में वृद्धि होती हैं। जिससे क्षेत्र की सामाजिक आर्थिक

स्थिति सापेक्षता से सुदृढ़ बनती है।

आंकड़ा संग्रहण :–

अध्ययन हेतु चुने गए गांवों का चयन उद्देश्य परक तथा सुविधाजनक तरीके से किया गया है। द्वितीय आंकड़े (गैर–सरकारी तथा सरकारी संगठनों) के प्रयोग द्वारा शोध को विश्वसनीय तथा गतिशील बनाया गया हैं। सरकारी संगठन में जिला उद्योग केन्द्र, उप जिला उद्योग केन्द्र, मास्टर प्लान रीको एमएसएमई, मन्त्रालय एनवायरमेन्टल प्लॉन एवं गैरसरकारी संगठनों में बीएमए, एनएमए के आंकड़ों का प्रयोग किया गया हैं। यातायात व्यवस्था, श्रमिकों की स्थिति आदि का आंकलन आनुभविक रूप से किया गया हैं। इन लक्ष्यों की पूर्ति हेतु आगमनात्मक तथा निगमनात्मक विधियों का प्रयोग किया गया है।

जलवायु :–

अध्ययन क्षेत्र की जलवायु अर्द्धशुष्क प्रकार की है। प्रकार की जलवायुविक विशेषताएँ उच्च तापमान, अनिश्चित वर्षा, अल्प वर्षा, गर्म हवाएँ (ग्रीष्म ऋतु) तथा शीत लहर (शीत ऋतु) यहाँ पर मुख्य है।

आधारभूत संरचनाएँ :–

आधारभूत संरचनाओं को दो भागों में विभक्त किया गया है–

अ. आर्थिक संरचना ब. सामाजिक संरचना

(अ) आर्थिक संरचना–

आर्थिक संरचना के अन्तर्गत यातायात मार्ग एवं साधन, संचार, ऊर्जा, बैंक, सरकारी तथा गैर–सरकारी संगठन हैं। अध्ययन क्षेत्र की आर्थिक आधारभूत संरचनाओं का वर्णन निम्नलिखित हैं–

(क) हवाई यातायात – नीमराणा क्षेत्र इन्दिरा गांधी अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा, दिल्ली, सांगानेर हवाई अड्डा जयपुर के लगभग मध्य में स्थित हैं। यह क्षेत्र दिल्ली तथा जयपुर स्थित अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे से विश्वस्तरीय तथा अर्न्तदेशीय उड़ानों का उचित समय पर लाभ प्राप्त करते हैं। दिल्ली स्थित इन्दिरा गांधी हवाई अड्डे से विश्व के प्रमुख शहरों हेतु सेवाएँ प्रदान करता हैं जबकि सांगानेर हवाई अड्डा दुबई, शारजहाँ, बैंकॉक तथा सिंगापुर कुछ सीमित शहरों तक ही सुविधाएँ प्रदान कर रहा हैं। औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि तथा निर्यातोमुखी अर्थव्यवस्था बनाने की दृष्टि से कोटकासिम क्षेत्र में ग्रीनफील्ड हवाई अड्डा निर्माण करने हेतु प्रस्तावित पारित किया गया हैं। जयपुर में एयर कार्गो कॉम्पलेक्स स्थापित किया गया हैं जो कि भिवाड़ी इन्लैण्ड कन्टेनर से जुड़ा हुआ हैं।

(ख) रेलवे – नीमराणा क्षेत्र के वर्तमान में निकटतम स्टेशन बावल (हरियाणा) तथा अजरका स्टेशन हैं। निकट भविष्य में ही यह क्षेत्र रेल ट्रान्समिट सिस्टम की हाईस्पीड ट्रेन सुविधा से दिल्ली तथा अलवर से जुड़ जाएगा। रेल ट्रान्समिट सिस्टम के योजनान्तर्गत 60 किलोमीटर भाग ऐलिवेटेड तथा 35 किलोमीटर मार्ग अन्डरग्राउन्ड तथा 8 स्टेशनों पर इन्टरचेंज की सुविधा उपलब्ध रहेगी। बहरोड़ तक रेल संचालन का कार्य 2025 तक पूरा होने की संभावना हैं।

(ग) सड़क – औद्योगिक क्षेत्र की स्थापना से पूर्व ही यह क्षेत्र राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या–8 के माध्यम से देश के प्रमुख नगरों दिल्ली, मुम्बई, चेन्नई तथा कोलकाता से जुड़ा हुआ था। वर्तमान में राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या 8 स्वर्णिम चतुर्भुज योजना का भाग होने के साथ–साथ औद्योगिक कॉरिडोर का भी भाग है। दिल्ली से मुम्बई तक

औद्योगिक कोरिडोर का विकास किया गया है। जिसके अन्तर्गत 150–200 किलोमीटर के क्षेत्र में औद्योगिक क्रियाएँ संचालित की जानी हैं। राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या–8 पर 6 लेनों में वाहन गमन करते हैं।

(घ) ऊर्जा – जापानी कम्पनी हिताची के सहयोग से केन्द्र सरकार ने गेल कम्पनी की भागीदारी से गैस टर्बाइन स्थापित करने का कार्य शुरू किया गया है। जिससे यहाँ स्थित उद्योगों को सस्तीदर पर बिना पावर कट के बिजली उपलब्ध रहेगी। टरबाईन स्थापित करने का कार्य न्यू एनर्जी एण्ड इंडस्ट्रीयल टेक्नोलॉजी कम्पनी करेगी। यह पावर प्लान्ट 6 मेगावॉट का होना। इस तकनीक के उपयोग से क्षेत्र में कार्बन फुट पिंटस भी कम होगा। इस औद्योगिक नीमराणा क्षेत्र में विद्युत सब स्टेशन 220 के.वी. नीमराणा, 132 के. वी. शाहजहाँपुर तथा 132 के. वी. बहरोड़ मुख्यालयों पर राजस्थान सरकार द्वारा स्थापित किए गए हैं। विद्युत वितरण का कार्य जयपुर विद्युत वितरण निगम लिमिटेड द्वारा किया जा रहा है। परम्परागत ऊर्जा स्रोतों के अतिरिक्त यह क्षेत्र गैरपरम्परागत ऊर्जा स्रोतों के लिए भी पनपने की संभावना रखता हैं।

(ङ) संचार – अध्ययन क्षेत्र गुणवत्ता पूर्ण संचार सुविधाओं से युक्त हैं। इन सुविधाओं के द्वारा औद्योगिक उत्पादन तथा प्रतियोगिता में वृद्धि हुई हैं। शाहजहाँपुर, नीमराणा तथा बहरोड़ में डाकघरों की सुविधा के साथ–साथ विभिन्न कम्पनियों की मोबाईल सुविधाएँ (3जी, 4जी, जी.एस. एम., सीडीएमए, आदि) उपलब्ध हैं। इंटरनेट के तौर पर सभी कम्पनियों में ब्रॉडबैंड, वाईफाई लेन जैसी सुविधाएँ उपलब्ध है।

अलवर जिले में रिको द्वारा मुख्यतः तीन औद्योगिक क्षेत्रों की स्थापना की गई हैं। नीमराणा भी उन मुख्य औद्योगिक क्षेत्रों में से एक हैं। इन सभी स्थापित उद्योगों का लक्ष्य स्थानीय रूप से उपलब्ध कच्चे माल का उपयोग कर निर्यात वृद्धि प्राप्त करना हैं। जैसे ऐग्रो प्रोसेसिंग, बॉयो टैक्नोलॉजी, ऑटो, सिरेमिक उद्योगों तथा गारमेन्टस उद्योगों आदि। रिको द्वारा उद्योगों के विकास हेतु किए गए विशेष संरचनाओं का वर्णन निम्न प्रकार से हैं–

संरचना विवरण :–

EPIP विशेष निर्यातक उद्योगों के लिए भूमि को दो चरणों में 210 तथा 1300 एकड़ उपलब्ध करवाई गई। 152 उद्योगों जैम्स एण्ड ज्वैलरी तथा ऑटो उद्योगों इससे सम्बन्धित है।

SEZ ग्लोबल सिटी की स्थापना के कार्य को पूरा करने के लिए रियल स्टेट को प्रमुखता दी गई। इस क्षेत्र में असंल तथा एपीआई कम्पनियों को मुख्य बनाया गया है।

दक्षता केन्द्र व्यक्तिगत दक्षता में वृद्धि करने के लिए विभिन्न ट्रेनिंग कम्प चलाये जा रहे हैं। जैसे कृषि, सिलाई मशीन, कम्प्यूटर, ब्यूटीपार्लर, साक्षरता आदि का प्रशिक्षण सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा दिया जा रहा है। वेस्ट रिसाईकल मित्सुई तथा निसिन ब्रेक इंण्डिया कम्पनी ने प्राइम एडवान्स कम्पोजिट का कार्य प्रारम्भ किया है। जिससे औद्योगिक कचरे का निस्तारण हो सकेगा।

(च) बैंक – बैंकों के माध्यम से अधिशेष धन को जमा, ऋण तथा मुद्रा विनिमय आदि के कार्य सम्पन्न किए जा सकते हैं। बैंक औद्योगिक तथा व्यावसायिक क्षेत्र में मुद्रा सम्बन्धित समस्याओं को दूर करता है। मुद्रा के कुशल प्रवाह के लिए नीमराणा क्षेत्र में व्यवसायिक क्षेत्रीय पीएनडीसी तथा कॉपरेटिव बैंकों की संख्या 56 है।

ब) सामाजिक आधारभूत संरचना :–

उद्योगों हेतु सामाजिक आधारभूत संरचना एक व्यापक अवधारणा है औद्योगिक सामाजिक आधारभूत संरचना के अन्तर्गत सामाजिक सेवाओं को सम्पत्ति की भांति शामिल करते हैं। सामाजिक आधारभूत संरचना में

शिक्षा, चिकितसा, आवास, रोजगार तथा आय संतुलन के तत्वों को शामिल किया जाता हैं। सामाजिक स्तर को ऊँचा उठाने के लिए सरकार बजट का एक बड़ा भाग इस पर खर्च करती हैं। सामाजिक स्तर में वृद्धि कर कार्यशीहल जनसंख्या में वृद्धि करना, जनभागीदारी, सामाजिक न्याय को बढ़ाना हैं एवं आय की असमानता को कम करना हैं। सामाजिक आधारभूत संरचनाएँ प्रशासनिक तथा भौगोलिक क्षेत्रों के मानव सूचकांक की वृद्धि का भी कारक रहा हैं। नीमराणा क्षेत्र के सामाजिक आधारभूत संरचना मध्यम स्तर से उच्च स्तर की ओर अग्रसर हैं। नीमराणा क्षेत्र की प्रमुख आधारभूत संरचना के प्रमुख कारकों का विवरण निम्नलिखित हैं–

क) शिक्षा–नीमराणा औद्योगिक क्षेत्रों में 100 उच्च माध्यमिक विद्यालय तथा माध्यमिक स्तर के 108 विद्यालय हैं जो कि कुछ राजकीय तथा निजी क्षेत्र के हैं। यहाँ अध्ययनरत् छात्रों की कुल संख्या 24797 जिसमें छात्र 15187 तथा छात्राएँ 9610 हैं। राज्य साक्षरता मिशन प्राधिकरण स्कूलों में नामांकन बढ़ाने के लिए पीपीपी मोड़ पर कार्य कर रहा उच्च सुविधाओं युक्त स्कूल वीआईपी सीनियर सैकण्डरी स्कूल, राठ इन्टरनेशनल स्कूल, पारले जी सीनियर सैकण्डरी स्कूल, डीवीएम स्कूल, संस्कार भारती पब्लिक स्कूल प्रमुख हैं।

राजस्थान सरकार ने शिक्षा अधिनियम के तहत् 63 हजार जनसंख्या पर एक कॉलेज के व्यवस्था को हैं जो कि राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित 77 हजार जनसंख्या से कम है। इस कमी के पीछे कारण क्षेत्र का औद्योगिक विकास तथा राज्य का अधिक क्षेत्रफल होना हैं। निजि क्षेत्र के प्रमुख विश्वविद्यालय एन.आई.आई.टी यूनिवर्सिटी, राफेल यूनिविर्सिटी तथा राय यूनिवर्सिटी प्रमुख हैं। इन्जीनियरिंग कॉलेज में स्कूल ऑफ ऐरोनोटिकल्स, सैन्ट मार्गेट कॉलेज कैम्बे स्कूल ऑफ हॉस्पोटेलिटी मैनेजमेन्ट प्रमुख हैं। आर्टस कॉलेजों में नारायणदास जीपी कॉलेज, नारायणी देवी पीजी कॉलेज तथा गायत्री देवी मुख्य हैं। तकनीकी शिक्षा हेतु पॉलीटेक्किनल कॉलेज नीमराणा में स्थित हैं तथा निजी क्षेत्र में 5 आईटीआई कॉलेज भी इस क्षेत्र में संचालित हैं।

(ख) स्वास्थ्य – स्वास्थ्य के महत्त्व को देखते हुए राज्य सरकार ने 2011–12 के बजट सत्र में महत्त्वपूर्ण तथा अधिकांश रूप से प्रयुक्त होने वाली दवाईयों का सरकारी अस्पतालों में मुफ्त कर दिया। अध्ययन क्षेत्र में सरकारी सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या 6 हैं तथा प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र 14 एवं सब सेन्टरों की संख्या 93 हैं। उच्च सुविधाओं युक्त निजी क्षेत्र के अस्पतालों में मुख्य रूप से मैक्स फोर्स हॉस्पिटल, कैलाश हॉस्पिटल, सिटी हॉस्पिटल जनता हॉस्पिटल, जेपी हॉस्पिटल सम्मिलित हैं।

कस्बा सामुदायिक, स्वास्थ्य केन्द्र, प्राथमिक स्वास्थ्य, केन्द्र, सब सेन्टर योग, शाहजहाँपुर व नीमराणा

3 7 45 55 बहरोड़ 3 7 48 53

(ग) आवास– (1970 में केन्द्र तथा राज्य सरकार के द्वारा मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आवास को प्रमुख दी गई।) औद्योगिक क्षेत्रों में आवास योजना से सम्बन्धित राज्य में कुछ प्रशासनिक निकायों की स्थापना की गई हैं जैसे यू.आई.टी. राजस्थान हाउसिंग बोर्ड, हाउसिंग इन्फ्रास्ट्रक्चर तथा कुछ निजी सोसायटियाँ भी इस क्षेत्र में कार्यरत हैं। क्षेत्र में औद्योगिक विकास डीएमआईसी के तहत् पूरा करने के लिए एसएनबी नगरीय समूह को विकसित करने के लिए आवास हेतु सेज को स्थापित किया गया है। एसएनबी नगरीय समूह की स्थापना ग्लोबल सिटी के तहत् नियोजित की गई हैं। आवासीय उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अंशज सेज तथा अन्य स्थानीय डीलर्स कार्य कर रहे हैं।

सामाजिक आर्थिक स्थिति पर औद्योगिक संरचनाओं का प्रभाव :–

सकारात्मक –

1. विश्वस्तरीय आर्थिक संरचनाओं का निर्माण हुआ हैं जैसे डीएमआईसी कोरिडोर का निर्माण जो कि जापान की औद्योगिक बैल्ट पर आधारित हैं। इस कोरिडोर के निर्मित हो जाने से आवागमन में वृद्धि होगी। जो कि भारत की आर्थिक व्यवस्था को सुदृढ़ करेगा।

2. बैंकों की स्थापना से स्थानीय लोगों में पूंजी प्रवाह बढ़ेगा तथा वे धन को विभिन्न तरीकों से निवेश करने की सोच पैदा कर सकेंगे।

3. आवास की महत्ता को समझते हुए सरकार द्वारा वर्ष 2010 में किफायती दर पर आवास उपलब्ध करवाने की थीम रखी गई। रियलएस्टेट के क्षेत्र में प्रधानमंत्री आवास योजना के तहत् कुछ हिस्सा आमजन के लिए किफायती दर पर रिजर्व रखा जाता हैं जिससे सभी का आवास का सपना पूरा हो सके।

4. यातायात के तीव्र पहुँच होने से किसान मांग आधारित फसलों का उत्पादन कर रहे हैं साथ ही विभिन्न फसलों को उपजाने की विभिन्न तकनीकों को जलवायु के अनुसार प्रशिक्षण हासिल कर लाभ प्राप्त कर रहे हैं। जैसे आंवला, ग्वारपाठा, कपास तथा अन्य फसल एवं सब्जियाँ।

5. औद्योगिक क्षेत्र में वृद्धि तथा उत्पाद की गुणवत्ता एवं मात्रात्मक वृद्धि के लिए अन्तर्राज्जयी श्रमिकों का प्रवास हुआ है। विभिन्न राज्यों के श्रमिकों के प्रवास से स्थानीय लोग भारत के अन्य राज्यों की संस्कृति से रूबरू हो रहे हैं जैसे ईद, छठ पूजा आदि।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. Delhi Mumbai Industrial Corridor.com
2. NCRTCC Project NCRTC.in Archived from-3 May, 2018.
3. Business Standard Newspaper 2 August 2013
4. KBNIR Master Plan
5. RIICO Office Neemrana

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 124-130

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

भारत के उत्तर प्रदेश राज्य में कृषि उत्पादकता का रूझान : एक विश्लेषण

–सुनील, अनुसंधान विद्वान
–डॉ. समृद्धि दाधीच, अनुसंधान पर्यवेक्षक
भूगोल विभाग, श्री खुशाल दास यूनिवर्सिटी, हनुमानगढ़

सार :–

फसल उत्पादकता का मुद्धा तेजी से उभरता जा रहा है। वर्ष 1990 के पष्चात् से प्रति वर्ग उत्पादन को बढाने की प्रक्रिया ने चुनौती पेश की है। विभिन्न प्रकार के तरीके अपनाने के बाद भी किसान उत्पादकता मे मनचाही वृद्धि नहीं कर पा रहा है। इसके लिए फसल चक्र पद्धति को भी अपनाया जा चुका है।

उत्तर प्रदेश कृषि बहुल राज्य होने के साथ–साथ जल उपलब्धता के मामले में भी अग्रणी रहा है। फसल की अच्छी उत्पादकता के लिए आवश्यक है कि उस क्षेत्र की जल–भू आकृति की स्थिति अच्छी हो, जल निकासी घनत्व की स्थिति अच्छी हो, जमीन का ढाल उत्तम हो, भूजल सम्भावना की स्थिति सुदृढ हो, वर्षा की स्थिति ठीक हो। उत्तर प्रदेश इन सभी कसौटियों पर खरा उतरता है। इतना होने के बाद भी फसल उत्पादकता में वृद्धि उत्तम नही है। इस लेख का उद्देश्य उन तथ्यों का पता लगाना है जो भारत के साथ–साथ उत्तर प्रदेश में फसल उत्पादकता के रूझान को प्रभावित करते है।

संकेत शब्द :–

फसल उत्पादकता, फसल चक्र पद्धति, जल उपलब्धता, भारत, उत्तर प्रदेश, भू आकृति, वर्षा, सिंचाई, मृदा संरक्षण, खरपतवार नियन्त्रण, वानिकी, मतस्य पालन, राष्ट्रीय आय, अर्थव्यवस्था, हरित क्रांति, रकबा, तिलहन और दलहन।

प्रस्तावना :–

भारत ने पिछले तीन दशकों मे कृषिं के क्षेत्र में प्रभावशाली प्रगति की है जिसका श्रेय उन छोटे किसान परिवारों को जाता है भारत की कृषि एवं भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। नीतिगत समर्थन, उत्पादन की रणनीतियों, बुनियादी ढाँचे में निवेश, अनुसंधान, पशुधन विकास आदि ने कृषि उत्पादकता को बढाने में काफी मदद की है।

कृषि उत्पादकता खेती में किये गये निवेश के विपरीत कृषि उत्पादन के अनुपात के रूप मापा जाता है। जबकि व्यक्तिगत उत्पादों को प्रायः वजन से मापा जाता है जिसे फसल की उपज के रूप में जाना जाता है। अलग–अलग उत्पाद समग्र कृषि उत्पादन को मापना मुश्किल बनाते है इसलिए कृषि उत्पादकता को आमतौर पर

अंतिम उत्पाद के बाजार मुल्य के रूप में मापा जाता है। इस उत्पादकता की तुलना विभिन्न प्रकार के आगमो (लागत) जैसे श्रम या भूमि से की जा सकती है। कृषि उत्पादकता को कुल कारक उत्पादकता के रूप में भी मापा जा सकता है। कृषि उत्पादकता की गणना करने का यह तरीका कृषि आदानों के सूचकांक की उत्पाद के सूचकांक से तुलना करता है।

हरित क्रांति ने फसल मिश्रण, उपज और उत्पादन में परिवर्तन किया है जिसने आगम के प्रति यूनिट ने उच्च उपज वृद्धि दर्शाई है। कृषि उत्पादकता में वृद्धि कृषि विकास को भी बढावा देती है और विकासशील देशों में गरीबी को कम करने में मदद करती हैं।

कृषि का उत्पादकता स्तर प्रति हेक्टेयर भूमि में फसलों के उत्पादन की मात्रा के रूप में परिभाषित करता है।

$$\text{कृषि उत्पादकता} = \frac{\text{कुल कृषि फसल उत्पादन}}{\text{कुल भूमि क्षेत्र (हेक्टेयर)}}$$

कुल भूमि क्षेत्र (हेक्टेयर) :-

वैश्विक स्तर की दृष्टि से अन्य देशों के उत्पादकता स्तर की तुलना में भारतीय कृषि में उत्पादकता स्तर बहुत कम है। प्रमुख कृषि फसलों के लिए भारत का उत्पादकता स्तर अत्यन्त निराशाजनक है। यही स्थिति उत्तर प्रदेश की भी है।

उत्तर प्रदेश जनसंख्या के हिसाब से भारत का सबसे बड़ा राज्य है राज्य के उत्तर में उत्तराखण्ड़ व हिमाचल प्रदेश, पश्चिम में हरियाणा, दिल्ली एवं राजस्थान, दक्षिण में मध्य प्रदेष तथा छत्तीसगढ़ और पूर्व में बिहार व झारखण्ड़ राज्य स्थित है। इसके अतिरिक्त पूर्वोत्तर दिशा में नेपाल देश है।

उत्तर प्रदेश का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 2,38,566 वर्ग किमी है। उत्तर प्रदेश का मुख्य व्यवसाय कृषि है जो राज्य के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आई.बी.ई.एफ. द्वारा प्रस्तुत एक रिपोर्ट के अनुसार देश के कुल खाद्यान्न उत्पादन में उत्तर प्रदेश की हिस्सेदारी 19 प्रतिशत है। गेंहूँ राज्य की प्रमुख खाद्य फसल है तथा गन्ना जो मुख्यतः पश्चिमी उत्तर प्रदेश में उगाया जाता है राज्य की प्रमुख व्यवसायिक व नकदी फसल है। भारत की लगभग 70 प्रतिशत चीनी उत्तर प्रदेश से आती है।

उत्तर प्रदेश की कृषि अत्यधिक विविध है। कृषि–जलवायु परिवर्तनशीलता की विस्तृत श्रृंखला के अपने तुलनात्मक लाभ के कारण कई प्रकार की फसलों का उत्पादन कर रहा है। यह देश के प्रमुख खाद्यान्न उत्पादक राज्यों में से एक है। धान एवं गेंहूँ राज्य की सबसे महत्वपूर्ण फसले है।

खाद्यान्न की खेती के लिए अधिकतम क्षेत्रफल का उपयोग किया जा रहा है जिसमें से केवल 13.8 प्रतिशत ही दलहन के अन्तर्गत आता है। कुल फसली क्षेत्र का लगभग 80 प्रतिशत खाद्यान्न उत्पादन के लिए समर्पित है।

राज्य में उगाये जाने वाली अन्य महत्वपूर्ण फसले गन्ना, सरसों, मूँगफली और मसूर है। सूरजमुखी और सोयाबीन को भी काफी क्षेत्र में बोया गया है। विभिन्न कृषि–जलवायु परिस्थितियों और नई किस्मों के लिए उपयुक्त प्रौद्योगिकी के विकास के साथ–साथ लोगों की बदलती जरूरतों के कारण राज्य में फसल प्रतिरूप में बदलाव आया है।

मोटे अनाज का रकबा धीरे–धीरे कम होता जा रहा है और अन्य लाभकारी फसले इस जगह को ले रही है। तिलहन और दलहन फसलों के क्षेत्रों में कमी भी दृष्टिगत हो रही है।

कृषि उत्पादकता की स्थिति– भारत में

वर्ष	उत्पादन (000टन)		उत्पादकता (00किग्रा)	
	चावल	गेहूँ	चावल	गेहूँ
1951	1998.5	2721.1	5.19	8.21
1961	3150.9	3293.7	7.53	10.01
1971	3700.9	7689.5	8.11	13.02
1981 (1979)	5141.8	9711	10.65	14.29
1991	mRi	NA	NA	NA
2001	12856	25856	21.17	27.55
2011	14030	30290	24.12	31.92

स्रोत : आर्थिक एवं सांख्यिकी निदेशालय, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार

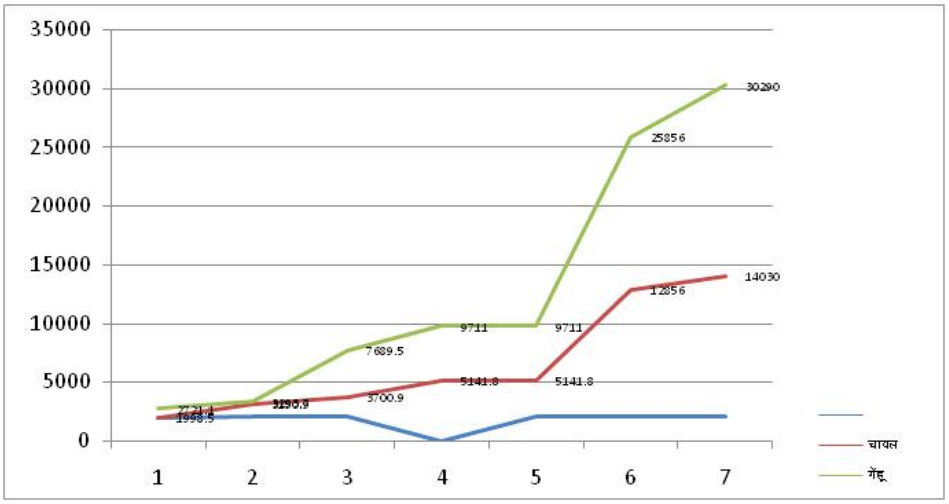

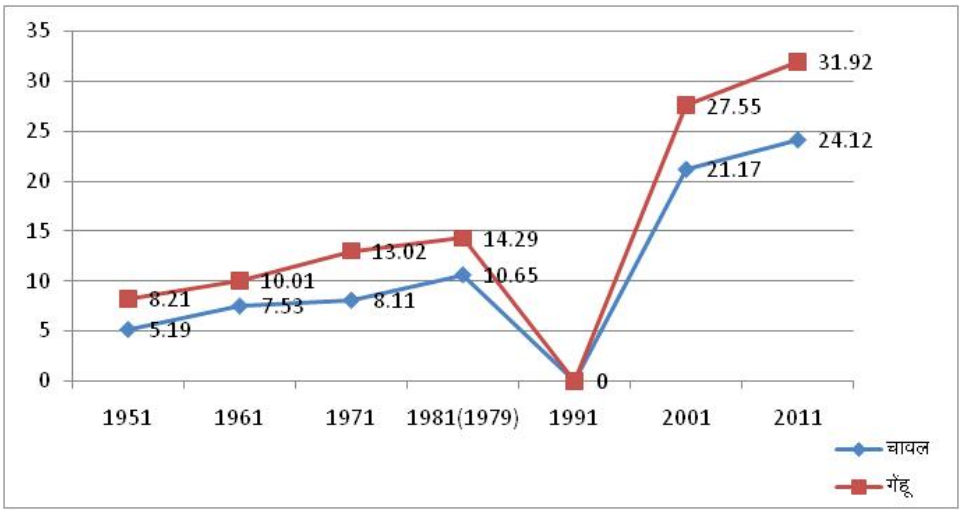

कृषि उत्पादकता के रूझान के कारण :–

लोगों की बदलती जरूरतों के कारण राज्य में फसल प्रतिरूप पर भी असर पड़ा है तथा उसमें बदलावा आया है। कृषि उत्पादकता में वृद्धि करने के रुझान के निम्न कारण है–

लोगों की बदलती जरूरतों की मांग को पूरा करने के लिए :–

- ☐ भू जल की कम उपलब्धता के कारण
- ☐ वर्षा की अनियमितता
- ☐ नकदी फसलें
- ☐ छोटी कृषि जोतें
- ☐ स्थिर पारिवारिक आय
- ☐ उत्पादन लागत में कमी
- ☐ उत्पादन संसाधनों का सर्वोतम प्रयोग
- ☐ आसान पर्यवेक्षण एवं रखरखाव
- ☐ मृदा संरक्षण एवं खरपतवार नियन्त्रण

समस्या कथन :–

वर्षा जल पर निर्भरता एवं भूमिगत जल का स्तर कम होते जाने के कारण किसानों को पुरजोर मेहनत करने के बाद भी उचित लाभ नही मिल पाता है। छोटी–छोटी कृषि जोतों ने इस समस्या को ओर बढा दिया है। इन्ही कृषि जोतों से फसल उत्पादन करना मजबूरी बन गया है। इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि इन्ही कृषि जोतों से अधिक से अधिक उत्पादन प्राप्त किया जाये। इसलिए फसल उत्पादकता का मुद्धा तेजी से उभरता जा रहा है। वर्ष 1990 के पष्चात् से प्रति वर्ग उत्पादन को बढाने की प्रक्रिया ने चुनौती पेश की है। विभिन्न प्रकार के तरीके अपनाने के बाद भी किसान उत्पादकता मे मनचाही वृद्धि नहीं कर पा रहा है। इसके लिए फसल चक्र पद्धति को भी अपनाया जा चुका है।

लेख की महत्वता :–

प्रभावी उत्पादन एवं उत्पादकता के लिए जिम्मेदार कारकों की पहचान करने के लिए यह लेख कृषि अधिकारियों के लिए फायदेमंद रहेगा जिससे वे प्रभावी रणनीतियों के माध्यम से फसल उत्पादकता में वृद्धि करने के लिए कार्य योजना बना सकें। छोटी–छोटी जोतो से भी कम लागत में अधिक उत्पादन के उपाय सुझा सकें।

सम्बन्धित साहित्य का पुनरावलोकन :–

भान व अरोरा (2018) ने उत्तर प्रदेष में किये गये अपने अध्ययन में जलग्रहण के आधार पर बंजर भूमि के प्रभावी पुनर्ग्रहण के अन्तर की पहचान करने का प्रयास किया है साथ ही इसके लिए अपनाए जाने वाले दृष्टिकोणों और उसके घटको के बारे में सुझाव दिया। उनका कहना है कि सुधार किये जाने वाले क्षेत्र के लोगों को स्थायी रूप से आजीविका प्रदान करने की सम्भावनाओं को बताने वाली बंजर क्षेत्रों की सामाजिक–आर्थिक स्थितियों में सुधार के लिए लक्ष्य बनाना चाहिएं जो किसानों को अतिरिक्त आय प्रदान करेगा और रोजगार की सम्भावनाएं बढ़ेगी।

वडिवेलू एवं किरण (2013) ने अपने अध्ययन में पाया कि छोटे किसानो को कृषि उपज के लाभों वंचित

करने से बचने के लिए उन्हे बाजार का ज्ञान जैसे उतार–चढ़ाव, मांग और आपूर्ति की अवधारणाओं के साथ एकीकृत और सूचित करने की आवश्यकता है।

पेके (2008) ने देश के विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न अध्ययनों के माध्यम से छोटे किसानों की उत्पादकता बढ़ाने के लिए प्रमुख बाधाओं के रूप मे कमी और निवेश की उच्च लागतों जैसे श्रम, कृषि रसायन और उर्वरक की पहचान की है।

ऐडेव्यूनी (2006) का मानना है कि कृषि उत्पादकता बढ़ाने के लिए उत्पादन और निवेश में वृद्धि के साथ उत्पादन में निवेश की तुलना में आनुपातिक रूप से अधिक वृद्धि, पैदावार में वृद्धि जबकि निवेश समान रहते हो, निवेश में कमी के साथ पैदावार और निवेश दोनो में कमी या घटते निवेष जबकि उत्पादन समान रहता हो, का होना आवश्यक है।

गांधी एवं नंबूदरी. (2002) के अनुसार छोटे भू–धारक उच्च मूल्य वाले खाद्य उत्पादनों में एक बड़ा योगदान देते है। लेकिन बाजार तक उनकी पहुँच बहुत ही सीमित है। उनका विपषण योग्य अधिशेष की मात्रा बहुत कम है। जबकि उच्च मूल्य की वस्तुओं के लिए स्थानीय बाजार बहुत कमजोर है और दूर के बाजारों में बिक्री करने से परिवहन और विपणन लागत बढ़ जाती है।

फुलगिनिटी एवं पेरिन (1998) के अनुसार कृषि उत्पादकता किसी दी गयी अर्थवयवस्था के कृषि क्षेत्र में दिए गये निवेश स्तर द्वारा उत्पादित उत्पादन को संदर्भित करता है। औपचारिक रूप से इसे कृषि उत्पादन में उपयोग किये गये कुल निवेश के मूल्य के लिए कुल कृषि उत्पादन के मूल्य के अनुपात के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

सिंह एवं गुप्ता (1991) ने अपने अध्ययन में पाया कि सिंचाई के लिए निश्चित की गई जल आपूर्ति की उपलब्धता में वृद्धि और क्षेत्र में नई उच्च मूल्य वाली फसलों की शुरूआत ने क्षेत्र के किसानों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में सुधार किया है।

विधि :–

कृषि पत्र–पत्रिकाओं में उत्पादन एवं उत्पादकता से संबधित साहित्यों की एक व्यवस्थित समीक्षा की गई। मूल्यांकन की गई पत्रिकाओं में कृषि और संबद्ध विषय क्षेत्र के सभी, कृषि प्रबंधन की पत्रिकाएं, फसल चक्र प्रबंधन और फसल चयन के मानदंड और प्रख्यात कृषि अर्थशास्त्री के चयनित लेख के साथ–साथ कृषि सिंचाई के क्षेत्र में किये गये शोध शामिल है। लेखन के समय विभिन्न सरकारी नीतियों व कृषि संबंधी योजनाओं को भी ध्यान में रख गया है।

भविष्य का पैमाना :–

कृषि मंत्रालय, उत्तर प्रदेश के कृषि विभाग की वास्तविक आवश्यकताओं और समर्थन के आधार पर अपनी योजना एवं कार्यक्रम तैयार कर सकता है ताकि प्रभावी किसानों का चयन किया जाकर उन्हे कृषि उत्पादकता से संबंधित विभिन्न घटकों के बारे में जानकारी प्रदान कर उनकी फसल उत्पादकता में वृद्धि करा सके।

निष्कर्ष :–

उपरोक्त तथ्यों व जानकारी के आधार पर कहा जा सकता है कि आज का किसान फसल उत्पादकता के लाभ के बारे में जागरूक हो गया है। आज वे सभी तरीको का उपयोग करने के लिए तैयार रहता है जिससे

उसकी फसल उत्पादकता में वृद्धि हो सके। साथ ही वे छोटे जोतो से अधिक उत्पादन कैसे प्राप्त करे के बारे में जानने के लिए उत्सुक रहता है।

ग्रंथ सूची :-

1. ऐडेव्यूनी एस(2006), द इम्पैक्ट ऑफ फारिंगन डायरेक्ट इनवैस्टमेंट ऑन ग्रोथ इन डवलपिंग कन्ट्रीज, जॉन होपकिंग यूनिवर्सिटीज
2. Evenson, R.E. and D. Jha, (1973) The contribution of the agricultural research system to agricultural production in India. Indian Journal of Agricultural Economics, 28(4): 212-230.
3. सिंह बी.वी एवं गुप्ता डी.डी. (1991), 'सोसियो–इकोनामिक इम्पैक्ट ऑफ बून्गा वाटरशेड़ प्रोजेक्ट इन हरियाणा, इण्डियन जर्नल ऑफ एग्रीकलचर इकॉनोमिक्स, 46 (3) : 304.305
4. भान सूरज एवं अरोरा संजय (2018) सोईल एण्ड वॉटर कन्सर्वेशन इन रेविनियस वाटरशेड, केस स्टेडी फार्म उत्तर प्रदेश, डिपार्टमेंट ऑफ सोईल एण्ड वॉटर कन्सर्वेशन, यूपी।
5. पैके, ओ.आर (2008), इकॉनामिक एनालिसिस ऑफ फूड क्रोप फार्मिग, पर्सपैक्टिव फार्म द ब्राजीलियन एग्रो–इंडस्ट्रीयल इाकॅनामी 1960–1995, 4(1), पेज 184
6. Jha, D. and Praduman Kumar, (1998) Rice production and impact of rice research in India, In: Impact of Rice Research. Eds: Prabhu L. Pingali and Mahabub Hossain, TDRI and IRRI.
7. Joshi, P.K., L. Joshi, R.K. Singh, J. Thakur, K. Singh and A.K. Giri, (2003) Analysis of Productivity Changes and Future Sources of Growth for Sustaining Rice- Wheat Cropping System. National Agricultural Technology Project ((PSR 15;4.2), New Delhi: National Centre for Agricultural Economics and Policy Research(NCAP).
8. वडिवेलू एवं किरण बी.आर (2013), प्रोबलम एण्ड प्रोंस्पैक्ट ऑफ एग्रीकलचर मार्केटिंग इन इण्डिया, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एग्रीकलचरल एण्ड फूड सांइंस, वाल्यूम 3, इश्यू 3, पेज 118
9. Policy at the Crossroads, Eds: S.S. Acharya and D.P. Chaudhri, New Delhi: Rawat Publications.
10. फुलगिनिटी एल एण्डं पेरिन आर (1998), एग्रीकलचरल प्रोउक्टीवीटी इन डवलपिंग कन्ट्रीज, एग्रीकलचरल इकोनोमिक्स, ,वाल्यूम 19, पेज 45–51
11. गांधी वी.पी. एण्ड नंबूदरी एन. (2002), फ्रूट एण्ड वैजीटेबल मार्केटिंग एण्ड इट्स एफीशियेन्सी इन इंड़ियाः ए स्टेडी ऑफ होलसेल मार्केटस् इन अहमदाबाद, इन्टैलीजेन्ट इनफोरमेशन मेनेजमेंट, वाल्यूम 9, न 2
12. भान सूरज एवं अरोरा संजय (2018) सोईल एण्ड वॉटर कन्सर्वेशन इन रेविनियस वाटरशेड, केस स्टेडी फार्म उत्तर प्रदेश, डिपार्टमेंट ऑफ सोईल एण्ड वॉटर कन्सर्वेशन, यूपी
13. वडिवेलू एवं किरण बी.आर (2013), प्रोबलम एण्ड प्रोंस्पैक्ट ऑफ एग्रीकलचर मार्केटिंग इन इण्डिया, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एग्रीकलचरल एण्ड फूड सांइंस, वाल्यूम 3, इश्यू 3, पेज 108–118
14. पैके, ओ.आर (2008), इकॉनामिक एनालिसिस ऑफ फूड क्रोप फार्मिग, पर्सपैक्टिव फार्म द ब्राजीलियन एग्रो–इंडस्ट्रीयल इकॉनामी 1960–1995, 4(1), पेज 184
15. ऐडेव्यूनी एस(2006), द इम्पैक्ट ऑफ फारिंगन डायरेक्ट इनवैस्टमेंट ऑन ग्रोथ इन डवलपिंग कन्ट्रीज,

जॉन होपकिंग यूनिवर्सिटी।
16. गांधी वी.पी. एण्ड नंबूदरी एन. (2002), फूट एण्ड वैजीटेबल मार्केटिंग एण्ड इट्स एफीशियेन्सी इन इंड़ियाः ए स्टेडी ऑफ होलसेल मार्केटस् इन अहमदाबाद, इन्टैलीजेन्ट इनफोरमेशन मेनेजमेंट, वाल्यूम 9, न 2
17. फुलगिनिटी एल एण्डं पेरिन आर (1998), एग्रीकलचरल प्रोउक्टीवीटी इन डवलपिंग कन्ट्रीज, एग्रीकलचरल इकोनोमिक्स, वाल्यूम 19, पेज 45–51
18. सिंह बी.वी एवं गुप्ता डी.डी. (1991) 'सोसियो–इकोनामिक इम्पैक्ट ऑफ बून्गा वाटरशेड़ प्रोजेक्ट इन हरियाणा' इण्डियन जर्नल ऑफ एग्रीकलचर इकॉनोमिक्स, 46 (3) : 304.305

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 131-136

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

राजस्थान के श्रीगंगानगर जिले के विशेष संदर्भ में कृषि का आधुनिकीकरण एवं पर्यावरण पर इसका प्रभाव

सुनील, अनुसंधान विद्वान
–डॉ. समृद्धि दाधीच, अनुसंधान पर्यवेक्षक
भूगोल विभाग, श्री खुशाल दास यूनिवर्सिटी, हनुमानगढ़

प्रस्तावना :–

कृषि ही भारत वासियों का सबसे प्रमुख रोजगार एवं उद्यम है। भारत कृषि प्रधान देश है एवं कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार 69 प्रतिशत लोग ग्रामीण क्षेत्र में रहते हैं। जिनका प्रमुख व्यवसाय कृषि है। एक अध्ययन से पता चला है कि कृषि देश की लगभग 60 प्रतिशत लोगो को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार मुहैया कराती है। रोजगार उपलब्ध कराने के साथ–साथ देश के सकल घरेलू उत्पाद में भी कृषि का लगभग 14 प्रतिशत योगदान है। भारतीय भूमि में निर्धनता के समापन, कृषि के सर्वांगिण विकास और भारतीय जन–जीवन की समृद्धि के लिए स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद आर्थिक स्वतंत्रता के लिए योजनाओं में कृषि विकास के लिए यथा सम्भव प्रयत्न किए गए हैं और अब देश खाद्यान्नों में आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर है। सन् 1966.67 में हरित क्रांति का उद्‌भव हुआ।

हरित क्रान्ति में ग्रामीण जनजीवन को विविधता पूर्ण बनाने तथा उसकी समृद्धि के लिए पृष्ठभूमि तैयार की गयी है। कृषि कार्य आधुनिक प्रविधियों द्वारा सम्पादित किया जाने लगा। यद्यपि हरित क्रांति से कृषि क्षेत्र में तीव्र गति से विकास हुआ है, परन्तु यह विकास देश के प्रत्येक भाग में एक समान न होकर अलग–अलग दिखाई पड़ता है। इसके पीछे कई कारण उत्तरदायी है। इन कारणो में क्षेत्र की जलवायु, धरातल, सिंचाई के साधनों का विकास एवं अनेक आर्थिक तथा सामाजिक कारण प्रमुखतः शामिल होते हैं। भारत की कृषि में हो रहे अनेक तीव्रगामी परिवर्तनों से राजस्थान के जिले भी अछूते नहीं रहे। भारतीय अर्थव्यवस्था के अनुसार ही राजस्थान राज्य की अर्थव्यवस्था में भी कृषि की प्रधानता है, यहां की कृषि में न केवल यंत्रीकरण, सिंचाई, रासायनिक खादों का उपयोग, कीटनाशक दवाइयों के उपयोग एवं अधिक उत्पादनदेने वाले बीजों के उपयोग में भारी वृद्धि हुई है वरन् कृषि की पद्धति एवं तकनीक में भी बहुत सुधार हुआ है, जिससे कृषि उत्पादकता में वृद्धि हुई है।

राजस्थान राज्य के कृषि क्षेत्रों में श्रीगंगानगर जिले का महत्वपूर्ण स्थान है क्योकि इस जिले की कृषि भूमि समतल व उपजाऊ है, साथ ही यहाँ पर गंगनहर, भाखड़ा नहर तथा इन्दिरा गाधी नहर परियोजनाओं द्वारा सिंचाई सुविधायें भी उपलब्ध है। फलस्वरूप यह क्षेत्र कृषि उत्पादन की दृष्टि से श्रेष्ठ क्षेत्र है। राज्य में कुल काश्त क्षेत्रफल का 4.72 प्रतिशत क्षेत्र फल श्रीगंगानगर जिले में है। श्रीगंगानगर जिले का भौगोलिक क्षेत्रफल राजस्थान का 3.19

प्रतिशत है तथा राज्य की कुल जन संख्या का 2.87 प्रतिशत भाग यहॉ निवास करता है। विभिन्न कारणों से आज कृषि में सार्थक परिवर्तन हो रहें है। किसान परम्रागत कृषि पद्धति से हटकर आधुनिक कृषि की तरफ अग्रसर है। कृषि के आधुनिकी करण में प्रभावशाली तत्त्व आधुनिक तकनीक है, जिसके कारण पारिथितिकी में अनेक परिवर्तन हुए हैं। कृषि में आधुनिक आदानों के प्रयोग से सिंचाई क्षेत्रों में वृद्धि हो रही है। ऊर्जा का प्रयोग बढ़ रहा है। फसल उत्पादन में तीव्र वृद्धि हुई है। देश की बढ़ती आबादी के भोजन के लिए हरित क्रांति के माध्यम से हमने अन्न उत्पादन में भारी बढ़ोत्तरी की। इस रिकॉर्ड अन्न उत्पादन के लिए प्रयोग होने वाले कीटनाशको, फंफुद नाशको, खरपतवार नाश को और खादों ने हमारे अन्न भंडारों को तो भर दिया, लेकिन अंधाधुंध कीटनाशकों के प्रयोग ने पर्यावरण को बुरी तरह से प्रदुषित करना भी शुरू कर दिया। फसलों, सब्जियों आरै फलों पर प्रयोग होने वाले इन रासायनिक कीटनाशकों के प्रयोग से ग्रामीण क्षेत्रों का जल, भूमि एवं जलवायु सबसे अधिक प्रभावित हो रहे हैं। मानव शरीर भोजन एवं स्वच्छ वातावरण पर ही आधारित है और अच्छा भोजन एवं स्वच्छ वातावरण कृषि फसलों से ही प्राप्त किया जाता है। अतः मानव का विनाश एवं अस्तित्व कृषि व पर्यावरण पर आधारित है।

मानव विकास के लिए कृषि परिस्थिति की एवं पर्यावरण का संतुलित विकास भी जरूरी है। अतः कृषि व पर्यावरणीय समस्याओं के लिए कृषि पारिस्थिति की व पर्यावरण का अध्ययन करना पडता है। इस अध्ययन के लिए किसी क्षेत्र का चुनाव करना आवश्यक है। अतः कृषि पारिस्थिति की एवं पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान को अर्थशास्त्र का मूल आधार मानते हुए राजस्थान के उत्तरी भाग के कृषि जिले श्रीगंगानगर का अध्ययन हेतु चयन किया गया है। श्रीगंगानगर जिले मे कृषि विकास हेतु राज्य सरकार निरन्तर प्रयासरत रही है तथा इसके अंतर्गत यह अति आवश्यक है कि जिले में कृषि के विभिन्न पहलूओं का क्षेत्रीय अध्ययन किया जावे एवं इन अध्ययनों के आधार पर भावी कृषि विकास की योजनाएं तैयार की जाये, जिससे अधिक से अधिक मानवीय एवं प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग कर कृषि विकास किया जा सके।

OBJECTIVEOFTHEREASARCHWORK :-

प्रस्तुत शोध पत्र में यह भी अनुमान लगाने का प्रयास किया गया कि कृषि के आधुनिक आदानों से कितना लाभ हुआ है और भविष्य में कृषि विकास के लिए क्या क्या संसाधन जुटाने के प्रयास किये जाये। कृषि पारिस्थिति की का विश्लेषण करना ताकि इस अध्ययन के माध्यम से कृषि योजना कर्ता, सामाजिक कार्यकर्ता, प्रशासक एवं व्यक्ति जो क्षेत्र के कृषि विकास योजना में संलग्न है लाभान्वित होकर क्षेत्र के विकास के लिए उचित योजना बना सके। आधुनिक कृषि आदानों का कृषि उत्पादन व कृषि उत्पादकता पर प्रभाव का अध्ययन करना। कृषि विकास संतुलन की पिछली प्रवृतियों के आधार पर वर्तमान में कृषि विकास के स्तर का मापन करना। आधुनिक कृषि आदानों के असन्तुलित प्रयोग से बढ़ रही पर्यावरणीय समस्याओं के लिए कृषि पारिस्थिति की एवं पर्यावरण का अध ययन करना।

HYPOTHESIS :-

अध्ययन क्षेत्र में भौगोलिक परिस्थितियों की प्रतिकूलता एवं विभिन्नता होते हुए भी कृषि पारिस्थितिकी में कृषि के आधुनिकीकरण में प्रभावशाली तत्त्व कृषि आदान अर्थात् आधुनिक कृषि तकनीक प्रक्रिया प्रारम्भ हुयी जिसके कारण पारिस्थितिकी में अनेक परिवर्तन हुए है कृषि कार्यों में यन्त्रीकरण, सिंचाई, रासायनिक खादों का उपयोग, कीटनाशक दवाईयों के अधिक उपयोग एवं अधिक उत्पादन देने वाले बीजों के उपयोग में भारी वृद्धि हुई

है वरन् पद्धति एवं तकनीक में भी बहुत सुधार हुआ है जिससे कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई है। कृषि क्षेत्र में हुए अनुसंधान कार्यों से नई कृषि तकनिकों के विकास आधुनिक कृषि आदान उन्नत बीज, रासायनिक खाद और फसलों को बीमारियों से बचाने हेतु पौध संरक्षण औषधियों की जानकारी एवं उपयोग तथा आधुनिक कृषि आदानों के प्रयोग आदि से कृषि आधुनिकीकरण की ओर अग्रसर हो रही है। हरित क्रांति के बाद के समय में कृषि कार्यों में रासायनिक उर्वरता में अत्यधित निर्भरता, कीटनाशकों के इस्तेमाल में अत्यधिक वृद्धि, अवैज्ञानिक जल प्रबन्धन के कारण भूमि में सुक्ष्म पोषक तत्त्वों में कमी हुई है जिससे उत्पादता में कमी के साथ–साथ गुणवत्ता मे ह्रासही नहीं हो रहा बल्कि हमारा पर्यावरण भी बुरी तरह से प्रभावित हो रहा है।

METHODOLOGY विधि :–

श्रीगंगानगर जिले की विभिन्न तहसिलों से चयनित 400 व्यक्तियों से प्राप्त सूचनाओं का पृथक–पृथक सारणीयन किया गया। सारणीबद्ध व्यवस्थित तथ्यों का सरल सांख्यिकीय एवं गणितीय विधियों से विश्लेषण करके परिणाम निकाले गये समंकों से विश्लेषण तक पहुँचने के लिये सामान्तर माध्य का प्रयोग किया गया। आकंडों से ही निष्कर्ष निकाले गये। इस शोध कार्य हेतु द्वितीय समंक कृषि विभाग, उद्यान विभाग, भू–अभिलेख विभाग, परिवहन विभाग कार्यालय से प्रकाशित एवं अप्रकाशित सामग्री व स्रोतों से प्राप्त किए गये। इसके अलावा मौसम विभाग एवं सांख्यिकीय विभाग श्रीगंगानगर से भी प्रकाशित सूचनाएँ तथा दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक पत्र–पत्रिकाओं से प्राप्त सूचनाएँ भी प्राप्त की गयी। औसत विधि से गत वर्षों का विभिन्न फसलों का प्रति हैक्टेयर उत्पादन निकाला गया। इस प्रकार गत वर्षों का विभिन्न फसलों का प्रति हैक्टेयर उत्पादन निकालने के पश्चात् उत्पादकता की तुलना कर उपलब्ध सांख्यिकीय मापों के आधार पर उचित निष्कर्ष निकाले गये।

कृषि पारिस्थितिकी के आधुनिकीकरण हेतु भौगोलिक क्षेत्रफल का कुल काश्त क्षेत्रफल, शस्य संघनता सूचकांक, शुद्ध क्षेत्र फल का सिंचित क्षेत्र फल, सिंचाई गहनता, आधुनिक यंत्रों एवं औजारों का उपयोग, उन्नत किस्म के बीजों का उपयोग रासायनिक खाद का उपयोग आदि सूचकांकों को आधार प्रमाणीकरण विधि द्वारा सामुकि सूचकांक तैयार किया गया। काल श्रेणी तकनीकी की मदद से दीर्घकालीन उपनति से भविष्य में कृषि विकास का विश्लेषण किया गया। कृषि विकास के साथ–साथ प्राथमिक आकंड़ों के आधार पर प्रश्नावलियां भरवाकर कृषि आधुनिकी करण का पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभाव की विवेचना की गयी।

CONCLUSION :-

राजस्थान राज्य का श्रीगंगानगर जिला वैदिक काल में सरस्वती नदी (घग्घर नाली) के मुहाने पर स्थित होने के कारण यह प्रदेश सारस्वत प्रदेश के नाम से जाना जाता था। वर्तमान में श्रीगंगानगर के नाम से विख्यात यह जिला एक समय निर्जन क्षेत्र था। महाराजा गंगासिंह के प्रयत्न से इस जिले की प्यासी और शुष्क भूमि में गंगनहर का आगमन हुआ। इसी कारण यह जिला वर्तमान में कृषि उपज का भण्डार बन गया है। सम्पूर्ण राजस्थान में कृषि के क्षेत्र में इस जिले का नाम अग्रणी है। वर्तमान समय में गंगनहर व भाखड़ा नहर की शाखाओं के कारण यह क्षेत्र कृषि प्रधान क्षेत्र बना है। कृषि विकास में भूमि उपयोग के स्वरूप का महत्वपूर्ण योगदान होता है। किसी भी क्षेत्र के भूमि उपयोग से कृषि विकास प्रभावित होता है। वर्ष 2005.06 में शस्य गहनता 137.06 से बढ़कर 2014. 15 में 169.21 हो गया।

गत दस वर्षों में श्रीगंगानगर जिले में शस्य गहनता में 32.17 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गयी है। गंगानगर

व रायसिंहनगर तहसील में शस्य गहनता अधिक है। श्रीगंगानगर जिले में सिंचाई का प्रमुख साधन नहरें है। राज्य के अन्य जिलों की तुलना में सिंचाई सुविधा इस जिले में अच्छी है। जिले में कुल सिंचित क्षेत्र 10.86 लाख हैक्टेयर है जो कुल कृषित क्षेत्र फल का 90.51 प्रतिशत है। श्रीगंगानगर में कुल कृषित क्षेत्र फल का 99.17 प्रतिशत नहरों द्वारा तथा 0.83 प्रतिशत टयूबवेल द्वारा सिंचित है। नहरों से सिंचाई मुख्यतः गंगनहर, भाखडा नहर एवं इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना से की जाती है। कुछ हिस्से मे सिंचाई घग्घर नाली से की जाती है। जिले में कोई प्राकृतिक झील या तालाब नही है। ट्यूबवेल के माध्यम से भी सिंचाई की जा रही है। इसके अलावा जहाँ भू–जल स्तर ऊपर है व भू–जल कृषि उपयोग की दृष्टि से उत्तम है वहाँ कुओं व नलकूपों द्वारा सिंचाई की जाती है। जिले में नहरी क्षेत्रों में नहर के साथ–साथ डैम बनाकर एकत्रित किए गए पानी को सिंचाई के काम में लिया जाता है।

श्रीगंगानगर जिले में वर्ष 2005.06 में सिंचाई गहनता 89 प्रतिशत थी जो वर्ष 2014.15 में बढ़कर 90.51 प्रतिशत हो गई, अतः दस वर्षों के अंतराल में सिंचाई गहनता में 92 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस वृद्धि से स्पष्ट होता है कि जिले में इन दस वर्षों में सिंचाई सुविधाओं में व्यापक स्तर पर सुधार हुआ है तथा जिले में सिंचाई की अनेक तकनीकों का विकास हुआ है। श्रीगंगानगर जिले में वर्ष 2014.15 में गंगानगर तथा रायसिंहनगर तहसील में सिंचाई गहनता सर्वाधिक रही।

परिणाम स्वरूप कृषि प्रारूप प्रभावित होने के साथ–साथ कृषि उत्पादन में भी वृद्धि हो रही है। पिछले काफी समय से वर्षा का अभाव झेल रहे जिले के किसान भी फसल का अच्छा उत्पादन प्राप्त करने में सक्षम रहे हैं, उसका प्रमुख कारण सिंचाई सुविधाओं का विकास ही रहा है। हरित क्रान्ति के पश्चात् श्रीगंगानगर में कृषि सुविधाओं तथा तकनीकों का नया दौर शुरू हुआ, जिसके फलस्वरूप यहाँ पर उन्नत बीज, उर्वरक, मशीनों का प्रयोग तथा कीटनाशकों के प्रयोग पर बल दिया जाने लगा। श्रीगंगानगर जिले की विभिन्न तहसीलों में 400 परिवारों पर किये गये व्यक्तिगत सर्वेक्षण में पाया कि जिले में रासायनिक खाद का उपयोग वर्ष 2005.06 में 50. 26 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर था जो वर्ष 2014.15 में बढ़कर 93 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर हो गया, अतः दस वर्षों के अंतराल में 43 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की औसत से रासायनिक खाद के उपयोग में बढ़ोतरी हुई। जिसमें सर्वाधिक वृद्धि गंगानगर तहसील में 79 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर रही। श्रीगंगानगर जिले में रासायनिक खाद का उपयोग 100 प्रतिशत किसानों द्वारा किया जाता है जबकि गोबर खाद का उपयोग 90 प्रतिशत किसान ही करते हैं जो किसान पशुपालन नहीं करते उनको गोबर खाद उपलब्ध नहीं हो पाती इसलिए वे रासायनिक खाद का उपयोग करते हैं।

कृषि विकास में मशीनों का योगदान महत्वपूर्ण है। श्रीगंगानगर जिले के कृषि आधुनिकीकरण पर प्रकाश डालें तो हम देखेगें कि यह जिला राज्य के अन्य जिलों से काफी आगे है और यह कृषि के क्षेत्र में राजस्थान का अग्रिम जिला बन गया है। यहाँ पर कृषि आधुनिकीकरण के अंतर्गत विभिन्न कृषि यन्त्रों का प्रयोग कृषि विकास के लिए किया जा रहा है। श्रीगंगानगर जिले की विभिन्न तहसीलों में 400 परिवारों पर किये गये व्यक्तिगत सर्वेक्षण में पाया कि 74 प्रतिशत परिवार उन्नत किस्म के कृषि यन्त्रों (ट्रेक्टर, सीड ड्रिल, थ्रेसर) का प्रयोग करते है जबकि 25 प्रतिशत किसान पुराने कृषि यन्त्रों (बैल, ऊँट, हल) का प्रयोग करते हैं। जिले में नहरों द्वारा सिंचाई की अच्छी सुविधाएँ उपलब्ध होने के कारण किसान अनूपगढ़ व सूरतगढ़ क्षेत्र में (घग्घर नदी क्षत्रे में) धान की खेती भी करते हैं। इसके अलावा जिले की गंगानगर, करणपुर तथा पदमपुर तहसीलों में गन्ना और चकुन्दर भी उगाए जाते हैं।

श्रीगंगानगर जिले में गेहूँ , जौ, चना, राई व सरसों, कपास तथा चावल के औसत उत्पादन में गत दस वर्षों में वृद्धि हुई है। जिले के भौगोलिक परिवेश के अंतर्गत कृषि विकास में आधारभूत सुविधाओं, कृषि प्रारूप का बदलता हुआ स्वरूप, सिंचाई, कृषि में बढ़ता हुआ मशीनों का उपयोग, उन्नत बीज, रासायनिक खाद का उपयोग सिंचाई सुविधाओं का विकास, कृषि में मशीनीकरण एवं आधुनिक कृषि उपकरणों के उपयोग से धनात्मक परिवर्तन देखने को मिला है वहीं इस रिकॉर्ड अन्न उत्पादन के लिए प्रयोग होने वाले कीटनाशकों फफूदं नाशकों, खरपतवार नाशकों आरै खादों ने हमारे अन्न भंडारों को तो भर दिया, लेकिन अब अपने विशाक्त पार्श्व प्रयासों से पर्यावरण को बुरी तरह से प्रदूषित करना भी शुरू कर दिया है।

फसलों, सब्जियों और फलों पर प्रयोग होने वाले इन रासायनिक कीटनाशक विशों से ग्रामीण क्षेत्र का जल सबसे अधिक प्रभावित हो रहा है। श्रीगंगानगर जिले की विभिन्न तहसीलों में 400 परिवारों पर किये गये व्यक्तिगत सर्वेक्षण में 91.78 प्रतिशत किसानों ने माना कि ऐसे रासायनिक उर्वरकों के उपयोग से कृषि उत्पादन में वृद्धि तो होती है परंतु दूसरी और इसका दुष्प्रभाव मानव स्वास्थ्य पर पड़ता है। इन कीटनाशकों से मानव कोशिकाएं प्रभावित होती है। उदाहरण के तौर पर मोनोक्रोटोफासॅ, डाइपोक्रोन और एफोलक्स जैसे कीटनाशक रसायनों का अत्यधिक उपयोग करने से मानव के सामान्य स्वास्थ्य पर घातक दुष्प्रभाव होता है। यहां तक कि फसल काटने के बाद भी भंडारण के लिए एल्यूमिनियम फास्फाइड जैसे रासायनिक कीटनाशकों का भरपूर उपयोग किया जाता है। हालांकि अनाज को सुरक्षित रखने के लिये विषैले रसायनों का धुंआ उपयोग में लाना अधिक प्रभावी रहता है परंतु यह तरीका उपयोगी होने के बावजूद सामान्तया प्रयोग में नही लाया जाता। श्रीगंगानगर जिले की विभिन्न तहसीलों में 400 परिवारों पर किये गये व्यक्तिगत सर्वेक्षण में 22.33 प्रतिशत किसानों ने अनाज की बोरियों में ही कीटनाशक गोलियां रखने की बात स्वीकार की है जबकि 26.54 प्रतिशत किसान बोरियों में व ड्रम मेंनीम की पत्तियां तथा 25.24 प्रतिशत किसान माचिस की डिब्बियों का प्रयोग करते हैं। सर्वेक्षण में 58.90 प्रतिशत किसानों ने माना कि यदि बिना धोए इस प्रकार के अनाज को पिसवा लिया जाए या सीधे तौर पर उपयोग किया जाए तो इसके सेवनकर्ता को सिर दर्द, उल्टी, चक्कर, पेट की गड़बड़ी आदि की शिकायत होने की पूरी–पूरी संभावनाएं रहती है।

श्रीगंगानगर जिले की विभिन्न तहसीलों में 400 परिवारों पर किये गये व्यक्तिगत सर्वेक्षण से स्पष्ट हुआ कि आज किसान से लेकर व्यापारी वर्ग तक सभी लोग रासायनिक उवर्रकों, कीटनाशकों, जहरीलें रंगों रसायनों और विभिन्न प्रक्रियाओं द्वारा प्रयोग किए जा रहे विभिन्न खाद्य पदार्थो में जहर घोलकर उपलब्ध करा रहे है। इन खाद्य पदार्थो में विशाक्तता का सर्वाधिक प्रभाव कृषकों द्वारा प्रयुक्त किए जा रहे कीटनाशकों के वृहद प्रयोग की वजह से है। इस तरह के विशाक्त खाद्य पदार्थो का सेवन करने से सिरदर्द, उच्च रक्तचाप, जी घबराना, सफेद दाग, पाचन तंत्र की खराबी, अम्ल, पथरी, प्रजनन क्षमता में कमी तथा कैंसर जैसे प्राण घातक रोगों के होने की आशंका हो जाती है। व्यक्तिगत सर्वेक्षण में प्राप्त आकंड़ों और तथ्यों से यह स्पष्ट है कि कृषि कार्य में प्रयक्ुत होनेवाले कीटनाशी विष में हमारा पर्यावरण बुरी तरह से प्रभावित हो रहा है।

अतः आवश्यकता इस बात की है कि हम कृषि क्षेत्र में कम कीटनाशियों और रासायनिक खादों का प्रयोग करे। हम कुछ ऐसी तकनीकों का उपयोग करे, जिससे भारतीय आबादी को भोजन के लिए खाद्य उत्पादन यथावत रहे और पर्यावरण प्रदूषण से मुक्त रहे। अतः निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि यदि हमें अपने खेतों से

अपनी फसलों का अधिक से अधिक उत्पादन प्राप्त कर लगातार कई वर्षों तक उसके उपजाऊपन को बनाए रखना है तो जैविक खाद के उपयोग की आदत डालनी होगी। यह जैविक खाद हमारे खेत की मिट्टी को कई प्रकार से उर्वरा शक्ति प्रदान करती है। इससे हमारे खेतों में पाये जाने वाले लाभदायक जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि होती है इसके अतिरिक्त इस प्रकार की खेती के अनेक लाभ है। इन सभी विशेषताओं के कारण आज जैविक कृषि तकनीक का महत्व बढ़ रहा है क्योंकि जैविक कृषि की तकनीक प्रचलित आधुनिक कृषि के अधिकांश देशों को समाप्त कर सकती है। जैविक कृषि न केवल प्रर्यावरण सुरक्षा की दृष्टि से उत्तम है, बल्कि प्रचलित खेती की तुलना में कम लागत वाली भी है तथा स्थायी कृषि विकास की दृष्टि से भी अत्यन्त सामयिक है।

BIBLIOGRAPHY :-

1. कपूर, सुदर्शन कुमार (1974) : भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
2. कुमार, प्रमिला एवं श्रीकमल शर्मा (1985) : कृषि भूगोल, मध्य प्रदेश ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
3. डॉ. अग्रवाल, एन. एल., (2007) : भारतीय कृषि का अर्थतन्त्र, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
4. तिवारी, आर. सी., एवं सिंह, बी. एन., (2000) : कृषि भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
5. दत्त, रूद्र एवं सुन्द्रम, के.पी.एम (2010) : भारतीय अर्थव्यवस्था, एस चन्द एण्ड कम्पनी लि., नई दिल्ली।
6. नागर, कैलाशनाथ (2002) : सांख्यिकी के मूल तत्व, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ।
7. नाथूरामका, लक्ष्मीनारायण (2015) : राजस्थान की अर्थव्यवस्था, आर. बी. डी. पब्लिशिंग हाऊस,जयपुर।
8. मोघे बसंत, जैन (1985) : ''राजस्थान मे ं कृषि उत्पादन'' राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
9. शर्मा, बी. एल. (1987) : कृषि भूगोल, साहित्य भवन, आगरा।
10. शर्मा, लक्ष्मीनारायण (1990) : शुष्क सम्भाग की कृषि पारिस्थितकी पर सिंचाई का प्रभाव' अप्रकाशित शोध प्रबन्ध, राजस्थान विश्वविद्यालय।
11. दैनिक समाचार पत्र–राजस्थान पत्रिका, दैनिक भास्कर, सीमा सन्देश।
12. योजना (मासिक पत्रिका), मानव संसाधन एवं विकास मंत्रालय, नई दिल्ली
13. राजस्थानी खेती (मासिक पत्रिका), श्रीगंगानगर
14. आर्थिक समीक्षा, आर्थिक एवं सांख्यिकी निदेशालय, राजस्थान, जयपुर। (वर्ष 2015.16)
15. वार्षिक प्रतिवेदन, जिला सांख्यिकी विभाग, श्रीगंगानगर। (वर्ष 2007 एवं 2016)
16. वार्षिक प्रतिवेदन, कार्यालय उपनिदेशक कृषि विस्तार, श्रीगंगानगर (2015.16)
17. हरिनारायण विश्वकर्मा, ''किसानों को ऋण प्राप्ति के संस्थागत स्रोत'' कुरूक्षेत्र, नवम्बर, 2014
18. वार्षिक प्रतिवेदन, जिला सांख्यिकी विभाग, श्रीगंगानगर, वर्ष 2016

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 137-139

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

हनुमानगढ़ की वानस्पति क्षेत्रवृद्धि में घग्घर नदी का योगदान

रेखा सुथार, शोधार्थी
डॉ. राजेन्द्र मेघवंशी, शोध निर्देशक
भूगोल विभाग, श्री खुशालदास विश्वविद्यालय, हनुमानगढ़।

राजस्थान का हनुमानगढ़ जिला देष के गर्म इलाके के रूप में जाना जाता है। यहाँ ग्रीष्म ऋतु में धूलभरी आँधियाँ व मई–जून के महीने में उष्ण हवा चलती है जिसे 'लू' कहते हैं। सर्दियों में चलने वाली उत्तरी ठंडी हवाएं 'डांफर' कहलाती हैं। गर्मियों में तापमान 45 डिग्री सेल्सियस के पास पहुँच जाता है वहीं सर्द ऋतु में शून्य डिग्री तक, जिससे रातें बहुत ज्यादा ठंडी हो जाती हैं। ज्यादातर इलाका कुछ वर्षों पहले तक शुष्क रेगिस्तान वाला था परन्तु सिंचाई की व्यवस्था का लगातार विस्तार होते रहने के कारण अब लगभग आधे से अधिक क्षेत्रफल में हरियाला के दर्शन होने लगे हैं। अब हनुमानगढ़ की गिनती राजस्थान के हरे–भरे जिलों में आती है।

हनुमानगढ़ पहले बीकानेर संभाग के अन्तर्गत श्रीगंगानगर जिले की एक तहसील के रूप में था। 12 जुलाई, 1994 को जिला घोषित किया गया। जिले में हनुमानगढ़, संगरिया, पीलीबंगा, रावतसर, टिब्बी, नोहर और भादरा तहसीलें हैं। कमोबेश सभी तहसीलों में सिंचाई की जाने लगी है। सम्पूर्ण जिले का भौगोलिक क्षेत्रफल 12645 वर्ग किलोमीटर है।

घग्घर नदी इलाके की एकमात्र नदी है जो हनुमानगढ़ जिले के बीच में से होकर प्रवाहित होती है। इंदिरा गांधी फीडर सर्वप्रमुख नहर है।

घग्घर–हकरा नदी भारत से प्रवाहित होकर पाकिस्तान पहुंचने वाली तथा केवल वर्षा ऋतु में प्रकट होने वाली एक मौसमी नदी है। शिवालिक की पहाड़ियों से इसका उद्गम होता है। हरियाणा के ओटू बांध से पहले इसे 'घग्घर' नदी के नाम से तथा उसके बाद पाकिस्तान में 'हकरा' नदी के नाम से जाना जाता है।

कुछ विद्वानों के अनुसार यह प्राचीनकाल में बहने वाली 'सरस्वती' नदी का ही बचा हुआ रूप है। घग्घर नदी का उद्गम स्थल चण्डीगढ़ के समीप हिमाचल व हरियाणा की सीमाओं पर स्थित शिवालिक पर्वत है, जहां से निकल कर पटियाला, संगरूर, सिरसा, हनुमानगढ़ व श्रीगंगानगर जिले की अनूपगढ़ तहसील से बहती हुई पाकिस्तान में प्रवेश कर जाती है। इसके द्वारा लाये गये बरसाती जल ओर कठोर चिकनी मिट्टी में धान की भरपूर खेती व पैदावार होती है।

उष्ण मरूस्थल में जहाँ–जहाँ से अस्थाई रूप से घग्घर नदी बहती है, वहां सामान्य मरूस्थलीय विशेषताएँ संपोशित हो जाती है। नदी–तटवर्ती क्षेत्र स्थलीय उच्चभूमि एवं जलीय कटिबंध को जोड़ने वाले संक्रमण क्षेत्र बन

गये हैं, जिन्हें हरित पेटी द्वारा दृष्टिक रूप से भी पहचाना जा सकता है। नदी–तटवर्ती पारिस्थितिक तंत्रों को तीन प्रमुख आधारों पर परिभाषित किया जा सकता है। इनमें जलगत, मृदा एवं वानस्पतिक तत्त्व शामिल हैं, जो कि अतिरिक्त नमी की उपलब्धता को परिलक्षित करते हैं। नदी के चैनल में अल्पकालिक या स्थाई जल प्रवाह, तथा बाढ़ के समय बाढ़ के मैदान में पहुँचा जल, इस तटवर्ती कटिबंध में भूजल स्तर को बढ़ा देता है।

यहाँ का भूजल सामान्य मरूस्थली जल के विपरीत मीठा हो गया है। चैनल में प्रवाहित होकर तथा बाढ़ के जल के साथ उपजाऊ सिल्ट के निक्षेप भी इस कटिबंध को प्राप्त होते रहते हैं।" फलस्वरूप नदी–तटवर्ती कटिबंध शेष मरूस्थली क्षेत्र से जैविक रूप से अधिक उत्पादक क्षेत्र होते हैं, जहां विविध पादप–समुदाय पाए जाते हैं। इन कारणों से रैखिक आकृति के ये विशिष्ट पारिस्थितिक तंत्र जैव–विविधता के समृद्ध क्षेत्र बन जाते हैं।

जल, मृदा आदि की उपयुक्त परिस्थितियों के कारण इस मरूस्थली क्षेत्र का नदी पाट व बाढ़ के मैदान मौसम–विशेष में अथवा वर्ष भर, कृषि की बेहतर सम्भावनाएं प्रस्तुत करते हैं। इसलिए यहाँ शेष मरूस्थली प्रदेश से अधिक फसल सघनता व उत्पादकता पाई जाती है। पशुपालन व उसकी उत्पादकता में भी ऐसे तटवर्ती कटिबंध विशिष्टता लिए हुए रहते हैं। प्रकृति–प्रदत्त अनुदानों के फलस्वरूप मरूस्थलों के नदी–तटवर्ती कटिबंधों में रहने वाले समुदायों की सामाजिक–आर्थिक दशा उच्चतर स्तर पर होती है।

नदी–तटवर्ती क्षेत्र भूमि तथा जल की सीमा पर स्थित होते हैं। इसलिए इस क्षेत्र की मृदाएं प्रायः जल द्वारा निक्षेपण से बनी होती हैं, यद्यपि जल द्वारा उनके अपरदन की भी उच्च सम्भावनाएं बनी रहती है। इन क्षेत्रों की मृदाएं विभिन्न गठन वाले स्तरीकृत अवसादों से बनी होती हैं। ये मृदाएं थोड़े–बहुत अंतराल के बाद बाढ़, अथवा सतह तक पहुंचने वाले परिवर्तनशील जल–स्तर से प्रभावित होती रहती है। बाढ़ के आने पर नदी तटीय भागों में मृदाओं का पुनःनवीनीकरण होता रहता है जिससे ये उपजाऊ बनी रहती है। शुष्क मरूस्थली तथा अर्द्ध–शुष्क प्रदेशों की नदियों के पाट प्रायः रेतीले होते हैं तथा उनमें जल प्रायः अल्प काल के लिए ही प्रवाहित होता है।

घग्घर क्षेत्र में नदी–तटवर्ती कटिबंधों तथा स्थलीय उच्चभूमि तंत्रों के मध्य संक्रमण को आसानी से पहचाना जा सकता है। यह परिवर्तन आकस्मिक होता है क्योंकि चारों ओर का स्थलीय परिवेश नदी–तटीय कटिबंध की अपेक्षा कुछ ज्यादा ही शुष्कतर होता है। शुष्क प्रदेशों की मृदाओं में, विरल वनस्पति के कारण मृदा के कार्बनिक तत्त्वों का स्तर न्यून रहता है। गर्म जलवायु में पादप अवशेषों का वियोजन तीव्र होने से मृदा की विशेषताओं पर कार्बनिक पदार्थ का प्रभाव कम रहता है लेकिन परन्तु इस क्षेत्र में नदी–नहरों के किनारे मृदा में कार्बनिक तत्त्व अधिक भी हो सकता है।

स्थाई अथवा अल्पकालिक नदियों के निकट होने से चतुर्दिक क्षेत्रों की अपेक्षा तटवर्ती क्षेत्रों में भूजल अपेक्षाकृत उथला या कम गहराई पर पाया जाता है। तटवर्ती कटिबंधों में अधिक नमी, तथा अपेक्षाकृत सघनतर वनस्पति, मिलकर मृदा की ऊपरी परत में वियोजित होने वाले कार्बनिक पदार्थ की चादर निर्मित कर देते हैं। इससे मृदा को उर्वरता में भी वृद्धि होती है। आर्द्र जलवायु के क्षेत्रों में उच्च भूजल स्तर के कारण जलोढ़ जलभरे कई नदियों में बेस फ्लो को बनाए रखने में मदद करते हैं। अपेक्षाकृत शुष्कतर जलवायु के क्षेत्रों में नदियों का प्रवाहित जल भूमिगत होकर नदी के निचले भाग के भूजल स्तर को बढ़ाने में सहायक बन सकता है।

नदी–तटवर्ती कटिबंधों को स्वस्थ बनाए रखने के लिए प्राकृतिक बाढ़ चक्रकों की अहम् भूमिका रहती है। बाढ़ के जल से अवसाद, पोषक तत्त्वों तथा जल की अत्यावश्यक आपूर्ति प्राप्त होती है। नदियों के ऊपरी भागों में बांध आदि का निर्माण निचले भागों में बाढ़ की सम्भावना को समाप्त प्रायः या कम कर देता है, जिससे जल तथा उपजाऊ अवसाद की आवक बंद हो सकती है। शुष्क प्रदेशों में यह प्रभाव और सघनतर रूप में दिखाई देता है।

संदर्भ :-

1. ब्रिटेनिका, डेल होइबर्ग, इन्दु रामचंदानी, पॉपुलर प्रकाशन।
2. द एंसियेट इन्डस वैली : न्यू पर्सपेक्टिवस्–जॉन मैकिनहोस।
3. Hansen et al., 2010, Naiman et al. 2010m tackner & standford, 2002
4. NRCS, 2018
5. आर्टिफिशएल ग्राउण्ड वाटर सिचार्ज, ए.भट्टाचार्य, सी. कुमार

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 5.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
March 2022 Page No. : 140-145

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

बदलती जलवायु और वर्तमान कोविड–19 महामारी में परंपरागत पर्यावरण संरक्षण हेतु व्यवस्थाओं की प्रासंगिकता

अनिल कुमार छंगाणी, रितिका भाटी, करणी सिंह बिठू

महाराजा गंगा सिंह विश्वविद्यालय, बीकानेर।

हमारे चारों और जो भी प्राकृतिक वस्तु, परिस्थितियां और जैव विविधता विद्यमान हैं। ये सब मिलकर मानव के जीवनयापन और क्रियाकलापों को प्रभावित करती है। वही दूसरी ओर बदलती जलवायु एवं विकास की गतिविधियों का प्रभाव भी हमारे आस–पास के पर्यावरण पर पड़ता है। और हमारे लिए एक दायरा सुनिश्चित करती है, इसी दायरे या परिवेश को सरल भाषा में हम पर्यावरण कहते हैं। इन व्यवस्थाओं को बचाने के लिए वर्तमान में संरक्षित क्षेत्र, अभयारण्य, राष्ट्रीय उद्यान एवं बायोस्फीयर रिजर्व जैसी व्यवस्थाएं केंद्र एवं राज्य सरकारों द्वारा की जा रही है। वहीं दूसरी ओर देश के विभिन्न भागों मे पर्यावरण संरक्षण की परंपरागत व्यवस्थाएं भी मौजूद हैं, जिन्हें देव वन, ओरण, गोचर जोड़–पायतन, नाडी, तालाब, आगोर, आदि के नाम से जाना जाता है।

भारत में इन प्राकृतिक संसाधनों को सामुदायिक सम्पति के साधन अथवा कॉमन प्रॉपर्टी रिसोर्सेज के नाम से भी जाना जाता है। जो हमारे धर्म, परम्पराओं एवं संस्कृति का अभिन्न अंग है, साथ ही ये सभी परंपराएं हमारे दैनिक जीवन और जीवनयापन में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करती है[1]। इसके अलावा ये कॉमन प्रॉपर्टी रिसोर्सेज जैवविविधता के संरक्षण में भी बहुत महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। और इन प्राकृतिक संसाधनों से लोगों के सीधे जुडाव, संरक्षण व संवर्धन हेतु इनके नाम किसी न किसी स्थानीय देवी–देवताओं के नाम पर रखे गये है। जैसे भैरूजी, करणीमाता, रामदेवजी, गोगाजी, पाबूजी, मामाजी, तन्हापीर, जोगमाया, हनुमानजी, बांकलमाता, देगराय माता आदि।

इन परंपरागत पर्यावरण संरक्षण के स्रोतों को देश के विभिन्न भागों में अलग–अलग नाम से पहचाना जाता है, जैसे शरय्या देव मध्यप्रदेश मे, देवरिया महाराष्ट्र मे, सारण बिहार मे, रोलीदेवर कुण्ड कनार्टक मे, लाई उमंग मणिपुर मे, तीरथ वन हरियाणा मे, मावकुण्ड मिजोरम मे व गुम्पा सिक्किम मे। इसी तरह देश के विभिन्न हिस्सों में सभी समाज में धर्मों के लोग इन परंपरागत स्रोतों का संरक्षण करते हैं और इन ओरण गोचर से पशुपालन को भी मदद मिलती है। गरीब परिवारों के लिए यह रीड की हड्डी का काम करते हैं[2]।

आज सभी परंपरागत स्रोत विकास के दबाव को सहन कर रहे हैं तथा इनके रखरखाव पर कम ही ध्यान दिया जा रहा है। बावजूद इसके वर्तमान कोविड महामारी में भी इन परम्परागत स्त्रोतों ने प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से मानव समाज को मदद की। जिसके चलते देश के कई हिस्सों में कोविड का असर कम हुआ मृत्यु दर में कमी आई रिकवरी दर में बढ़ोतरी हुई। कोविड महामारी के दौरान देश के विभिन्न हिस्सों में 2 से 3 महीने का कहीं–कहीं

पर 4 महीने का सख्त लॉकडाउन लगाया गया था। लेकिन इस लॉकडाउन के दौरान भी किसी भी परिवार को वह चाहे शहर में हो या गांव में दूध, दही, घी, छाछ की कमी नहीं आई थी। इसका श्रेय इन्हीं परंपरागत स्रोतों पर हो जाता है जहां पर हमारा पशुधन चराई करता था, पानी पीता था विशेषकर गाय, भैंस, बकरी भेड़ इत्यादि। इसके अलावा इन परंपरागत व्यवस्थाओं ने विभिन्न प्रकार के शाकाहारी, मांसाहारी वन्यजीवों को भी संरक्षण व आसरा दिया।

कई प्रकार की शोध कार्यों में यह बात निकलकर आई की इन परंपरागत स्रोतों का प्रबंधन व संवर्धन स्थानीय समुदाय द्वारा बेहतर तरीके से किया जा रहा है। क्योंकि इससे उनका सीधा–सीधा जीवनयापन प्रभावित होता है [3]। इन परंपराओं का उल्लेख हजारों वर्षों के पुराने ओरल ट्रेडीशन में भी उपलब्ध है। इन परंपराओं के बारे में जो सबसे पुराना लिखित दस्तावेज आज उपलब्ध है वह 1335 से 1402 ईसा पूर्व देगराय माता मंदिर रसाला, जैसलमेर में उपलब्ध है। थार मरूस्थल मे पाये जाने वाले कुछ प्रमुख ओरण एवं क्षेत्रफल की जानकारियां :–

क्र.सं.	ओरण का नाम (जिला)	क्षेत्रफल (बिघा मे)
1.	धोक विरात्रा माता (बाडमेर)	18000
2.	अर्णोद (बाडमेर)	10463
3.	इन्द्रोइ माता (बाडमेर)	6684
4.	गिराब (बाडमेर)	6650
5.	कुसिप (बाडमेर)	4377
6.	बोथिया पुरोहितान (बाडमेर)	4165
7.	चूली (बाडमेर)	2924
8.	नइ–खडली (बाडमेर)	1711
9.	लखोटली (बाडमेर)	1537
10.	रमाणिया	1394
11.	भादरिया जी (जैसलमेर)	165000
12.	रामदेवरा (जैसलमेर)	35171
13.	ईटा (जैसलमेर)	33124
14.	वरोदा हनुमानजी (सिरोही)	2380
15.	जोगमाया का ओरण (नागौर)	3000
16.	डोडाजी (चुरू)	3500
17.	मलाजी (बाडमेर)	2000
18.	जनारा (जैसलमेर)	13871
19.	गोमट (जैसलमेर)	11385
20.	खेलना (जैसलमेर)	8681
21.	पेरीवार (जैसलमेर)	7836
22.	जेमला (जैसलमेर)	7553
23.	खेतालाई (जैसलमेर)	6551
24.	भैंसला (जैसलमेर)	5326
25.	बीरमदेवरा (जैसलमेर)	5216
26.	नोसर (जोधपुर)	9394
27.	भींयासर (जोधपुर)	6819
28.	जाखन (जोधपुर)	5980
29.	बरसिंहों का बाडा (जोधपुर)	55315
30.	टेकरा (जोधपुर)	5468
31.	जालोरा (जोधपुर)	4625
32.	पूनासर (जोधपुर)	4048
33.	दीहू (जोधपुर)	3562
34.	पालीना (जोधपुर)	3018
35.	टापू (जोधपुर)	2545
36.	बावरी–बरसिंघा (जोधपुर)	2541
37.	कोलू–पाबूजी (जोधपुर)	15800
38.	झूंझार दादाजी (चुरू)	3500
39.	करणी माता देषनोक (बीकानेर)	2300
40.	करणी माता मोखा चारणाण (बीकानेर)	1800
41.	जोगमाया जी (नागौर)	3000
42.	वर्धा हनुमानजी (सिरोही)	2375

यह परंपरागत सामुदायिक व्यवस्थाएं अपने आप में बहुत ही सूक्ष्म और बेहतर पेड़ पौधों व जीवो का सामंजस्य प्रस्तुत करते हैं और स्थानीय जैव विविधता का संरक्षण करते हैं। छंगाणी मोहन 2010। राजस्थान मे विषेषकर थार मरूस्थल मे विभिन्न प्रकार की कॉमन प्रॉपर्टी रिसोर्सेस या परंपरागत पर्यावरण संरक्षण के स्रोत निम्न प्रकार के पाये जाते हैं [4, 5]।

ओरण :– ओरण स्थानिय समुदायों द्वारा संरक्षित क्षेत्र होते है, जिसमे स्थानीय देवी देवताओं के नाम से एक भूमि का हिस्सा छोड़ दिया जाता है। जिसमें पेड़ों की कटाई व शिकार करना प्रतिबंधित होता है, उसे वन क्षेत्र के रूप में विकसित एवं संरक्षित किया जाता है। और इन वनों के उत्पादों को स्थानीय सामुदायिक कार्यों में ही उपयोग लिया जाता है। इसके अलावा इन क्षेत्रों में स्थानीय मवेशी व वन्यजीव स्वच्छंद विचरण कर सकते हैं। देवी–देवताओं के नाम से जुड़े होने के कारण इनको सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक मान्यता भी प्राप्त होती है। जिसके चलते बिना किसी सुरक्षा व्यवस्था के सभी स्थानीय लोग इनका सम्मान करते हैं, इनमें आस्था रखते हैं।

गोचर भूमि :– यह भूमि गांव में पंचायत के रिवेन्यू रिकॉर्ड्स में गायों के चराई हेतु आवंटित भूमि के रूप में परिभाषित की जाती है। स्थानीय लोग इनमें से चारा, फल, बीज, औषधीय, जलाऊ लकड़ी, घास इत्यादि संग्रहित कर सकते है। कई बार गोचर भूमि स्थानीय परिवारों द्वारा अपने पूर्वजों की याद में गायों के चराई हेतु दान भी की जाती रही है, इस तरह के दस्तावेज भी सामने आए हैं।

मुकाम ओरण

गोचर भूमि

नाडी

जोहड़–पायतन

नाडी :– यह एक प्रकार के वर्षावन संग्रहित करने के स्रोत होते हैं, जो स्थानीय लोगों द्वारा बनाए जाते हैं। नाडियां ज्यादा गहरी नहीं होती है तथा वर्षा जल को इकट्ठा करने के लिए एक छोटा मोटा केचमेंट या जल भराव क्षेत्र भी इनसे जुडा होता है तथा इनके आस–पास होने वाले पेड़ पौधों को स्थानीय पशुधन व वन्यजीव विचरण कर सकते है। इनके आसपास किसी तरह का निर्माण करना, इन स्थानों पर शौच करना, मल मूत्र त्यागना पूर्णतः निशेध होता है।

तालाब और जोहड़ :– थार मरूस्थल और देश के अन्य भागों मे ये वर्षा जल इकट्ठा करने के प्रमुख स्रोत होते हैं, आकार के हिसाब से छोटे बड़े हो सकते हैं। ये तालाब और जोहड एक या एक से ज्यादा गांवों को पानी उपलब्ध कराते हैं। इन तालाबों में एक तरफ पक्की दीवार बनाकर जल संग्रहण को बढ़ाया जाता है। इन जल स्त्रोतों के दो या तीन तरफ या चार तरफ दीवार बनाकर इनको जोहड़ के रूप में विकसित किया जाता है।

आगोर, पायतन :– प्रत्येक नाडी, तालाब अथवा जोहड हेतु इससे जुडा क्षेत्र वर्षा जल संग्रहण का स्त्रोत होता है, जिसे आगोर अथवा पायतन के नाम से जाना जाता है, आगोर मे गिरा वर्षा जल ढलान के माध्यम से जल स्रोत नाडी, तालाब अथवा जोहड तक पहुंचता है। आगोर मे पैदा होने वाली वनस्पति का उपयोग स्थानीय लोगों द्वारा पशु चराई तथा स्वयं के उपयोग हेतु भी किया जाता रहा है। समय–समय पर स्थानीय लोगों द्वारा इन परंपरागत आगोर, स्त्रोतों को श्रमदान के जरिए साफ–सफाई व इनके संरक्षण का कार्य भी किया जाता है।

आगोर

रेत के धोरे :– थार मरूस्थल मे बालू रेत के धोरे अथवा "सेंड ड्यून" अपने आप में प्राकृतिक रूप से भूमि मे नमी के संग्रहण के स्थल होते हैं। जिनमें कई प्रकार के स्थानीय पेड़ पौधे, झाड़ियां व स्थानीय वन्यजीव जैसे स्तनधारी, पक्षी, सरीसृप एवं वन्यजीव आवास करते हैं।

रेत के धोरे

नदी के पाटतल का क्षेत्र :– थार रेगिस्तान के विभिन्न हिस्सों में कई मौसमी नदियों का प्रवाह होता है। जिनमे बारिश के दौरान पानी का प्रवाह होता है, तथा मानसून के पश्चात बहाव की गति धीमी हो कर बन्द हो जाती है। इस दौरान इन क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार की वनस्पतियां उग आती है, जिन पर कई तरह के वन्यजीवो व स्थानीय मवेषियों का आश्रय होता है। इन क्षेत्रों मे निर्माण कार्य व खेती पर पाबन्दियाँ होती है।

नदी के पाटतल का क्षेत्र

सामुदायिक वन क्षेत्र : सामुदायिक वन क्षेत्र स्थानीय लोगों व वन विभाग के सहयोग से तैयार किए गए वनक्षेत्र होते हैं, जिन्हें सामाजिक वानिकी या किसी प्रजाति विशेष की वनस्पति को संरक्षित करने के लिए अथवा किसी संरक्षित प्रजाति की वन्यजीवों के लिए आरक्षित किया जाता है। इन क्षेत्रों में वन्यजीवों का शिकार, पेड़ों की कटाई करने पर पाबंदी होती है। लेकिन संतुलित मात्रा में चराई इत्यादि की अनुमति होती है, तथा सूखी लकड़ियों के संग्रहण की अनुमति भी होती है।

फेलो लैंड/पड़त भूमि :- यह क्षेत्र निजी कृषि भूमि होती है, किसान खेती के दौरान भूमि का आधा हिस्सा जुताई में और आधा हिसाब पशुओं की चराई हेतु छोड़ देता है। चराई हेतु छोडे हुए इस हिस्से को पड़त भूमि अथवा फेलो लैंड कहा जाता हैं। भूमि के किस्म के आधार पर इस पडत भूमि मे दो से 4 वर्षों तक खेती नहीं की जाती है जिससे स्थानीय पेड़ पौधे व जीव जंतु इस स्थान को अपना आवाज बना लेते हैं। दो से चार वर्षों बाद इन हिस्सों में खेती कर दी जाती है तथा आपस में लगातार नियमित अन्तराल से कृषि क्षेत्र को अदला–बदली कर दिया जाता है और यह परंपरा देश के कई हिस्सों में विशेषकर मरुस्थल में असिंचित क्षेत्रों में बहुतायत काम में ली जाती है। अगर मरुस्थल में देखा जाए तो जो संरक्षित क्षेत्र है वह 1.8 प्रतिशत है वहीं अगर परंपरागत कमल प्रॉपर्टी रिसोर्ट देखा जाए तो पूरे भूभाग का 5.6 प्रतिशत है। बडे भू–भाग मे फैले होने के परिणाम स्वरुप यह देखा गया है कि यह परंपरागत संरक्षित क्षेत्र मरूस्थल जैव विविधता संरक्षण में बहुत ही महत्वपूर्ण भूमीका निभाते हैं तथा प्राकृतिक संसाधनों के बहुत बड़े स्त्रोत होते हैं [2, 5, 6]।

फेलो लैंड/पड़त भूमि :-

बदलते पर्यावरण एवं जलवायु के वर्तमान परिवेश में भी ये परम्परागत सामुदायिक संसाधन आप भी प्रासंगिक है। आप भी अकाल जैसी स्थितियों में थार मरूस्थल मे लोगों, मवेशियों व वन्यजीवों के लिये परम्परागत ओरण, गोचर, नाडी, तालाब, आदि जीवन का आधार है। वर्तमान कोविड महामारी में भी इन परम्परागत व्यवस्थाओं के चलते लोगों को पशुधन को भोजन, चारे के रूप मे सभी आवश्यक पोषक तत्व, मिनरल, विटामिन्स प्राप्त होते रहे। जिसको कोरोना महामारी के दो से चार महीने के "लॉक डाउन" मे भी यहाँ के लोगों को दूध, दही, घी व छाछ की कमी नहीं आयी। जिसका श्रेय क्षेत्र के पशुधन को जाता है,

जिन्हे इस महामारी मे चारा व पानी इन्ही परम्परागत व्यवस्थाओं से उपलब्ध होता रहा है। नतिजा थार मरूस्थल के जिलों मे राजस्थान व देश के अन्य भागों की तुलना मे लोगों इम्यूनिटी अधिक पायी गयी [7, 8]। जिसके चलते देश के अन्य भागों से इस भूभाग मे कोरोना से मृत्युदर भी कम पायी गयी, साथ ही कोरोना से "रिकवरी रेट" भी देश व विष्व के अन्य भागों से अच्छी रही।

संदर्भ :-

1. Berkes, F., Fecny, D., B.J. McCay, B.J. and Acheson, J.M. (1989), The Benefits of the commons, Nature 340 (6229): 91 - 93.
2. Chandrakant, K. W, Tetali, P., Venkat, R. G., Noshir, H. A and Tannaz, J. B (2006), Anthropology & Medicine, Vol. 13 pp 55-76.
3. Chhangani, A.K., Mohan, D. (2010). Role of common property resources in the conservation of floral and faunal diversity in the Thar Desert. In the proceeding of National seminar "Impact of climate change on biodiversity and challenges in Thar Desert", ed. By Ramakrishna et al. DRC,ZSI, Jodhpur, pp: 229-244.
4. Chhangani, A.K. 2014, The common property resources of the Thar Desert, Cheetal, 51 (182) : 11-19.
5. Chhangani, A.K., Gurjar, R.L., Bithoo K.S. (2019), Relevance of the Traditional Environmental Conservation Practices in Modern India. Published in: Shekhawat, N.S. et al (2018) Proc. International Seminar on Abhinav Bharat-concept & form 2018 Published by Rajasthan Sanskrit Academy, Jaipur, and Vidavat Parishad – Vidhyabharati, Jodhpur, Printed by scientific Publishers, Jodhpur, India.
6. Gurjar, R.L. and Chhangani, A.K. (2019), Density and abundance of prey species in Ranthambhor Tiger Reserve: Indian Forester: 145(10); 921-926.
7. chhangani@paper.navjyoti.net.2020
8. Singh Karni (2021) Role of "ROLE OF COMMON PROPERTY RESOURCES IN BIODIVERSITY CONSERVATION IN THE THAR DESERT" unpublished thesis submitted for the doctoral degree to Department of Environmental Science, Maharaja Ganga Singh University, Bikaner.

chhanganiak@yahoo.com

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२

ISSN : 2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Publisher : Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

तालिका– 2

शैक्षणिक / शोध अंक की गणना हेतु विश्वविद्यालय और महाविद्यालय के शिक्षकों के लिए कार्यप्रणाली

(आकलन शिक्षकों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों पर आधारित होना चाहिए, जैसेः प्रकाशनों की प्रति, परियोजना स्वीकृति पत्र, विश्वविद्यालय द्वारा जारी उपयोग तथा पूर्णता प्रमाण पत्र, पेटेंट दर्ज कराने संबंधी अभिस्वीकृति और स्वीकृति पत्र, विद्यार्थियों को पीएचडी उपाधि प्रदान किए जाने संबंधी पत्र इत्यादि।)

क्रम सं.	शैक्षणिक / शोध क्रियाकलाप	विज्ञान / अभियांत्रिकी / कृषि / चिकित्सा / पशु–चिकित्सा विज्ञान संकाय	भाषा / मानविकी / कला / सामाजिक विज्ञान / पुस्तकालय / शिक्षा / शारीरिक शिक्षा / वाणिज्य / प्रबंधन तथा अन्य संबंधित विधाएं
1	समकक्ष व्यक्ति समीक्षित अथवा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा सूचीबद्ध पत्रों में शोध पत्र	08 प्रति पत्र	10 प्रति पत्र
2	प्रकाशन (शोध पत्रों के अतिरिक्त)		
	(क) लिखी गई पुस्तकें, जिन्हें निम्नवत के द्वारा प्रकाशित किया गया :		
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक	12	12
	राष्ट्रीय प्रकाशक	10	10
	संपादित पुस्तक में अध्याय	05	05
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	10	10
	राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	08	08
	(ख) योग्य संकाय द्वारा भारतीय और विदेशी भाषाओं में अनुवाद कार्य		
	अध्याय अथवा शोध पत्र	03	03
	पुस्तक	08	08
3	आईसीटी के माध्यम से शिक्षण ज्ञान– अर्जन, शिक्षण शास्त्र और विषयवस्तु का सृजन तथा नए और नवोन्मेषी पाठ्यक्रमों और पाठ्यचर्या का विकास		
	(क) नवोन्मेषी अध्यापन का विकास	05	05
	(ख) नई पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रमों को तैयार करना	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम

PRINTED MATTER/PRINTING BOOK CLAUSE 121 (A) P & T GUIDE

डॉ. हनुमान प्रसाद कॉलेज शिक्षा राजस्थान के निजी क्षेत्र में बारह वर्षों से कार्यरत हैं। वर्तमान में माता कृष्णावन्ती महाविद्यालय, पदमपुर, श्रीगंगानगर में प्राचार्य के पद पर सेवाएं दे रहे है। आपने शोध विषय ''भौगोलिक तत्त्वों का वैदिक विवेचन–एक समसामयिक संदर्श'' पर डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। इससे पूर्व आपने एम.फिल में ''पर्यावरण प्रदूषण वैदिक समाधान'' तथा एम.ए. फाइनल (भूगोल) में'' वेदों में भूगोल–ऋग्वेद विशेष अध्यन ''विषय पर लघु शोध प्रबंध कार्य किया, साथ ही 25 दिसम्बर 2021 को ''वैश्विक पर्यावरण प्रदूषण एवं जलवायु परिवर्तन – वैदिक समाधान'' विषय पर अन्तरराष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया। भूगोल, वेद, पर्यावरण, जलवायु, साहित्य एवं शिक्षा के विषयों पर आपकी सात पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं, साथ ही पन्द्रह शोध पत्र राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीय पुस्तकों में प्रकाशित हुए तथा इक्कीस राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीय सेमिनारों में शोधपत्र वाचन किये। आकाशवाणी रेडियो केन्द्र, सूरतगढ़ से वेद और उपनिषद तथा सुशासन व्यवस्था पर वार्ता प्रसारित हुई। आप भिन्न भिन्न सामाजिक, साहत्यिक, भूगोल व पर्यावरण संस्थाओं से जुड़े हैं। राजस्थान भूगोल परिषद्, भीलवाड़ा के आजीवन सदस्य हैं। आप भिन्न भिन्न संस्थाओं द्वारा बहुत बार सम्मानित किये गये हैं, जिनमें गीना देवी शोध सम्मान – 2021, अवगत अवार्ड– 2022 एवं शिक्षक शिरोमणि अवार्ड – 2022 मुख्य हैं। आप रक्तदान, यज्ञ करने व करवाने, पर्यावरण संरक्षण, योग व्यायाम, गौ–सेवा, समाज एवं राष्ट्रहित जैसे कार्यों में अग्रणी रहते हैं।20 से अधिक राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीय 'वेबिनार' में सहभागिता की एवं शोधपत्र प्रस्तुत किए।

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक गुगनराम सोसायटी रजि. के लिए डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट ने मनभावन प्रिन्टर्ज, भिवानी से छपवाकर गीना प्रकाशन, 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड भिवानी-127021 (हरि.) से वितरित की।

ISSN 2395:7115